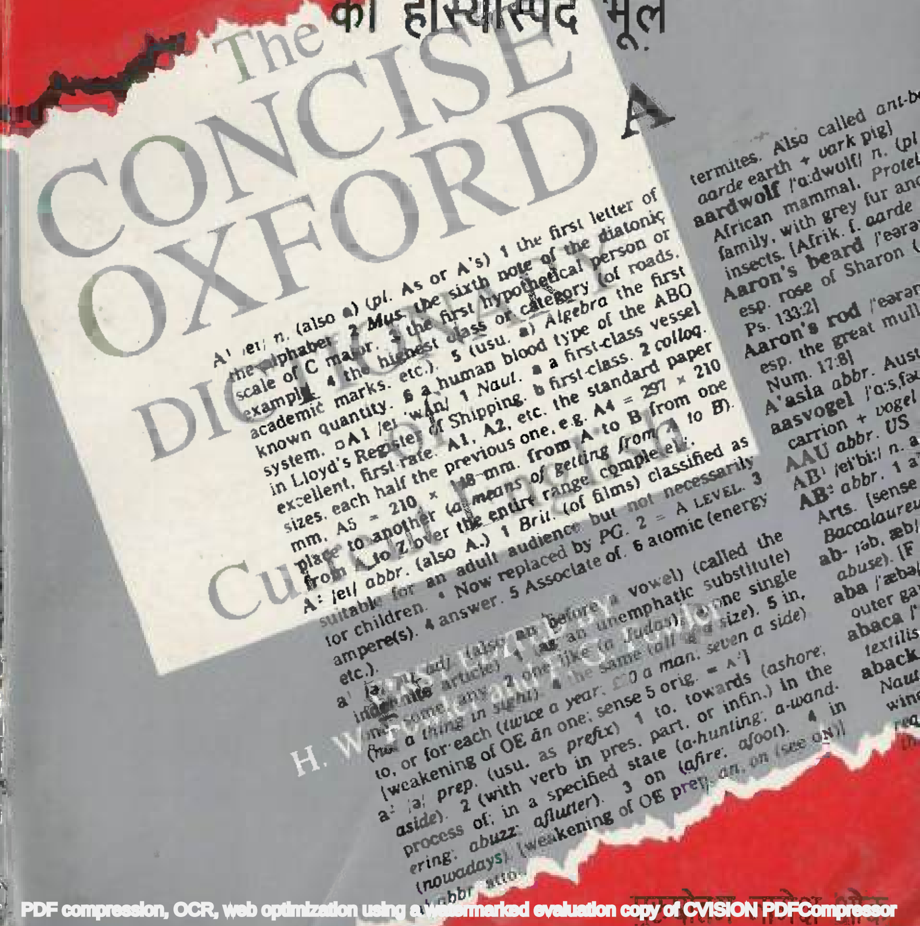
हास्यास्पद अंगरेज़ी भाषा

ऑक्सफोर्ड अंगरेज़ी शब्दकोशकारों की हास्यास्पद भूलें



ऑक्सफोर्ड अंगरेज़ी शब्दकोशकारों की हास्यास्पद भूलें

हास्यास्पद अंगरेज़ी भाषा

पुरुषोत्तम नागेश ओक

हिन्दी साहित्य सदन
नई दिल्ली-110001

प्रकाशक : हिन्दी साहित्य सदन
30-पी, कनॉट सरकस, नई दिल्ली-110001

संस्करण : 1997

मुद्रक : अजय प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

विषय-सूची

भूमिका

मेरे समक्ष एच० डब्ल्यू० फाउलर व एफ० जी० फाउलर नामक दो सम्पादकों द्वारा सम्पादित "The Concise Oxford Dictionary of Currant English" (वर्तमान प्रचलित अंगरेजी भाषा का संक्षिप्त ऑक्सफोर्ड शब्दकोश) शब्दकोश है जो विश्व-भर में लाखों अन्य व्यक्तियों के पास भी अवश्य होगा।

सामान्यतः उक्त शब्दकोश का, अथवा कहें कि किसी भी शब्दकोश का उपयोग अभीष्ट शब्दों का अर्थ या उनकी वर्तनी जानने, सुनिश्चित करने के लिए ही किया जाता है।

इस प्रकार का उपयोग कम-बेशी मिलाकर यांत्रिक मशीनवत् ही होता है जहाँ किसी प्रकार का चिन्तन-मनन प्रयोजन नहीं होता। कहने का भाव-अर्थ यह है कि जब कोई व्यक्ति किसी शब्द की वर्तनी अथवा उसके अर्थ के विषय में संदेह/शक/अनिश्चय का शिकार होता है तब वह शब्दकोश की सहायता लेता है और उसमें जो कुछ कहा गया/जाता है, उसे अंतिम आधिकारिक और अविरोधनीय के रूप में स्वीकार, शिरोधार्य, कर लेता है।

किन्तु शब्दकोश का एक अन्य प्रयोजन भी है जिसको मात्र कुछ लोग ही खोजते हैं। वह प्रयोजन किसी शब्द का उद्गम/मूल जानना, अर्थात् शब्द की व्युत्पत्तिमूलक स्थिति का ज्ञान प्राप्त करना—शब्द कैसे बना—इस जिज्ञासा को शान्त करना है। इसी से व्यक्ति की चिन्तन-मनन-प्रक्रिया प्रारंभ होती है। शब्दकोश में किसी विशिष्ट शब्द का उल्लेख किया गया मूल/उद्गम सही, यथार्थ है या मात्र कल्पना पर आधारित है या फिर पूरी तरह ग़लत, अशुद्ध या भ्रमपूर्ण असत्य पर निर्भर है?

यहीं, अंत में उल्लेख की गई जिज्ञासा ही इस पुस्तक का प्रतिपाद्य विषय है, क्योंकि मुझे यह जानकर अत्यन्त आघात व विस्मय हुए कि मानक ऑक्सफोर्ड शब्दकोशों में बताए गए उद्गम, शब्दों की व्युत्पत्तियाँ प्रायः मानक, स्तरीय पद से नीचे हैं या फिर बिल्कुल घटिया, ऊल-जलूल हैं।

शताब्दियों तक शैक्षणिक जगत पर जिन शब्दकोश-निर्माताओं ने राज्य/

शासन किया है उनकी सक्षमता को चुनौती देना, प्रश्नचिह्न लगाना बहुत लोगों को निपट गुस्ताखी और दुस्साहसी कृत्य ही मालूम पड़ सकता है।

किन्तु भयंकर भूलें, ग़लतियाँ जब भी सामने आ जाएँ, तभी उनको चुनौती दी जानी चाहिए, ललकारा जाना चाहिए, उनका भंडाफोड़ करना चाहिए चाहे उन भूलों का उद्गम कितनी ही शक्तिशाली और एकाधिकारवादी सत्ता के कारण हुआ हो तथा इसमें इनके उच्च-स्तर, मान्यता और सम्मान की भी चिन्ता, ऊहापोह नहीं करनी चाहिए।

मैं, पिछले लगभग 20-22 वर्षों में, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस के सर रोजर इल्लियट सहित ऑक्सफोर्ड इंगलिश शब्दकोशों (के संपादक-मंडल के अध्यक्ष) को तीन या चार पत्र उन्हें यह बताते हुए लिख चुका हूँ कि अंगरेज़ी शब्दों के मूलोद्‌गम का पता लगाने के लिए उनके व्युत्पत्ति-मूलक स्पष्टीकरणों के लिए, उनकी उत्पत्ति जब-तब अधिकतर ग्रीक (यूनानी) लैटिन, या प्राचीन फ्रांसीसी (फ्रैंच) भाषा द्वारा होने की प्रचलित प्रथा का अनुसरण करने की अपेक्षा संस्कृत भाषा में खोजने की आवश्यकता है।

मुझे ऑक्सफोर्ड कोशकारों से अत्यन्त विनम्र व शिष्ट भाषा में अतिशीघ्र प्रत्येक मेरे पत्र का उत्तर तो मिला किन्तु उन लोगों ने मेरी समस्या का कोई समाधान प्रस्तुत नहीं किया, मुझे कोई संतोष नहीं हुआ। उनके पत्रों से यही आभास हुआ कि वे अपनी वर्तमान व्युत्पत्ति-विषयक पद्धति का ही पक्ष ले रहे थे और उसकी कोई समीक्षा या उसमें सुधार करने की कोई आवश्यकता भी नहीं मानते थे।

एक उदाहरण के रूप में सर रोजर इल्लियट की ओर से मुझे प्राप्त उत्तर को मैं उद्धृत कर रहा हूँ :

Oxford University Press
Walton Street,
Oxford Ox-26 Dp
Telephone 0865 56767

OEDG 04, 4/ESGW/bjm
10 April 1991
Dear Mr. Oak

Thank you for your letter of 4 March, to which Sir

Roger has asked me to reply.

In our judgement the received system of English etymology is well grounded in the evidence and offers satisfactory explanations for the majority of questions about the origin and development of the English vocabulary. The Oxford Dictionaries both uphold and indeed, through the original research that we carry out, extend this body of knowledge. I am afraid that the theories of derivation which you have advanced run to the historical evidence and we are unable to accept them. None the less it was kind of you to offer them and we appreciate your interest.

Yours Sincerely,

ESC Weiner

Co-editor,

Oxford English Dictionary

Also :

In their very first reply about 20 years ago they said that Sanskrit could by no stretch of imagination be the mother of English since the British were made aware of the very existence of Sanskrit only about 400 years ago when their East India Company started trading with India, while the English Language is at least a thousand years old.

Their dictionary does at times acknowledged the Sanskritic origin of words, when called for, such as the word 'widow' admitted to originate from sanskrit 'Widhwa'.

The word 'Wodowçx' is formed by suffixing 'er' to the basic word 'Widow'.

ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

वाल्टन स्ट्रीट

आक्सफोर्ड ओ एक्स 26 डी पी

टेलिफोन 0865 56767

10 अप्रैल 1991

ओ ई डी जी 04, 4 य/ई एस जी डब्ल्यु/बी जे एम

प्रिय श्री ओक

आपके 4 मार्च के पत्र के लिए आपका धन्यवाद। सर रोजर ने मुझे आपके उक्त पत्र का उत्तर भेजने का दायित्व सौंपा है। हमारे अनुमान, विवेक के अनुसार अंगरेज़ी शब्दों की व्युत्पत्ति-विषयक उपलब्ध पद्धति साक्ष्य की दृष्टि से पूर्णतः पुष्ट, सत्य-आधारित है और अंगरेज़ी शब्दावली के मूलोद्गम और विकास से सम्बन्धित अधिकांश प्रश्नों के संतोषजनक स्पष्टीकरण, समाधान प्रस्तुत कर देती है। ऑक्सफोर्ड शब्दकोश ज्ञान की इस विधा का सम्मान करते हैं और स्वयं किए गए मूल-शोधों, अन्वेषणों से इसका प्रचार-प्रसार भी करते हैं। मुझे यह कहते हुए संकोच होता है कि व्युत्पत्ति के जो सिद्धान्त आपने प्रतिपादित, प्रस्तुत किए हैं वे ऐतिहासिक साक्ष्य, प्रमाणों के विपरीत हैं और हम उनको स्वीकार नहीं कर पाएँगे। फिर भी, आपने कृपा कर उन सिद्धान्तों को हमारे समक्ष प्रस्तुत करने का कष्ट किया और हम आपकी रुचि, सद्-इच्छा की सराहना करते हैं।

आपका
ई० एस० सी० वीनर
सह-सम्पादक
ऑक्सफोर्ड इंगलिश शब्दकोश

किन्तु उक्त पत्राचार के आदान-प्रदान से मुझे उनकी स्थिति अधिक स्पष्टता से समझ सकने में अत्यन्त सहायता प्राप्त हुई।

मुझे लगभग 20 वर्ष पूर्व भेजे गए उनके सर्वप्रथम पत्र में उनका कथन था कि सभी प्रकार से कल्पना, विचार-विमर्श कर लेने के बाद भी संस्कृत भाषा को अंगरेज़ी भाषा की जननी नहीं माना जा सकता क्योंकि ब्रिटिश लोगों को संस्कृत भाषा के अस्तित्व का ज्ञान ही लगभग 400 वर्ष पूर्व हुआ था जब उनकी ईस्ट इंडिया कम्पनी ने भारत के साथ व्यापार प्रारंभ किया था, जबकि अंगरेजी भाषा तो कम-से-कम एक हज़ार वर्ष पुरानी है।

इस तर्क में कुछ सूक्ष्म दोष, भ्रान्ति है। यह ऐसा ही है कि मैं कहूँ कि चूँकि मैं जब सन् 1923 ई० में छः वर्ष की आयु का था, मुझे तभी इंग्लैंड के अस्तित्व की जानकारी मिली थी, अतः ब्रिटेन कोई प्राचीन भू-खण्ड हो ही नहीं सकता था। तथ्य रूप में तो इसकी विपरीत स्थिति ही पूर्णतः सत्य है। अर्थात् मेरी आयु छः-वर्षीय होने पर भी जब ब्रिटेन का अस्तित्व था, तब बहुत संभव है कि मेरी जानकारी कुछ भी हो, ब्रिटेन अविस्मरणीय, अतीत काल से ही विद्यमान,

मौजूद रहा हो। इसी प्रकार, यद्यपि लगभग 1600 ई० के आसपास ही ब्रिटिश लोगों को संस्कृत भाषा के अस्तित्व का ज्ञान हुआ हो, तथापि उनकी अनभिज्ञता, अज्ञानता से संस्कृत भाषा का चिर अतीत काल से अस्तित्व किस प्रकार अवरुद्ध, लुप्त हो जाता है ? उसका अस्तित्व किस प्रकार नकारा जा सकता है ?

ऑक्सफोर्ड कोशों के उत्तर में अन्य महत्त्वपूर्ण बिन्दु यह था कि जब कभी आवश्यकता होती थी तब उनके कोश शब्दों के संस्कृत-मूल भी स्वीकार करते हैं जैसे अंगरेज़ी 'विडो' (विधवा, widow) शब्द संस्कृत भाषा के 'विधवा' शब्द से व्युत्पन्न माना गया है।

इसके अतिरिक्त, उनके कोश कई बार यह भी स्वीकार करते हैं कि अंगरेज़ी भाषा ने कुछ भारतीय शब्द जैसे 'जंगल' और 'घी' भी अपना लिये हैं—उनके उत्तर में कहा गया था। किन्तु ऐसे इक्के-दुक्के संबंधों के अतिरिक्त संस्कृत भाषा किसी भी प्रकार से अंगरेज़ी भाषा की जननी नहीं हो सकती—उनके तर्क का मुख्य सार था।

ऊपर दिए गए उनके स्पष्टीकरण में भी अनेक दोष, भ्रांतियाँ हैं। एक दोष यह है कि यदि संस्कृत भाषा ईस्ट इंडिया कम्पनी के भारत के साथ सम्पर्क होने से पूर्व अंगरेज़ी शब्दों को विकसित, अंकुरित, उत्पन्न नहीं कर सकती थी तो (संस्कृत 'विधवा' से व्युत्पन्न)' 'विडो' जैसे शब्द भी सन् 1600 ई० से पहले अंगरेज़ी भाषा में प्रवेश नहीं पा सकते थे। ऐसा निष्कर्ष स्पष्टतः बे-हूदा ही होगा।

दूसरी बात—फाउलर-बन्धुओं ने अगले शब्द 'विडोअर्' (Widower) के बारे में कहा है कि इस शब्द का निर्माण 'विडो' मूल शब्द में 'अर' (इ आर) प्रत्यय—बाद में, पीछे जोड़ देने से हुआ है। यह भयंकर, भौंडी, हास्यास्पद भूल, ग़लती है। आइए, हम देखें कि मूल अंगरेज़ी शब्दों में 'अर' प्रत्यय जुड़ने से क्या परिणाम होता है। 'लेबर' (Labour), 'सॉर्ट' (Sort) और 'लेक्चर' (Lecture) शब्दों पर विचार करें। इनमें 'आर' (इ अर) प्रत्यय जोड़ देने पर 'लेबरर' (श्रमिक) का अर्थ होगा वह व्यक्ति जो 'लेबर' (श्रम) को करता है, 'सॉर्टर' (छँटाईकार) का अर्थ होगा वह व्यक्ति जो 'सॉर्ट' (छँटाई) करता है जबकि 'लेक्चरर' (प्राध्यापक/प्रवक्ता/भाषणकर्त्ता) का निहितार्थ होगा 'लेक्चर' (भाषण/अध्यापन) करनेवाला व्यक्ति। उक्त नियम से, यदि विडोअर (विधुर) शब्द में 'अर' एक प्रत्यय ही है, तब तो विडोअर (बिधुर) शब्द का यह अर्थ हत्यारे (महिला भी) होना चाहिए जो

किसी स्त्री को विधवा बना देता है—स्पष्टतः उक्त स्त्री के पति को मारकर ही, उसकी हत्यारा ही। किन्तु विडोअर शब्द का यह अर्थ तो नहीं है। एक 'विडोअर' (विधुर) वह व्यक्ति है जिसकी पत्नी मर चुकी है—चाहे वह हत्या द्वारा, दुर्घटना से, बुढ़ापे से, बीमारी से अथवा अन्य किसी कारण से, और जो अविवाहित रहता है। अंगरेज़ी शब्द-कोशकारों द्वारा की गई भयंकर, हास्यास्पद व्युत्पत्ति-विषयक भूलों का यह एक विशिष्ट उदाहरण है जो उनकी अज्ञानता के कारण ही है कि अंगरेज़ी भाषा भी संस्कृत-भाषा से ही उत्पन्न, अंकुरित, विकसित हुई एक शाखा, अंश है।

इससे भी अधिक महत्त्व की बात यह है कि मुझे यह भी बताया गया है कि कभी किसी समय ब्रिटिश विद्वानों ने अपनी भाषा के मूल आधार के रूप में संस्कृत भाषा पर ही विचार भी किया था।

Extract of Mr. Nicholas Debenham's Letter Dated 15th of October, 1991 to Mr. P.N. Oak.

Mr. N. Debenham wrote the letter as Head Master of St. James Independent School for (Senior) Boys (61 Eccleston Square, London, SW-I.)

"At the end of the last century, when Sanskrit was accepted as the original mother tongue, dictionaries were published which did trace English, Greek and Latin words back, where possible to Sanskrit roots, and that this study was pursued enthusiastically until somebody, probably Max Muller "proved" that Sanskrit was not the parent of Greek (etc.), but rather the elder sister, the mother being the "lost" language."

"Many modern English words have been borrowed from (in particular) Latin & Greek (but) of course the Latin and Greek words themselves come from Sanskrit. But the main error of English etymologists seems to be that they do not trace the origin far enough back; or if they do, they trace it to a hypothetical Indo-Europeon "lost" language which....is a figment of their own imagination."

श्री निकोलस डेबेन्हम, मुख्य अध्यापक, (वरिष्ठ) बालकों के सेंट जेम्स इंडिपेन्डैन्ट स्कूल (61-ईक्कलैस्टन स्क्वायर, लंदन, एस डब्ल्यू-I) ने मुझे अपने

(15 अक्तूबर, 1991 ई० के) पत्र में लिखा है कि "पिछली शताब्दी के अंत में जब संस्कृत को मूल मातृ-बोली (भाषा) के रूप में मान्य, स्वीकार कर लिया गया था तब ऐसे शब्दकोश प्रकाशित हुए थे जिनमें, जहाँ सम्भव हुआ, अंगरेज़ी-यूनानी (ग्रीक) और लैटिन शब्दों का विगत इतिहास/मूल संस्कृत-धातुओं से ही उद्भूत माना गया था और यह अध्ययन बड़े उत्साह से जारी, चालू था जब अचानक किसी ने, संभवतः मैक्स मूलर ने 'सिद्ध' कर दिया कि संस्कृत भाषा ग्रीक (आदि) की जनक-भाषा नहीं थी, बल्कि सहोदरा—बड़ी बहिन थी, जननी भाषा तो 'विलुप्त हो गई' भाषा थी।"

श्री डेबेन्हम ने पत्र में आगे लिखा, "बहुत सारे आधुनिक अंगरेज़ी शब्द (विशेष रूप में) लैटिन और ग्रीक भाषाओं से लिये गए हैं, (किन्तु) लैटिन और ग्रीक शब्द स्वयं ही संस्कृत भाषा से लिये गए, उद्भूत, उत्पन्न, निर्मित हैं। तथापि, अंगरेजी शब्दों की व्युत्पत्ति पर विचार करनेवालों की मुख्य ग़लती, भूल यह प्रतीत होती है कि वे शब्द का मूलोद्गम बहुत पीछे तक नहीं खोजते; और यदि वे ऐसा करते भी हैं तो वे इनकी व्युत्पत्ति का श्रेय किसी काल्पनिक भारतीय-यूरोपीय (भारोपीय) "विलुप्त" भाषा को दे देते हैं जो···उनकी अपनी कल्पना का ही एक अंश है।"

सभी व्यक्तियों में से भी मैक्समूलर जैसा विद्वान्, जो संस्कृत भाषा और प्राच्य-साहित्य का विशेषज्ञ पंडित होते हुए भी संस्कृत भाषा की प्रमुखता, श्रेष्ठता से अनभिज्ञ हो और जनक-भाषा के रूप में अस्पष्ट, अनिश्चित तरीके से किसी मिश्रित 'भारोपीय' भाषा का उल्लेख करना देखकर मुझे जूलियस सीज़र की घृणित टिप्पणी "ब्रूटस तू भी" याद आती है।

प्रसंगवश, यहाँ यह भी कह दिया जाए कि विश्व की सभी भाषाओं के शब्दकोश-निर्माताओं ने ऐसी ही भयंकर, हास्यप्रद भूलें, ग़लतियाँ की हैं क्योंकि सभी मानवी बोली, भाषा के संस्कृत-मूलक, उससे उद्भूत होने के तथ्य से वे अनभिज्ञ, अनजान हैं।

यूरोपीय शब्दकोश-निर्माता अपने महाद्वीप की जनक-भाषाओं के रूप में ग्रीक और लैटिन को ही शिरोधार्य करते हैं। किन्तु इसके स्थान पर उनको चाहिए कि वे अपनी भाषाओं के मूल-स्रोत के रूप में संस्कृत भाषा को देखें, परखें, मानें, शिरोधार्य करें।

स्वयं अरबी, तुर्की, हीब्रू और ईरानी भाषाओं के शब्द भी संस्कृत भाषा से

व्युत्पन्न हैं।

'हीब्रू' (हब्रू) (HEBREW) शब्द के बारे में विचार करें। 'हीब्रू' शब्द का मूलोद्भव कैसे हुआ? जब मैं एन्साइक्लोपीडिया जुडैका (यहूदी धर्म से संबंधित ज्ञानकोश) देखने लगा, तब मुझे मालूम हुआ कि इसमें तो आधा स्पष्टीकरण ही दिया गया है। इसमें कहा गया कि प्रारंभिक अक्षर 'ही' ('ह') एक देवता के नाम का संक्षिप्त रूप है। देवता का नाम क्या है, उक्त ज्ञानकोश स्पष्ट नहीं करता। यह ज्ञानकोश दूसरे अक्षर 'ब्रू' का मूल भी स्पष्ट नहीं करता। किन्तु किसी भी संस्कृत-पाठी अर्थात् वेद-अध्येता के लिए तो 'हीब्रू' (हब्रू) शब्द का मूल बिल्कुल स्पष्ट, प्रत्यक्ष, सरल है। पहला अक्षर 'ही' (हब्रू) शब्द का मूल बिल्कुल स्पष्ट, प्रत्यक्ष, सरल है। पहला अक्षर 'ही' निश्चित रूप से 'हेरी' (हरी) दिव्य-नाम का संक्षेप है जबकि दूसरा अक्षर 'ब्रू' भाषा, बोली, वाणी का द्योतक अन्य संस्कृत धातु-अक्षर है। चूँकि 'हेरी' अर्थात् 'हरी' भगवान् कृष्ण का समनाम है, इसलिए 'हीब्रू' (हब्रू) शब्द का निहितार्थ वह भाषा है जिसमें भगवान् कृष्ण बोले। उक्त निष्कर्ष ऐतिहासिक साक्ष्य से भी फलित होता है जैसा हम बाद में एक पृथक् अध्याय में देखेंगे। वहाँ यह प्रदर्शित कर दिया जाएगा कि हीब्रू संस्कृत का ही उत्तरकालीन भिन्न रूप है, क्योंकि हमें ज्ञात ही है कि भगवान् कृष्ण की भाषा संस्कृत ही थी। इस प्रकार व्युत्पत्ति-विषय का सही परिप्रेक्ष्य, दृश्य इतिहास के सम्यक् अव-बोधन, समझ, ज्ञान का मार्ग भी प्रशस्त करता है।

इसके विपर्यय से, उलट-फेर से इतिहास का सही ज्ञान शब्दों की व्युत्पत्ति का समुचित मूल्यांकन, निर्धारण करने में भी प्रेरक, सहायक होता है। और यह तो विश्व-इतिहास में मेरी नई दृष्टि का ही प्रत्यक्ष फल है कि मुझे ज्ञात हुआ कि संस्कृत भाषा ही अंगरेज़ी भाषा की जननी है, यद्यपि मैं कोई दावा नहीं करता कि मुझे अंगरेजी या संस्कृत भाषाओं में से किसी में भी कोई असाधारण निपुणता, दक्षता प्राप्त है।

जब विश्व-भर में इधर-उधर शब्दकोश-निर्माता बंधु अपनी-अपनी भाषाओं के मुख्य स्रोत के रूप में संस्कृत पर विचार नहीं करते हैं, तो इस स्थिति के लिए भी मुख्य दोष उनको पढ़ाए, सिखाए गए इतिहास का ही है।

उनको मुख्यतः मुस्लिम तिथिवृत्तों और यूरोपीय ईसाई टिप्पणियों, उद्धरणों पर आधारित इतिहास ही पढ़ाया गया है। स्वयं मुस्लिम और ईसाई परम्पराएँ लगभग 1400 से 1600 वर्ष पुरानी हैं जबकि मानव-परम्परा तो बहुत अधिक

प्राचीन है। इतना ही नहीं, मुस्लिमों ने मुहम्मद-पूर्व का इतिहास विनष्ट कर डाला जबकि ईसाइयों ने ईसा-पूर्व का संपूर्ण इतिहास खत्म कर दिया।

कहने का अभिप्राय यह है कि विश्व-भर के विद्वान्, जिनमें कोशकार भी सम्मिलित हैं, ईसवी शताब्दी की चौथी सदी से पूर्व काल-खण्ड का कोई संस्कृत, सुसंगत इतिहास जानते ही नहीं हैं। उसके बाद का इतिहास भी यूरोपीय ईसाइयों और मुस्लिमों के हितों को ध्यान में रखकर ही भव्य रूप में प्रस्तुत किया गया है। अतः शब्दों की व्युत्पत्ति की सही समझ के लिए इतिहास का सम्यक् ज्ञान भी आवश्यक, महत्त्वपूर्ण है। व्यक्ति को यह अवश्य ज्ञात होना चाहिए कि मानवता का इतिहास कैसे और कब से प्रारंभ होता है, तथा मानवता की प्रथम भाषा क्या, कौन-सी थी।

पूर्व-उद्धृत सर रोजर इल्लियट की ओर से प्राप्त उत्तर में परोक्ष रूप से व्युत्पत्ति की सही व्याख्या के लिए इतिहास के महत्त्व को भी स्वीकार किया गया है, क्योंकि उत्तर में कहा गया है कि "अंगरेज़ी व्युत्पत्ति-पद्धति····ऐतिहासिक साक्ष्य में पुष्ट, सत्य-आधारित है।" अतः स्पष्ट है कि ऑक्सफोर्ड शब्दकोशों के विद्वानों ने अभी तक जिस इतिहास को पढ़ा है, उसी के आधार पर अंगरेज़ी शब्दों के मूल, उद्गम का स्पष्टीकरण करने में उन्होंने अपना भरपूर प्रयत्न अभी तक कर लिया है। किन्तु मैं तो उस इतिहास पर, उक्त इतिहास की सत्यता, उसकी निष्पक्षता, उसकी प्रामाणिकता पर ही प्रश्न कर रहा हूँ, उसे चुनौती दे रहा हूँ।

मैं सन् 1961 से निरन्तर शैक्षणिक पाठ्य-पुस्तकों और लोक-शिक्षण के माध्यमों से प्रचारित-प्रसारित की जा रही, व्यापक रूप से विनष्ट की गई और आंशिक रूप में विकृत की गई इतिहास-सामग्री के प्रति विश्व के बुद्धिजीवियों को जाग्रत करने के लिए लेखों का प्रकाशन कर रहा हूँ, पुस्तकों की रचना कर रहा हूँ और चित्रों के प्रदर्शन-सहित व्याख्यान दे रहा हूँ। अभी तक अज्ञात उक्त विश्व-इतिहास की एक रूपरेखा मेरी 1315-पृष्ठीय सचित्र 'वर्ल्ड वैदिक हैरिटैज' पुस्तक-शृंखला (हिन्दी में 'वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास'—1600 पृष्ठ) में तथा अभी तक प्रकाशित लगभग एक दर्जन पुस्तकों में दी गई है।

चूँकि इतिहास मानव-जीवन के रूप में सभी पक्षों में परिव्याप्त होता है, इसलिए विश्व-इतिहास का सम्यक् विवेचन, परिमार्जन, सुधार और पुनर्लेखन स्वतः ही न केवल अंगरेज़ी भाषा की अपितु सभी भाषाओं की व्युत्पत्ति के

पुनर्निर्माण को अपने में समाविष्ट कर लेगा। अतः, जबकि हम इस पुस्तक में मुख्य रूप से अंगरेज़ी भाषा की व्युत्पत्ति पर विचार कर रहे हैं, तथापि अन्य भाषाओं के विद्वानों को भी अपनी-अपनी भाषाओं के शब्दकोशों में दी गई व्युत्पत्ति की सम्यक् विवेचना करने की आवश्यकता अनुभव करनी चाहिए।

आगामी पृष्ठों में स्पष्ट कर दिया जाएगा कि ऑक्सफोर्ड शब्दकोश में दी गई शब्द-व्युत्पत्ति यहाँ-वहाँ, इकल्ले-दुकल्ले शब्दों में ही दोषपूर्ण नहीं है अपितु शिक्षा, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, विवाह और धर्म जैसे विविध मानव-कार्यकलापों से सम्बंधित शब्दावली के पूरे के पूरे समूह ही उलटे-पुलटे हो गए हैं, भ्रष्ट हो गए हैं। और तो और, स्वयं 'डिक्शनरी' (शब्दकोश) शब्द का मूल भी भ्रामक, अनुचित प्रकार से स्पष्ट किया गया है।

लगभग 15 वर्ष पूर्व जब मैंने समाचार-पत्रों में पढ़ा कि पुणे-स्थित 'डैकन कॉलेज' ने विशाल बहु-खण्डीय संस्कृत-अंगरेज़ी शब्दकोश का संकलन प्रारंभ किया, तब मैंने उक्त परियोजना के अध्यक्ष को यह सुझाव देते हुए एक पत्र लिखा कि प्रत्येक शब्द के संबंध में अन्य विवरण देने के साथ-साथ, जहाँ तक संभव हो सके, अधिक-से-अधिक अंगरेज़ी शब्दों की संस्कृत-धातुएँ भी उल्लेख कर देनी चाहिएँ।

उनका उत्तर मिला कि उक्त परियोजना के अध्यक्ष संयुक्त राज्य अमरीका में नए पद ग्रहण करने चले गए हैं, अतः पुणे में नए अध्यक्ष की नियुक्ति होने पर आपका सुझाव उनके समक्ष रख दिया जाएगा।

मुझे बाद में कोई समाचार नहीं मिला। स्पष्टतः, जहाँ तक मैं समझ सका, उनकी खामोशी —चुप्पी के दो कारण थे। एक कारण था—उनके सीधे-सीधे, घिसे-पिटे रास्ते में—विधि में किसी नवीनता को स्वीकार, ग्रहण करने में उनका संकोच। दूसरा कारण यह था कि उनकी संपूर्ण शिक्षा और विचार-प्रणाली ऑक्सफोर्ड कोशकारों के समान ही होने की वजह से वे कभी भी ऑक्सफोर्ड शब्दकोशों में उल्लेख की गई व्युत्पत्तियों को चुनौती देने या उनमें सुधार करने या कुछ जोड़ने के लिए कहने का साहस नहीं करेंगे।

सभी संस्थापनाएँ युगों-युगों से कट्टर, हठ-धर्मी ही रही हैं। अतः कठोर पद्धतियों और विश्वासों के बारे में प्रश्न करनेवालों को क्रुद्ध भृकुटियों, अविश्वास और उपहास का सामना तो करना ही पड़ेगा। ऐसी संपूर्ण स्थिति को जानते हुए ही पुस्तक उन लोगों के लिए विचार-सामग्री के रूप में प्रस्तुत की जा

रही है जिनको अंगरेज़ी भाषा और इसके शब्दकोशों को देखने, उपयोग में लाने का अवसर प्राप्त होता है।

मैं यहाँ यह भी कह देना ठीक समझता हूँ कि फ्रैंच, जर्मन, इतावली, चीनी, अरबी आदि भाषाओं के शब्दकोश-निर्माताओं को भी, जहाँ तक संभव हो सके, अब से आगे, अपने शब्दों को संस्कृत भाषा से व्युत्पन्न खोजने का प्रयास करना चाहिए।

—लेखक

1

संस्कृत भाषा—अंगरेज़ी भाषा की समस्याओं की कुंजी...उनका निदान, समाधान

इस वाद-विवाद के अतिरिक्त कि अंगरेज़ी भाषा संस्कृत भाषा से ही उत्पन्न एक उपशाखा है, या कई भाषाओं का मिश्रण है, एक व्यावहारिक रचनात्मक प्रमाण यह है कि अंगरेज़ी की अनेक भाषायी समस्याएँ केवल संस्कृत भाषा की शरण में जाने से ही, उसी को स्वीकार्य कर लेने से हल हो पाती हैं। नीचे एक ऐसा ही उदाहरण दिया जा रहा है।

मैं सन् 1977 में जब लंदन (इंगलैंड) में भाषण-शृंखला के लिए गया था तब मेरा एक भाषण लंदन के 'अपमिन्स्टर' भाग में आयोजित किया गया।

'ईसा-पूर्व युगों में जब वैदिक संस्कृति और संस्कृत भाषा सर्व विश्व में परिव्याप्त थी'—अपनी अनेक खोजों में से एक पर जब मैं अपने श्रोताओं के सम्मुख भाषण कर रहा था, उन्हें संबोधित कर रहा था, तब मुझे अचानक सूझा कि यद्यपि लंदन में 'अपमिन्स्टर' बस्ती, क्षेत्र, स्थान है, किन्तु इसी के समान कोई 'डाउन मिन्स्टर' उप-नगर, इलाक़ा नहीं है।

एक तात्कालिक प्रश्न के रूप में ही मैंने अपने श्रोताओं से पूछा, जिनमें कुछ अंगरेज़ स्त्री-पुरुष भी थे, कि लंदन में 'अपमिन्स्टर' तो है किन्तु 'डाउन मिन्स्टर' न होने का कारण क्या है?

उपस्थित श्रोता-समूह चकित हो, अवाक् रह गया। किसी प्रकार का उत्तर, समाधान प्रस्तुत करने की तो बात ही दूर, उन लोगों ने उक्त समस्या के अस्तित्व की कल्पना भी कभी नहीं की थी।

चूँकि मानवता के आदिकाल से कौरव-पाण्डव युद्ध (सन् 5561 ई० पू०) तक विश्व वैदिक प्रशासन की भाषा संस्कृत-भाषा ही थी, इसलिए ऐसी सभी समस्याओं का हल, समाधान केवल संस्कृत भाषा की सहायता से ही किया जा सकता है।

मैंने तब असमंजस-ग्रस्त किंकर्त्तव्यविमूढ़ श्रोतासमूह को स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया कि 'अपमिन्स्टर' शब्द का विश्लेषण समाधान प्रस्तुत कर देगा। आइए, हम सर्वप्रथम देखें कि 'मिन्स्टर' शब्द का अर्थ क्या है? 'मिन्स' संस्कृत शब्द 'मनस्' अर्थात् 'मन' है। इसका बाद का भाग 'टर' (तर) भी संस्कृत है जो 'तैर जाना' या 'पार हो जाना' का अर्थद्योतक है। मंदिरों उपनाम गिरजाघरों को 'मिन्स्टर' कहते हैं, क्योंकि जब कोई भक्त-जन गिरजाघर (उपनाम मंदिर) में प्रवेश करता है तब उसका मन लौकिक—पार्थिव—सांसारिक जगत् से आध्यात्मिक, अलौकिक, सूक्ष्म जगत् में चला जाता है, पार हो जाता है। इस प्रकार 'मिन्स्टर' शब्द मन्दिर का अर्थद्योतक है।

उपसर्ग 'अप' को यदि इसकी मूल संस्कृत उच्चारण-ध्वनि बनी रहने दें जो 'उप' है, तो 'अपमिन्स्टर' का संस्कृत भाषा में अर्थ होगा 'एक अधीनस्थ, छोटा मंदिर', क्योंकि 'उप' एक सहायक स्तर का द्योतक है, जैसे उप-राष्ट्रपति, उप-अध्यक्ष, उप-प्रधान या उप-कप्तान, जो आवश्यकतानुसार एक से अधिक भी हो सकते हैं।

चूँकि लंदन का मुख्य गिरजाघर (मंदिर—उपासनालय) 'वैस्ट मिन्स्टर अबे' है, इसलिए अन्य सब उप-मिन्स्टर अर्थात् छोटे उपासनालय हैं। अतः उपर्युक्त समस्या का समाधान, हल यह है कि लंदन में कितने ही 'अप-मिन्स्टर' तो हो सकते हैं किन्तु कोई 'डाउन-मिन्स्टर' नहीं, क्योंकि 'अप-मिन्स्टर' शब्द में 'अप' उपसर्ग, यद्यपि आधुनिक अंगरेज़ी भाषा में अशुद्ध उच्चारण किया जाता है फिर भी, अपनी 'उप' अर्थात् निचली श्रेणी का होने की संस्कृत-ध्वनि को बनाए रखे है।

मैं नीचे अनेक अन्य अंगरेज़ी भाषायी समस्याओं को सूची-बद्ध कर रहा हूँ जिनके समाधान संस्कृत-प्रयोग से ही ढूँढे जा सकेंगे। ये समस्याएँ दृष्टान्त के रूप में ही प्रस्तुत की जा रही हैं—कोई विशद, बृहत् सूची नहीं दी गई है।

उन समस्याओं के उत्तर बाद में इस पुस्तक के आगामी अध्यायों में मिल जाएँगे। मैं यहाँ नमूने की कुछ समस्याओं को मात्र इस उद्देश्य से प्रस्तुत कर रहा हूँ कि पाठक को उन कुछ कठिनाइयों का आभास, अनुभव हो सके जो अंगरेज़ी भाषायी संरचना के बारे में विचार करनेवाले, मननशील, चिन्तनशील व्यक्ति के समक्ष आ खड़ी होती हैं।

मैं ऊपर एक समस्या पहले ही बता चुका हूँ और उसका विशद विश्लेषण

भी कर चुका हूँ। कुछ अन्य समस्याओं का उल्लेख इसलिए किया जा रहा है कि पाठक अगले पृष्ठों को पढ़ने से पूर्व कुछ विचार, मनन-प्रक्रिया शुरू करें।

समस्या क्रमांक-2

यह समस्या राष्ट्र/राज्य के अध्यक्ष, प्रधान के रूप में राष्ट्रपति की पद-स्थिति से उत्पन्न, प्रस्तुत होती है।

प्रश्न यह है कि राष्ट्राध्यक्षीय शिष्टाचार में क्या, कौन-सी विवशता है कि राष्ट्र-प्रमुख को किसी व्यक्ति को पदावनत करने, या नौकरी से बर्खास्त करने, या किसी अपराधी की क्षमा-याचना, आवेदन को भी ठुकरा देने जैसे भीषण, दारुण, प्रसंगों में भी सदा प्रसन्न होते हुए ही स्वयं को अभिव्यक्त करना पड़ता है? ऐसी परिस्थितियों में सामान्य शिष्टाचार तो खेद, अफ़सोस व्यक्त करने का है, और फिर भी अन्य सभी लोगों से हटकर, पृथक् व्यवहार करते हुए ही राष्ट्राध्यक्ष, राष्ट्रपति को अपने शिकार, पीड़ित व्यक्ति को दुःख प्रदान करने में भी 'प्रसन्नता, सुख, हर्ष' प्राप्त होने की अभिव्यक्ति ही करनी पड़ती है, क्या इसका अर्थ यह है कि राष्ट्रों/राज्यों के सभी प्रमुख जो राष्ट्रपति, राष्ट्राध्यक्ष आदि पुकारे जाते हैं, पर-पीड़क, पर-पीड़नशील हैं?

समस्या क्रमांक-3

"सिल्ली काऊ" (भोली, अल्प-बुद्धि, हास्यास्पद गौ) अपशब्द, दुर्वचनात्मक शब्द है जो ग़लती करती (प्रतीत होती हुई) महिलाओं के लिए अंगरेज़ी भाषा में सामान्य रूप से प्रयुक्त होता है, व्यवहार में लाया जाता है।

उदाहरण के लिए, जब कोई महिला अचानक द्रुतगामी वाहनों के यातायात के बीच में सड़क पार करने आ जाती है, तब उस ग़लती करनेवाली महिला पैदल यात्री को बचाने के लिए यह परेशान मोटरचालक पैरों से वाहन रोकने हेतु ब्रेक (रोक) लगाते समय, श्वास रोकते-थामते हुए, 'तू सिल्ली काऊ' दुर्वचन ही बुदबुदाता है। यहाँ सभी जानवरों, पशुओं में से 'काऊ' (गौ) शब्द ही क्यों आया, क्यों आता है?

समस्या क्रमांक-4

अंगरेज़ी भाषा में 'अर' (ई आर) प्रत्यय उस व्यक्ति का द्योतक है जो

किसी काम या कार्यकलाप को करता है। उदाहरण के लिए एक 'लेक्चरर' (भाषणकर्त्ता) वह है जो 'लेक्चर' (भाषण) देता है, 'सॉर्टर' (छँटाईकार) वह व्यक्ति है जो 'सॉर्ट' (छँटाई) करता है। और 'लेबरर' (श्रमिक) वह आदमी है जो 'लेबर' (श्रम) करता है।

उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, आइए हम अब 'ऑक्सफोर्ड शब्दकोश' में दिए गए 'विडो' (विधवा) और 'विडोअर' (विधुर) शब्दों का विवेचन करें।

'ऑक्सफोर्ड शब्दकोश ने' 'विडो' शब्द के स्रोतों में से संस्कृत-शब्द 'विधवा' का उल्लेख ठीक, सही ही किया है। किन्तु इसने अगले शब्द 'विडोअर' (विधुर) का स्पष्टीकरण देते हुए इसे मूल 'विधवा' शब्द में 'अर' प्रत्यय लगाने से बननेवाला शब्द कहकर भयंकर भूल, ग़लती की है।

जैसा पहले कहा जा चुका है, यदि 'अर' एक प्रत्यय होता तो 'विडोअर' (विधुर) उस व्यक्ति का द्योतक होता जो किसी महिला—विवाहित महिला—के पति की हत्या करके उक्त महिला को विधवा बना देता है। और यदि हत्या करनेवाला भी एक महिला ही हो, तो 'विडोअर' (विधुर) शब्द उस महिला हत्यारिन के लिए भी प्रयुक्त हो सकता है। फिर आप ही बताएँ कि 'विडोअर' शब्द (विधुर) का मूल, उद्‌गम क्या है ?

इससे भाषा-विज्ञान के मूल आधार के रूप में संस्कृत भाषा को मान्य करने की नितान्त आवश्यकता सभी भाषाओं के कोश-निर्माताओं को स्पष्ट हो जानी चाहिए।

समस्या क्रमांक-5

गरम पेय पदार्थों का मिश्रण 'कॉकटेल' नाम से पुकारा जाता है जबकि इसमें न 'कॉक' (मुर्ग़ा) और न ही 'टेल' (पूँछ, दुम) होती है। ऐसा क्यों है ?

समस्या क्रमांक-6

सितम्बर (सप्तम्बर), अक्तूबर (अष्टोबर), नवम्बर और दिसम्बर (दशम्बर) नाम यद्यपि क्रमशः 7-वें, 8-वें, 9-वें, और 10-वें मासों के द्योतक हैं, तथापि वे प्रचलित पंचांगों मे 9-वें 10-वें 11-वें और 12-वें मास के रूप में ही निरूपित किए जाते हैं। ऐसा क्यों है ?

समस्या क्रमांक-7

अंगरेज़ी भाषा में 'प्राइमरी' (Primary) शब्द [प्रारंभ] किसी प्रारंभिक अवस्था का द्योतक है जबकि 'प्राइम मिनिस्टर' (प्रधानमंत्री) और 'प्राइम टाइम' (सर्वोत्तम समय) जैसे कुछ शब्दों में 'प्राइम' (प्रथम) शब्द किसी सर्वोच्च, अभिभावी महत्त्व या अधिकार, सत्ता का द्योतक होता है। एक ही शब्द का यह प्रत्यक्षतः परस्पर-विरोधी अभिप्राय क्यों है ? इसका स्पष्टीकरण क्या है ?

समस्या क्रमांक-8

क्रिसमस (क्राइस्ट-मास) को X-मास (एक्स-मस) के रूप में क्यों लिखा जाता है ?—Y-मास (वाई-मस) या Z-मास (ज़ेड-मस) क्यों नहीं लिख देते ?

समस्या क्रमांक-9

पोप के निदेश को 'बुल' (साँड) क्यों कहते हैं ? गधा, बाघ या शेर क्यों नहीं कह देते ?—सोचिए !

समस्या क्रमांक-10

'केनल' (Kennel) और 'केनाइन' (Canine) शब्दों की वर्तनी भिन्न-भिन्न क्यों की जाती है जबकि दोनों का सम्बंध कुत्तों से ही है ?

समस्या क्रमांक-11

'रैंगल' (Wrangle) शब्द का अर्थद्योतन है झड़प, झगड़ा, तू-तू मैं-मैं, या उच्च-स्वर में, ज़ोर-ज़ोर से, अशिष्ट-असभ्य तर्क। फिर भी, प्रथम श्रेणी में स्थापित गणितज्ञ को 'रैंगलर' क्यों कहते हैं ?

समस्या क्रमांक-12

मुस्लिम-सन् मुहम्मद की किसी यशस्वी और महत्त्वपूर्ण जीवन-घटना से प्रारंभ न होकर उसकी मक्का से दुःखी, कलंकित वापसी, पलायन से क्यों शुरू होता है ?

समस्या क्रमांक-13

मुस्लिम नामों में ही मुख्य रूप से अभी भी चले आ रहे, प्रयुक्त प्रत्यय 'खान' (खाँ) का मूल, उद्गम क्या है ?

समस्या क्रमांक-14

यहूदियों, अरब-वासियों (मुस्लिमों), अरमेइनों और असीरियाइयों व फ़ोईनीसीयंनों को कुल मिलाकर 'सेमाट्स' (सामी) क्यों कहा जाता है ?

उपर्युक्त क्रमांक 12 से 14 तक की समस्याएँ विशुद्ध रूप से अंगरेज़ी शब्दकोश-निर्माण-शास्त्र से तो संबंधित नहीं हैं, फिर भी हमने इन्हें भी अपने प्रयास में शामिल कर लिया है क्योंकि हमारी चर्चा में ये भी अनेक बार आस-पास आकर उपस्थित हो ही जाती हैं।

समस्या क्रमांक-15

अविवाहित महिला को भी कभी 'बेचलर' (ब्रह्मचारी/ब्रह्मचारिणी) नहीं कहते हैं। पुरुष का विवाह हो जाने पर उसे भी 'बेचलर' (ब्रह्मचारी) नहीं कहा जा सकता। फिर कौन-सा औचित्य है कि अर्हक महिला या पुरुष को 'बेचलर' (ब्रह्मचारी/स्नातक) की उपाधि दे दी जाती है और उनका विवाह हो जाने पर भी उन्हें अनुमति रहती है कि वे यह उपाधि अपने पास रखे रहें ?

ऐसी समस्याओं के उत्तर मात्र संस्कृत भाषा के माध्यम से ही मिल सकते हैं। किसी विशिष्ट उपलब्धि की आशा करनेवाले ज्ञान की प्रत्येक शाखा के विद्वानों को ऐसी समस्याएँ खोज निकालने में सक्षम, समर्थ होना चाहिए। इस समय इतिहास, पुरातत्त्व या भाषा-विज्ञान—किसी भी विश्लेषणात्मक-अध्ययन के लिए कोई प्रयास नहीं किया जा रहा। अपने शिक्षकों द्वारा रटाए गए उत्तरों को ही प्रस्तुत कर देनेवाले छात्रों को उपाधियाँ प्रदान कर दी जाती हैं।

2
भाषाओं की उत्पत्ति के बारे में प्रचलित पश्चिमी धारणा

जैसा इस पुस्तक की भूमिका में स्पष्ट किया जा चुका है, भाषाओं की उत्पत्ति, उनके मूलोद्‌भव की सही जानकारी भाषाओं के शब्दों की समुचित व्युत्पत्ति को समझने के लिए अति आवश्यक, अनिवार्य है।

वर्तमान युग में प्रचलित इतिहास-ग्रंथ वे हैं जो मुस्लिम रोज़नामचों और यूरोपीय ईसाइयों की लिखित टिप्पणियों पर आधारित हैं, क्योंकि ये ही वे लोग थे जिन्होंने पिछले हज़ार वर्षों में सत्ताभोग किया।

मुस्लिम और ईसाई परम्पराएँ क्रमशः पिछले 1400 से 1600 वर्षों तक की ही हैं, यद्यपि मानवता तो इस अवधि से लाखों वर्ष पूर्व तक से परिव्याप्त रही है।

परिणाम यह हुआ कि इन उत्तरकालीन संक्षिप्त और विकृत मुस्लिम व ईसाई वर्णनों से ही जिस-तिस प्रकार काम चला लेनेवाले आधुनिक विद्वानों के पास लाखों वर्ष पूर्व के इतिहास के कोई सूत्र उपलब्ध नहीं हैं। अतः वे ब्रह्माण्ड की सृष्टि का स्पष्टीकरण देने के लिए कुछ भौतिक-शास्त्रियों के बिगबैंग-सिद्धान्त से जुड़ जाते हैं, उस पर निर्भर हो जाते हैं। उसके लिए वे लोग प्राणियों के विकासवाद का चार्ल्स डारविन का सिद्धान्त मान्य, स्वीकार्य कर लेते हैं। इसके पश्चात् वे कल्पना, अनुमान करते हैं कि मात्र बन्दरों से ही विकसित हुए मानव जंगल में ही तो रहे/निवास-किए होंगे और वहाँ उन्होंने असंख्य पक्षियों और पशुओं की असंख्य ध्वनियों की नकल करने का यत्न किया होगा तथा 'किसी प्रकार' एक भाषा या भाषाओं का आविष्कार कर लिया होगा।

वर्तमान इतिहास निश्चयपूर्वक नहीं कह पा रहा कि विभिन्न जातियों और रंगों-वर्णों के मानवों का उद्‌भव, विकास विभिन्न रंगों-वर्णों व आकृतियों वाले नक्काल वानरों से ही हुआ था।

उन विभिन्न जातियों ने अपने-अपने क्षेत्रों में एक-साथ ही भिन्न-भिन्न भाषाओं का क्या विकास भी कर लिया था?—आधुनिक इतिहासग्रंथों में यह

अति सरल, मृदु भाषा में अस्पष्ट ही बना हुआ है।

आधुनिक इतिहास-ग्रंथ यहाँ से एक लम्बी छलाँग लगाते हैं और इस तथ्य पर ज़ोर देते हैं कि सीरिया, असीरिया, बेबिलोनिया और मेसोपोटामिया कुछ प्रारंभिक देशों में थे।

फिर एक बार बड़ा अन्तराल, अभाव है और आधुनिक इतिहास-ग्रंथ विभिन्न यूनानी सम्प्रदायों, रोमनों, मिश्रवासियों, आर्यों, भारतीयों व चीनी लोगों के बारे में कुछ भ्रम-पूर्ण, वियुक्त वर्णन प्रस्तुत कर देते हैं। इस प्रकार आधुनिक, प्रचलित इतिहास-ग्रंथ 'कूदो, आगे बढ़ो और छलाँग लगाओ' प्रकार के हैं।

दूसरी ओर पुरातत्त्वशास्त्री हैं जिनके अपने ही समानान्तर वर्णन हैं जो कुछ उन वैज्ञानिकों की कल्पनाओं पर आधारित हैं जो एक हिम-युग, अभिनूतन (प्लाइस्टोसीन) युग, प्रस्तर-युग आदि की बातें करते हैं। समानांतर रेखाओं के समान, ऐतिहासिक और पुरातात्त्विक वर्णन एक-से नहीं हो पाते। वे दो एकाकी शैक्षणिक हल-रेखाओं के समान हैं।

आधुनिक पुरातत्त्वशास्त्रीय वर्णनों में निहित है कि हिम-युग में, उदाहरणार्थ, कोई जीवधारी नहीं थे और प्रस्तर-युग में सिर्फ आदिम लोग ही थे। ऐसी कल्पनाएँ, धारणाएँ अनुचित, निराधार, अतर्क्य हैं क्योंकि हमारे अपने इस युग में ही हिमालय और अल्प-पर्वतों की चोटियाँ तथा दक्षिणी ध्रुव का अंटार्कटिकाई प्रायद्वीप हिम-युग में ही है; आस्ट्रेलिया, भारत व अमरीकी-द्वय में आदिवासी जातियाँ प्रस्तर-युग में हैं जबकि अनेक विकसित देश अंतरिक्षयान-युग में हैं। यह तथ्य आधुनिक पुरातत्त्वीय धारणाओं और आग्रहों में त्रुटि को प्रदर्शित कर देता है।

फिर, ऐसे अनेक क्षेत्र भी हैं जहाँ आधुनिक इतिहास-ग्रंथों के रचयिता व पुरातत्त्वशास्त्री, दोनों ही पूरी तरह ग़लत हैं। उदाहरण के लिए, सारे विश्व में जिन ऐतिहासिक मस्जिदों और मकबरों को इस्लामी संरचनाएँ विश्वास किया जाता है, वे सभी मुस्लिम-पूर्व के विजित निर्माण, भवन हैं।

पुरातत्त्व-वेत्ता अपने पुरातात्त्विक परीक्षणों से अमान्य करते हुए विश्व-इतिहासकारों की समस्त जाति-बिरादरी का पाखंड और अक्षमता भली-भाँति उजागर कर सकते थे, उदाहरणार्थ यह घोषित करके कि पर्वत-शिखर पर गुम्बद (डोम ऑन दि रॉक), ताजमहल और अन्य अनेक राजप्रासादीय भवन मुस्लिम-निर्माण नहीं हैं। फिर भी, पुरातत्त्व-वेत्ता एक झूठी शैक्षणिक प्रतिष्ठा की

अवधारणा-वश बड़े धीर-गंभीर, सतर्क बने रहकर और षड्यन्त्रकारी रूप में चुप्पी साधे बैठे रहते हैं।

उपर्युक्त संक्षिप्त सर्वेक्षण के बाद यह तो स्पष्ट हो जाएगा कि किस प्रकार आधुनिक पुरातत्त्वीय और ऐतिहासिक अध्ययन कितने थोथे, निरर्थक आधारों पर स्थित हैं। ये अधिकांशतः कुछ वैज्ञानिकों द्वारा उपाय के रूप में प्रस्तुत किए गए कुछ काल्पनिक सिद्धांतों पर आधारित हैं। काल्पनिक वैज्ञानिक सिद्धान्त अल्पकालीन होते हैं, क्योंकि उनके साथी वैज्ञानिक ही उन्हें शीघ्र अस्वीकार कर देते हैं। वैसे भी, वैज्ञानिक काल्पनिक वर्णन कभी भी ऐतिहासिक अभावों को नहीं भर सकते। उदाहरण के लिए, जब कोई अनाथ बच्चा अपने माता-पिता के बारे में पूरी तरह अनभिज्ञ, अज्ञान है तब चार्ल्स डारविन जैसे जीव-विज्ञानी पर कभी भी इस बात के लिए निर्भर नहीं रहा जा सकता कि जिस प्रसूति-गृह में वह बच्चा जन्मा था, उक्त जीव-विज्ञानी उस घर के कीड़े-मकौड़ों और कीटाणुओं की परीक्षा करके बच्चे के माता-पिता का पता लगा पाएगा। किन्तु चार्ल्स डारविन ने मानवजाति का मूलोद्गम खोजने में बिल्कुल यही काम तो किया है!

किसी व्यक्ति का इतिहास होता है, या फिर नहीं होता है। यदि किसी का इतिहास नहीं है तो उसका स्थान कोई नहीं ले सकता। मुस्लिम और ईसाई परम्पराएँ तुलनात्मक रूप में काफ़ी कम आयु, अवधि की होने के कारण मुस्लिम-पूर्व और ईसा-पूर्व कालों के लिए उन पर निर्भर नहीं रहा जा सकता। विशेषकर, ये मुस्लिम और ईसाई लोग ही तो थे जिन्होंने जान-बूझकर और बड़े ढंग से सभी अभिलेखों को आग से भस्म कर अपना पूर्व-इतिहास नष्ट कर दिया। यही कारण है कि इस्लाम द्वारा रौंद डाले गए सभी क्षेत्रों का पूर्वकालीन, मुहम्मद-पूर्व काल का इतिहास उपलब्ध ही नहीं है। इसी प्रकार, ईसाइयत द्वारा पद-दलित यूरोपीय देशों का भी कोई इतिहास शेष नहीं बचा है।

उदाहरणार्थ, मुझे जब मालूम हुआ कि ईसाइयत-पूर्व के फ्रांस में वैदिक सभ्यता प्रचलित थी, तब मैंने अमरीका-स्थित हारवर्ड विश्वविद्यालय की फ्रैंच-सभ्यता के विभाग को यह जानने के लिए पत्र लिखा कि उनके पास ईसाइयत-पूर्व फ्रांस में जीवन-पद्धति के बारे में कौन-सी जानकारी उपलब्ध थी? और मुझे जो आशंकाएँ थीं वही सत्य, खरी निकलीं। उनके उत्तर में बताया गया है कि वे फ्रांस का अध्ययन किसी ईसाइयत-पूर्व के देश के रूप में लेशमात्र भी नहीं करते। यह संत्रासी विभीषिकाओं में से शैक्षणिक विभीषिका है।

निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ईसाइयत में बदल दिए गए सभी क्षेत्रों के बारे में भी यही स्थिति सत्य है।

यह एक घोर शैक्षणिक त्रासदी, शोकांतिका है। चूँकि इस्लाम और ईसाइयत लगभग 1400 से 1600 वर्ष पुराने हैं और उनका हमारी पृथ्वी पर कम-से-कम 50% तक प्रभुत्व तो है ही, इसलिए स्पष्ट है कि उन्होंने विश्व की कम-से-कम आधी जनसंख्या को यह विश्वास दिला दिया है कि यद्यपि अपने पृथ्वी-ग्रह पर मानवता तो लाखों वर्षों से निवास करती रही है, फिर भी उनके पास पिछले 1600 वर्षों से पहले का अध्ययन-योग्य कोई इतिहास नहीं है। हारवर्ड से प्राप्त उत्तर उक्त विश्वास की एक पुष्ट, पक्की अभिव्यक्ति है।

तथ्य रूप में तो प्रारंभिक काल के ये ईसाई और मुस्लिम लोग थे जिन्होंने अपने मतों को फैलाने, उनका प्रचार-प्रसार करने के जोश में जान-बूझकर पूर्वकालिक इतिहास को नष्ट कर दिया, ताकि कोई आपत्तिजनक तुलना न की जा सके और यह छाप, असर बना रहे कि उनकी धर्म-मीमांसा ही है जिसे मानवता ने अपनी सर्वाधिक प्राकृतिक धरोहर के रूप में चेतनावस्था में अंगीकार, स्वीकार किया है।

इस्लाम अपने अनुयायियों में इस विश्वास को पुष्ट करता रहे, यह तो पूरी तरह समझ में आने योग्य है क्योंकि मुस्लिम राष्ट्र मुहम्मद-युग से ही जुड़े चले आ रहे हैं।

किन्तु यह आश्चर्य की बात है कि यूरोपीय और अमरीकी बुद्धिजीवी, जिन्होंने विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में महान् प्रगतियाँ की हैं, अभी भी, कुल मिलाकर, दृढ़तापूर्वक अस्वीकार करते हैं और इस तथ्य का प्रतिकार करते हैं कि उनके ईसाइयत-पूर्व के सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक जीवन में झाँका जाए। उदाहरण के लिए, उनके किस प्रकार के मंदिर, देवी-देवता, महाकाव्य और महान् ग्रंथ या राजवंश, राजपरिवार थे? या, ईसाई पोप-प्रथा से पूर्व इटली में वैटिकन में अथवा ईसाई-धर्माध्यक्षता से पूर्व संयुक्त साम्राज्य (यू० के०) के कैन्टरबुरी में पादरी-प्रथा का कौन-सा प्रकार प्रचलित था? ईसाई विद्वान् अपने ही ईसाई-पूर्व के भूतकाल की जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न प्रायः नहीं करते।

ईसाई पुरातत्त्वशास्त्री भी अपने स्व-कल्पित, मनगढ़ंत संसार में विचरण करते हैं। यूरोप में (और मुस्लिम देशों में भी) समय-समय पर शिव, गणेश, राम, कृष्ण, लक्ष्मी, दुर्गा, बुद्ध आदि देवी-देवताओं की मूर्तियाँ मिली हैं, किन्तु उनको

छुट-पुट, निरर्थक, असम्बद्ध शिल्प-तथ्य कहकर ठुकरा दिया जाता है, अस्वीकार कर दिया जाता है।

मुस्लिमों के साथ तो यह और भी बदतर स्थिति है। उनको भी समय-समय पर खाड़ी के राज्यों में, इराक में, मालदीव द्वीप-समूह में, ईरान, तुर्की, सऊदी अरेबिया आदि में मंदिर और मूर्तियाँ उपलब्ध हुई हैं, किन्तु उन्होंने उन कलाकृतियों को नष्ट कर दिया है या उन्हें ज़मीन में गाड़ दिया है, तथा बाहरी संसार को उनके बारे में जानने की या उन उपलब्धियों से संबंधित कोई, किसी प्रकार की काना-फूसी की भी अनुमति नहीं दी है।

इस प्रकार ईसाइयत और इस्लाम, दोनों ही, किसी भी पूर्वकालिक सांस्कृतिक खोज, अन्वेषण के बीच में घोर बाधक रहे हैं। यह बुरी स्थिति है कि स्वयं को ईसाई या मुस्लिम कहनेवाले लोग अपने ही मुस्लिम-पूर्व या ईसाइयत-पूर्व पूर्वजों, बाप-दादाओं के सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन का स्वतंत्र, खुला ऐतिहासिक अध्ययन करने को तैयार नहीं हैं। इन दो मतों को, जिन्होंने अपनी पूर्व-संस्कृति पर लौह-आवरण लगा रखा दिखाई देता है, अस्तित्व में रहने का कोई अधिकार नहीं है। ईसाइयों और मुस्लिमों को यह घोषित करने व धौंस देने का क्या अधिकार है कि ईसाइयत के शुरू होने या मुहम्मद के जन्म की तारीखें वे अंतिम घटनाएँ हैं जिनसे पूर्व के सांस्कृतिक या सामाजिक अध्ययन की अनुमति किसी को नहीं दी जा सकती? यह तो ऐसा ही है कि मानवता के मुहम्मद-पूर्व और ईसाइयत-पूर्व के इतिहास में मुक्त विचरण करने के विरुद्ध मानव-मस्तिष्क को पक्की तरह सील-बंद कर दिया जाए और उसको बेड़ी भी लगा दी जाए। इस्लामी और ईसाइयत की सत्य-विरोधी, ज्ञान-विरोधी और इतिहास-विरोधी इस पैशाची, क्रूर भूमिका को सुस्पष्ट रूप में जनता के समक्ष रखा जाना आवश्यक है जिससे प्रेरित होकर संभावना है कि कुछ लोग अपने बौद्धिक और मनोवैज्ञानिक बंधनों को त्याग दें।

जब कभी मुस्लिम लोग अपने मुस्लिम-पूर्व समाज की बात करने का दिखावा करते हैं, तब भी वे उक्त अवसर का उपयोग उसकी मात्र निन्दा करने, उसमें दोष निकालने और उसे अपशब्द करने के लिए ही करते हैं। उनके पास उक्त पूर्वकालीन समाज के लिए किसी प्रशंसा, सराहना का कोई शब्द नहीं है और इसके अध्ययन के लिए भी कोई समय उनके पास उपलब्ध नहीं है।

ईसाइयत-पूर्व इतिहास को पिछले कुछ समय से इन्कार, अस्वीकार्य करने

का ईसाई ढंग उतना पैशाचिक, रूखा और भद्दा नहीं रहा जितना मुस्लिमों और प्रारंभिक ईसाई उग्र कट्टरपंथियों का रहा है। आधुनिक ईसाई लोग सभी ईसाइयत-पूर्व इतिहास को असम्बद्ध छोटे-छोटे अंशों का भ्रमित समूह मानकर कलंकित करते, अनाप-शनाप बकवाद करते हैं और उनको ग़ैर-ईसाई, विधर्मी मूर्ति-पूजक, जड़ात्मवादी या शून्य, नाशवादी संस्कृतियों का नाम दे देते हैं।

मानव-भाषा का उद्‌गम, मूल

इन भ्रमित और दुराग्रही पश्चिमी ईसाई विद्वानों ने, यह कल्पना करते हुए कि मानव-भाषा के उद्‌गम का कोई ऐतिहासिक साक्ष्य नहीं है, चार्ल्स डारविन और उसके सहयोगियों की इस धारणा पर निर्भर करना शुरू कर दिया कि मनुष्यों ने जिस-तिस प्रकार, कहीं-न-कहीं, किसी-न-किसी समय भिन्न-भिन्न पक्षियों और पशुओं की ध्वनियों का अनुसरण करते हुए एक भाषा का आविष्कार कर ही लिया होगा।

किन्तु ऐसी धारणा से अनेक जटिल समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं, जैसे—क्या याक (सुर गाय), हिरण, शेर, चीते, ऊँट, गायें, कौए, मोर, हाथी, दरियाई घोड़ा आदि की सहार्थी भाषाएँ निकलीं या सर्वसम थीं? क्या अरबी भाषा में ऊँटों की बिलबिलाहट अधिक है और भारत की संस्कृत भाषा में हाथियों की चिंघाड़ ज्यादा है? किसी भी भाषा में उस क्षेत्र में पाए जानेवाले जीव-जन्तुओं, पशु-पक्षियों की ध्वनियों का संक्षिप्त अनुपात क्या है? अन्य प्रश्न यह भी होगा कि सबसे सक्षम, सामर्थ्यवान् मस्तिष्क धारण करनेवाले जीव मानव को पशुओं की ध्वनियों से अपनी भाषा विकसित क्यों करनी पड़े? ऐसे हँसने योग्य और बेहूदे समाधान सम्मुख आते हैं जब इतिहास के अभाव की, उसके विलुप्त प्रसंगों की पूर्ति का यत्न करने के लिए तथाकथित आधुनिक ईसाई वैज्ञानिकों की धारणाओं द्वारा सहायता प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

इतिहास क्या है?

यहाँ यह समझ लेना आवश्यक है कि इतिहास क्या है? इतिहास वह लेखा, विवरण है जो पूर्वजों द्वारा अपने वंशजों को मौखिक या लिखित रूप में दिया जाता है, सौंपा जाता है, जैसे प्रपितामह द्वारा पितामह को और पितामह द्वारा किसी व्यक्ति के पिता को, तथा यही क्रम बना रहता है।

ईसाइयों और मुस्लिमों ने अपने-अपने विश्वासों, मतों को ग़लत रूप में आदिकालीन, प्रारंभिक जताने के लिए अपने पूर्वजों के इतिहास को जान-बूझकर नष्ट कर डाला। इसी के फलस्वरूप वे पूर्वकालिक लाखों-लाखों वर्ष के इतिहास को ग़ैर-ईसाई, विधर्मी, काफ़िर, अर्थात् खानाबदोश आदिकालीन बताने के लिए कोई शीघ्र उपलब्ध निरर्थक पूजा करनेवाला समूह बताकर उसे किसी भी अध्ययन के अयोग्य घोषित कर देते हैं। अतः भाषाओं की उत्पत्ति जैसे दैनंदिन जीवन को प्रभावित करनेवाले कुछ प्रमुख प्रश्नों के उत्तर देने का मौक़ा जब उनके समक्ष उपस्थित हो जाता है तब वे कुछ उपाय, जुगतवाले उत्तर घड़ लेते हैं जो ऊपर के अनुसार जाँच-परीक्षा करने पर सही नहीं उतर सकते।

ईसाई और मुस्लिम सैद्धांतिक शिक्षण की एक अति अनर्थकारी विशेषता अपने अनुयायियों को उस सभी प्रकार के ज्ञान के प्रति भावुकताशून्य और अभेद्य बना देना है जो उनके रूढ़िवाद को निरस्त करने की सामर्थ्य रखता है। इसी कारण, ऊपर-ऊपर से प्रगतिशील दीख पड़नेवाले ईसाई विद्वान् भी ईसाइयत के प्रारंभिक धर्मान्ध प्रचारकों द्वारा योजनाबद्ध रूप से विनष्ट कर दी गई पूर्ण-रूपेण परिव्याप्त वैदिक सभ्यता के उन चिह्नों को नहीं देख पाए हैं जो पश्चिमी गोलार्द्ध में अभी भी विद्यमान हैं। इन धर्मान्ध प्रचारकों ने प्रत्येक मानव को धर्म-परिवर्तित करने के जोश में, जहाँ तक संभव हुआ, पूर्वकालिक सभ्यता के प्रत्येक अवशिष्ट निशान को ध्वस्त और विनष्ट कर दिया। तीन शताब्दियों के बाद मुस्लिमों ने भी समान रूप से उग्र राक्षसी रोष में उन्हीं का अनुसरण किया।

अंगरेजी और अन्य यूरोपीय भाषाओं के (तथा विश्व की अन्य सभी भाषाओं के) कोश-निर्मातागणों की अपनी-अपनी भाषाओं की उत्पत्ति संस्कृत भाषा से होने की अभिज्ञता का मुख्य कारण यह है कि उन्हें विकृत इतिहास पढ़ाया-सिखाया गया है। ईसाई धर्मान्धों और मुस्लिम उग्रवादियों ने समूचे पूर्वकालिक इतिहास को न केवल धो-पोंछ डाला, अपितु विश्व-इतिहास के विलुप्त और दूषित अंशों को ढकने के लिए एक मनगढ़न्त, झूठे, जाली इतिहास की ईजाद भी कर दी।

जबकि विश्व-भर के मुस्लिम अभी भी सातवीं शताब्दी के अशिक्षित अरब-आदर्शों से मज़बूती से जकड़े पड़े हैं, पश्चिमी ईसाइयों ने इतिहास के अतिरिक्त, विचार और भाषण व शोध-कार्य में स्वतंत्रता प्रदान करके, उसे प्रोत्साहन देकर मानव-कार्यकलाप के लगभग सभी क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति

स्थापित कर ली है।

फिर भी, मैं पश्चिमी बुद्धिजीवियों का विशेष ध्यान इस तथ्य की ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ कि उनके अचेतन मन पर ईसाई गिरजा-सिद्धान्त, रूढ़िवाद की असंदिग्ध पकड़ इतनी पक्की, मज़बूत है कि चाहे कोई ईसाई व्यक्ति कितना ही शिक्षित या प्रगतिशील क्यों न हो जाए, उसका विश्वास बना रहता है कि ईसाई-युग से पूर्व के विश्व का अध्ययन-योग्य कोई इतिहास है ही नहीं। इस दृष्टि से ईसाई लोग उन मुस्लिमों से किसी भी प्रकार श्रेष्ठ नहीं हैं जिनको दुराग्रही, ज़िद्दी रूप से यह घोषित करने का प्रशिक्षण दिया गया है कि सभी शिक्षा (यदि इसे ऐसा कहा जा सके) कुरान और 'हदीस' के रूप में संग्रहीत मुहम्मद के कथनों तक ही सीमित है।

मैं इसीलिए प्रत्येक शिक्षित ईसाई से अनुरोध करूँगा कि वह ईसाइयत के गिरजा-सिद्धान्त के रूढ़िवाद का व्यामोह, जड़िमा त्याग दें और यह जानने की माँग प्रस्तुत करें कि ईसाइयत-पूर्व की लाखों-लाखों वर्ष की मानवता का वह इतिहास क्या था? यह बहाना, मिथ्यावाद अब आगे चालू नहीं रहने दिया जाए कि पश्चिमी देशों में ईसाइयत ही आदि-अंत है, और इस्लाम द्वारा गुलाम बनाए गए देशों, क्षेत्रों में इस्लाम ही आदि-अंत सब-कुछ है। मानवता का लाखों-लाख वर्षों का इतिहास सभी को उपलब्ध हो जाना चाहिए, चाहे किसी भी धर्म का साम्राज्य, प्रभुत्व हो। इस्लाम और ईसाई सिद्धान्तों को अनुमति नहीं दी जानी चाहिए कि वे पूर्वकालिक इतिहास का निषेधाधिकार रखें और पहले का इतिहास किसी को जानने न दें। इस्लाम के अस्तित्व के 1375 वर्ष और ईसाइयत की परम्परा के 1600 वर्ष अत्यल्प कालखण्ड हैं। इन दोनों मत-मतान्तरों को अपने आग्रही कथनों के साथ ही सदैव की छूट नहीं दी जानी चाहिए कि मुहम्मद के पूर्व और जीसस के पूर्व सर्वत्र अंधकार ही अंधकार था।

उक्त धर्मान्ध तोता-रटन्त के घातक परिणाम प्राचीन युगों में संस्कृत भाषा की विश्व-व्यापकता के प्रति सामान्य अज्ञानता में और प्राचीन विश्व-व्यापी संस्कृत-भाषायी सुशिक्षा के सुन्दर भवन के मात्र छोटे-छोटे कंकड़-पत्थर और मलबे के रूप में आधुनिक भाषाओं के बारे में ज्ञान के अभाव में ही प्रतिबिम्बित होते हैं। उक्त अज्ञानता का एक ठोस उदाहरण यह है कि ऑक्सफोर्ड शब्दकोशों के निर्माता इस तथ्य से अनभिज्ञ हैं कि अंगरेजी भाषा संस्कृत भाषा की एक अंकुर मात्र ही है।

मैं यहाँ कुछ ऐसे उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ जिनसे स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार प्रत्यक्षतः प्रगतिशील ईसाई लोग हठधर्मितापूर्वक किसी भी संगत ईसाइयत-पूर्व के इतिहास में झाँकने से अथवा उसे स्वीकार करने से इन्कार कर देते हैं। यह बात इस तथ्य से स्पष्टतः उजागर है कि सभी यूरोपीय और अमरीकी राष्ट्र अपने ईसाइयत-पूर्व के इतिहास के बारे में कुछ जानते ही नहीं हैं। जैसा मैं पहले ही उल्लेख कर चुका हूँ, मैंने जब हारवर्ड विश्वविद्यालय अमरीका के फ्रैंच सभ्यता-विभाग को यह जानने के उद्देश्य से पत्र लिखा कि क्या उन्होंने ईसाइयत-पूर्व के फ्रांस देश के बारे में कोई अध्ययन किया था, तो उनका अवाक् कर देने वाला उत्तर था कि हारवर्ड फ्रांस का किसी भी प्रकार ईसाइयत-पूर्व के देश के रूप में अध्ययन नहीं करता। कहने का अर्थ यह है कि हारवर्ड विद्वानों के लिए तो फ्रांस ईसा की चौथी शताब्दी के पूर्व अस्तित्व में था ही नहीं।

एक अन्य उदाहरण पानसर (पानज़र भी बोलते रहे) नामक एक युवा फ्रांसीसी पुरुष का है जिसे मैं पुणे में मिला था। वह राणाडे भाषा संस्थान के छात्रों को फ्रैंच भाषा का शिक्षण देने अल्पकालीन उत्तरदायित्व पर भारत आया था। मैं जब उससे भेंट करने गया और उससे ईसाइयत-पूर्व के फ्रांस के बारे में कुछ जानने की इच्छा प्रकट की तथा मुझे जो कुछ वैदिक चिह्न प्राप्त हुए थे उनका जब मैंने उल्लेख किया, तब पानसर ने अपने धर्मान्धितापूर्ण कैथोलिक ईसाई की उग्रता में उन सब का प्रतिवाद किया और उस सम्बन्ध में कोई भी चर्चा, बातचीत करने से साफ मना कर दिया। उसके लिए तो फ्रांस मानवता की आदि, प्रथम पीढ़ी से ही कट्टरवादी कैथोलिक ईसाइयत वाला देश था।

एक अन्य उदाहरण सन् 1980 के दशक में नई दिल्ली स्थित इतालवी दूतावास की सांस्कृतिक अतासे उमा मेरिना का है।

नई दिल्ली के एक दैनिक समाचारपत्र में यह सूचना पढ़कर कि उमा मेरिना उक्त संध्या को 'वेदों में अग्नि-पूजा' विषय पर भाषण देंगी, मैं इस आशा से भाषण-स्थल पर पहुँच गया कि राम और कृष्ण के राजसी दरबारों के समान ही यूनानी और रोमन दरबारों में अग्नि-पूजा की परम्परा पर कुछ प्रकाश तो डालेंगी ही।

सभा-स्थल पर उनका व्याख्यान शुरू होने से कुछ मिनट पूर्व ही मैंने उनसे यह जानने के लिए सम्पर्क कर लिया कि क्या वे यूरोपीय देशों में ईसाइयत-पूर्व अग्नि-पूजा के बारे में भी कुछ कहेंगी ? उनकी राय में उनकी ऐसी कोई इच्छा न

थी। स्पष्ट है कि ईसाइयत-पूर्व के यूरोप में वैदिक अग्नि-पूजा प्रचलित होने का उनको कोई ज्ञान ही नहीं था।

मैंने फिर उनसे यह पूछा कि क्या उन्हें मालूम है कि उनके अपने देश के दो नगर 'रोम' और 'रावेन्ना' रामायण के पात्र राम और रावण के नाम पर ही रखे गए थे, और 7-वीं शताब्दी से प्रथम शताब्दी ईसवी पूर्व प्राचीन इतालवी घरों की पुरातत्त्वीय खुदाई में प्राप्त एट्रूस्कन-चित्रों में रामायण-कथा के प्रसंग उत्कीर्ण, चित्रित थे? प्रत्यक्षतः स्पष्ट था कि वे कुछ जानती ही नहीं थीं। इतना ही नहीं, अपनी 1315-पृष्ठीय 'वर्ल्ड वैदिक हेरिटेज' (विश्व वैदिक राष्ट्र का इतिहास—पृष्ठ 1600) पुस्तक में पुनः प्रदर्शित किए गए उक्त चित्रों में से कुछ उनको दिखाए गए तो सुग्रीव की पत्नी-सम्बन्धी विवाद के लिए अपने पिछले पैरों पर खड़े होकर संघर्ष कर रहे वानर-प्रमुख बालि और सुग्रीव को उन्होंने अल्लम-गल्लम, अज्ञातकुल घोड़े समझ लिया।

यहाँ सभी राष्ट्रों के विदेश मंत्रालयों अर्थात् विदेश-विभागों को यह पाठ हृदयंगम कर लेना चाहिए कि भारत जाने वाले दूतावास के अधिकारियों/कर्मचारियों को अपने देश से सम्बन्धित ईसाइयत-पूर्व या इस्लाम-पूर्व वैदिक भूतकाल के बारे में कम-से-कम कुछ जानकारी तो अवश्य होनी ही चाहिए, क्योंकि समस्त विश्व की ईसाइयत-पूर्व की वैदिक संस्कृति संभवतः भारत, नेपाल और अन्य कुछ छोटे-छोटे क्षेत्रों में ही हिन्दुत्व के नाम में अभी भी बची हुई है, जीवित है।

3

भाषा की उत्पत्ति के विषय में वैदिक धारणा

यदि मुस्लिम और ईसाई लोग अपने-अपने मतों को मौलिक, आदि-कालीन, प्रारंभिक बताने के छद्मरूप को कुछ त्याग दें और अहंकार, स्वार्थ का परित्याग कर दें तो वे मानव-जाति की आदि-उत्पत्ति के बारे में कोई भी आविष्कृत सिद्धान्त, चाहे अपनी ओर से हो या फिर चार्ल्स डारविन जैसे किसी जीवशास्त्री की उपलब्धियों को ही उन्होंने स्वीकार, शिरोधार्य किया हो, प्रस्तुत करने के लिए धृष्ट, हठी न रह पाएँगे।

चूँकि इस्लाम और ईसाइयत विगत कालखण्ड के मात्र छोटे-छोटे बच्चे ही हैं, इसलिए अच्छा हो कि वे वैदिक संस्कृति द्वारा दिए गए ज्ञान और अनुभव की धरोहर को मान्य कर लें और इसे ग्रहण करें, क्योंकि मानव-प्राणियों की प्रथम पीढ़ी से अस्तित्व में रहनेवाली संस्कृति यही है। वे वैदिक संस्कृति (अर्थात् हिन्दू-धर्म) को एक समकालीन प्रतियोगी के रूप में न देखें, क्योंकि वैदिक संस्कृति समूची मानवता का श्रीगणेश करनेवाला मौलिक धर्म है। अतः उन लोगों को चाहिए कि वे वैदिक संस्कृति को अपने पूर्वजों की परम्परा के रूप में मुक्त-कंठ से स्वीकार व ग्रहण कर लें, बजाय इसके कि इसे एक प्रतिद्वन्द्वी मानकर इसकी निन्दा या तिरस्कार करें या फिर इससे मुँह मोड़ लें, क्योंकि आगे आनेवाले पृष्ठों में स्पष्ट प्रदर्शित कर दिया जाएगा कि इस्लाम और ईसाई-मत की परम्पराएँ और शब्दावली अतिसुदृढ़ रूप में वैदिक संस्कृति में जड़ें जमाए हैं। इसलिए आइए, हम देखें कि मानवता के प्रारम्भ और इसकी भाषा के बारे में वैदिक परम्परा का कहना क्या है।

वैदिक ग्रंथ सृष्टि के पूर्व से ही अपना वर्णन करते हैं। ब्रह्माण्ड पुराण हमें बताता है कि प्रारम्भ में सर्वत्र अंधकार था और स्थिरता, ठहराव था। कोई ध्वनि नहीं थी और किसी प्रकार की गति भी नहीं थी।

अकस्मात् भगवान् विष्णु एक विशाल सर्पराज की कुंडलियों पर लेटे,

टिके हुए दुग्ध-धवल, फेन-युक्त महासागर के तैरते गगन पर अवतरित हुए। और, उच्च आकाशों के मध्य से 'ओं' का महा-स्वर गुंजरित होने लगा।

विष्णु की नाभि से निकली कमल-नाड पर ब्रह्माजी का आविर्भाव हुआ। तत्पश्चात् प्रजापतियों के रूप में संस्थापक जनकों और मातृकाओं के नाम से ज्ञात संस्थापक माताओं की सृष्टि हुई। मानवता की वह पहली सीढ़ी थी। उन सभी में दैवी गुण विद्यमान थे।

उनको वेद प्रदान किए गए थे जो पृथ्वी पर मानव-जीवन के अनिवार्य मौलिक प्रारम्भिक मार्गदर्शन के लिए विज्ञानों, कलाओं, सामाजिक और पारिवारिक जीवन, प्रशासन आदि से सम्बन्धित समस्त ज्ञान का सार-संग्रह हैं।

वेद संस्कृत-भाषा में होने के कारण वही संस्कृत-भाषा सारी मानवता की प्रथम ईश्वर-प्रदत्त भाषा हुई। वेद उपेक्षित और अज्ञात न पड़े रहें—इसलिए वेदों के आनुवंशिक गायकों की एक परम्परा प्रारम्भ की गई। संस्कृत शब्द का निहितार्थ है कि यह एक सु-नियोजित भाषा है। इसके सभी पर्यायवाची (यथा देवभाषा, गीर्वन वाणी, सुर-भारती आदि) भी इसके ईश्वर-प्रदत्त भाषा होने के संकेतक, द्योतक हैं। इसकी सर्वाधिक व्याप्त 'देवनागरी' लिपि भी इसी तथ्य की परिचायक है कि यह लिपि ईश्वर/देवताओं के घर की, उन्हीं की लिपि है। एक अन्य प्राचीन लिपि, जिसमें संस्कृत-भाषा कुछ अन्य शिलालेखों में लिखी मिलती है, ब्राह्मी लिपि है जिसका निहितार्थ यह है कि इसे ब्रह्मा द्वारा सृजित किया गया था। वह धारणा सत्य नहीं है कि देवनागरी लिपि पर्याप्त बाद के काल की सृष्टि ही है। इस धारणा को कुछ आधुनिक-कालीन पुरातत्त्वशास्त्रियों ने सर्वप्रथम काल के उपलब्ध देवनागरी-शिलालेखों के आधार पर प्रचारित कर दिया था। इस धारणा के विपरीत यह स्मरण रखना चाहिए कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी द्वारा नकल किए गए लगभग सभी संस्कृत-ग्रंथ मात्र देवनागरी में ही हैं। अतः प्रस्तर-शिलालेख के आँकड़ों से यह निष्कर्ष निकालना ग़लत है कि देवनागरी लिपि तुलनात्मक रूप में आधुनिक काल की सृष्टि है। देवनागरी लिपि भी उतनी ही प्राचीन समझी, मानी जानी चाहिए जितने प्राचीन स्वयं वेद हैं, क्योंकि सभी संस्कृत-ग्रंथ सारे भारत के लाखों-लाखों घरों में, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को, हाथ से नकल करके, देवनागरी लिपि में ही अधिकतर, चिर-अनादि, अविस्मरणीय काल से दिए जाते रहे हैं।

इस प्रकार वैदिक परम्परा की मान्यतानुसार मानवता (या कम-से-कम

इसका कुछ भाग) ने अपना जीवनक्रम एक दैवी सर्वज्ञ अवस्था से प्रारम्भ किया, जबकि प्रचलित पश्चिमी धारणा इसे एक जंगली, पाशविक-स्तर से शुरू हुई समझती है।

उक्त तथ्य हमारे इस अनुभव से भी मेल खाता है कि जब कभी एक चिकित्सा अथवा प्रौद्योगिकी जैसे किसी संस्थान के रूप में ज्ञान की किसी शाखा को प्रारम्भ करना होता है तो उसके शिक्षण-प्रबन्ध के लिए पूर्णरूपेण प्रशिक्षित विशेषज्ञ कर्मचारीवर्ग प्रदान करना होता है।

अतः यह अनुमान-जन्य आधुनिक, पश्चिमी विश्वास अ-युक्तियुक्त है कि मनुष्य पहले असंस्कृत, असभ्य वनवासी रहा होगा और फिर उसने पक्षियों तथा जंगली पशुओं की ध्वनियों का अनुसरण कर एक भाषा का निर्माण, विकास कर लिया होगा। यदि सभी पक्षियों और पशुओं को ईश्वर द्वारा उनकी सृष्टि, उनके जन्म से ही उनकी अपनी-अपनी ध्वनि प्राप्त है और परस्पर संवाद, संपर्क हेतु कोई 'भाषा' दैवी रूप में उपलब्ध है, तो मानवता को भी ईश्वर-प्रदत्त भाषा के रूप में संस्कृत-भाषा प्राप्त हुई थी।

इतना ही नहीं, दैवी शक्ति ने इसी के साथ-साथ मानवता को सर्वोच्च ज्ञान के सार-ग्रन्थ अर्थात् वेद भी प्रदान कर दिए जो इसे सांसारिक जीवन-यापन के लिए मार्गदर्शिका पुस्तक के रूप में सहायता, कार्य करें।

चूँकि मानवता ईश्वर को अपना जनक और सृष्टिकर्ता स्वीकार, मान्य करती है, इसीलिए एक अतिस्नेही पिता के रूप में ईश्वर के लिए भी यह सहज स्वाभाविक ही था कि वह भी मानवता को—समस्त मानवों को एक ऐसा सर्वसार-ग्रंथों का समूह देकर सन्नद्ध कर देता कि पृथ्वी पर जटिल और रहस्यों से पूर्ण जीवन-यात्रा में उक्त ग्रंथों से मार्गदर्शन प्राप्त करते रहें। वैदिक संस्कृत-ग्रंथों में यही वैदिक परम्परा अर्थात् इतिहास अभिलिखित, संग्रहीत है।

उक्त धारणा के बारे में एक ही आपत्ति, अविश्वास की यह भावना है कि दैवी शक्ति मानवता को एक स्व-निर्मित भाषा और सर्वोच्च ज्ञान की पुस्तक तैयार-रूप में कैसे दे सकती थी? इसका प्रथम उत्तर तो यह है कि यह एक अभिलिखित इतिहास है। किन्तु दूसरा अधिक विशद, व्यापक उत्तर यह है कि वेदों और संस्कृत-भाषा व देवनागरी लिपि की दैवी उत्पत्ति विश्वास के अयोग्य, अति कल्पनाशील, विचित्र मानकर ही रद्द, निरर्थक घोषित नहीं की जा सकती। क्योंकि, इस संसार में प्रत्येक वस्तु समान रूप में ही विचित्र और रहस्यमयी है।

असीम अन्तरिक्ष, अपरिमाप्य अकल्प्य ऊर्जा से निरंतर जलते रहने वाले असंख्य चमकते महाकाय तारागण, अपनी-अपनी नक्षत्रों की शृंखला-सहित अविराम इधर-उधर दौड़ते-से ये दीर्घकाय पिंड, बिना किसी दृश्यमान अवलम्बन से रहित सभी पिंड, शून्य से प्रकट होनेवाले अदृश्य कीटाणुओं-से विशालकाय पशुओं तक के असंख्य प्राणी जो बिना आदि और बिना अन्त ही एक कभी न समाप्त होनेवाले जुलूस के रूप में बराबर चलते ही रहते हैं—इन सभी को समझ पाना मानवता के लिए परम रहस्य ही है। यदि दैवी शक्ति इस समस्त स्वप्न-चित्र की सृष्टि और उसका रख-रखाव कर सकती है, तो यही शक्ति मानव को पूर्व-निर्मित, तैयार संस्कृत भाषा, सर्वोच्च ज्ञान के सार-ग्रंथ वेद भी प्रदान कर सकती थी, तथा वंशानुवंश क्रमवाली वैदिक पाठ की प्रणाली भी शुरू कर सकती थी। अन्यथा, आप इस तथ्य का क्या स्पष्टीकरण दे सकेंगे कि बिना किसी विवशता के, अथवा प्रत्यक्ष लौकिक प्रेरणा के अभाव में, पीढ़ी-दर-पीढ़ी, (समस्त प्राचीन विश्व में) वैदिक पाठ की प्रणाली हज़ारों-लाखों परिवारों में अनंत और अनन्य रूप से निष्ठापूर्वक चलती रही? इस प्रकार, इस तथ्य को भी एक अतिरिक्त स्थायी, प्रारंभिक रहस्य ही स्वीकार कर लेना चाहिए।

साथ ही, यदि दैवी शक्ति सृष्टि के हर जीवधारियों को अपनी भाषा, ध्वनि और स्वर-शैली प्रदान कर सकती है जैसे कुत्तों का भौंकना, कोयल का कूकना, मधु-मक्खियों की गुंजार और हाथियों की चिंघाड़, तब तो यह शक्ति मानवता को भी प्रारम्भ से ही एक परिष्कृत भाषा—संस्कृत भाषा—प्रदान कर सकती थी।

कुछ विद्वानों की यह काल्पनिक धारणा ग़लत है कि चूँकि 'संस्कृत' शब्द का निहितार्थ एक परिष्कृत भाषा है, अतः यह अवश्य ही किसी पूर्वकालिक अनगढ़ और अपरिष्कृत बोली में सुधार, संशोधन द्वारा ही निर्मित हुई है। संस्कृत शब्द का निहितार्थ अद्वितीय, बेजोड़ भाषा है जो स्वयं दैवी शक्ति ने प्रदान की है—मानव-निर्मित कोई भाषा नहीं। मानवता ऐसी किसी भी वस्तु के निर्माण में अयोग्य, असमर्थ, अक्षम है जो सभी प्रकार से परिपूर्ण हो। यही कारण है कि वस्तुओं की शुद्धता की गारंटी के रूप में ही हम आधुनिक उत्पादों पर यह प्रमाणित, अंकित पाते हैं—"मानव-हाथों से अछूता है।"

समानुरूप शब्द 'प्राकृत' उन सभी भाषाओं के लिए प्रयुक्त होता है जो महाभारत-युद्ध के कारण हुए घोर विनाश के फलस्वरूप संस्कृत भाषा के पतन या

धराशायी हो जाने पर प्रकट हुई। 'प्राकृत' शब्दावली दो संस्कृत-अक्षरों 'प्र-अकृत' से निर्मित है (अर्थात् मूल ईश्वर-प्रदत्त भाषा संस्कृत से घड़ ली गई) अतः हमारा निष्कर्ष उसके बिल्कुल विपरीत है जो कुछ विद्वानों ने अभी तक निकाला है। वे विश्वास करते थे कि किसी पूर्ववर्ती अनगढ़ भाषा से ही परिमार्जन कर संस्कृत भाषा का रूप प्राप्त हुआ है, जबकि हमने निष्कर्ष निकाला है कि विश्व-भर में इधर-उधर बिखरी विभिन्न भाषाएँ और बोलियाँ विश्व-व्यापी संस्कृत-शिक्षा-प्रणाली के ध्वस्त हो जाने के बाद बची संस्कृत भाषा का मलबा, कचरा ही हैं।

तथ्यरूप में तो हम एक परिकल्पना सुझाव के रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं अर्थात् चूँकि संस्कृत एक देवभाषा है अतः संभावना है कि अखिल ब्रह्माण्ड के अन्य ग्रहों पर रहनेवाले मानवों या उसी प्रकार के अन्य संवेदनसमर्थ, सचेतन प्राणी अभी भी अपनी मूलभाषा के रूप में संस्कृत भाषा को ही शिरोधार्य किए हुए हों। अतः उन आधुनिक वैज्ञानिकों को, जो अन्य ग्रहों पर संभावित मानवता के लक्षण जानने के लिए पृथ्वी से रेडियो-संकेत भेजते रहते हैं, चाहिए कि वे अंगरेज़ी या रूसी भाषा के स्थान पर अंतर्ग्रही संपर्क-हेतु, संस्कृत-भाषा को उपयोग में लें, क्योंकि यदि अन्य संसारों में भी संस्कृत-भाषा का मूल उपयोग ध्वस्त हो चुका हो, तो वहाँ की 'प्राकृत' भाषाएँ भी हमारे ग्रह की 'प्राकृत' भाषाओं से भिन्न हो सकती हैं। किन्तु देवभाषा संस्कृत तो वहाँ भी ऐसी ही होगी जैसी यहाँ है। यह निष्कर्ष इस तथ्य से और भी पुष्ट होता है कि यहाँ के संस्कृत-ग्रंथों में एक ग्रह से दूसरे ग्रहों तक की प्राचीन यात्राएँ, परस्पर वार्तालाप और संचार की घटनाएँ अभिलिखित हैं जो सभी संस्कृत-भाषा में ही हैं।

सामान्यतः यह जानकारी नहीं है कि बाइबल में वही इतिहास उल्लेख किया गया है और उसी को स्मरण भी किया गया है। उत्पत्ति-अध्याय पढ़ने के लिए बाइबल को खोलिए। यह कहती है कि ईश्वर की आत्मा जल पर तैरती हुई देखी गई थी। क्या यह कथन उन्हीं संस्कृत-ग्रंथों के समान कथन नहीं है कि भगवान् विष्णु क्षीरसागर में जल पर तैरते हुए अवतरित हुए थे, देखे गए थे?

बाइबल में अंकित है कि ईश्वर ने अपनी छवि, छाया के अनुरूप ही मानव की सृष्टि की थी। प्राचीन संस्कृत-पुराणों में भी उल्लेख है कि मानवों की प्रथम सृष्टि—पीढ़ी में ईश्वरीय प्रतिभा और आकृतियाँ थीं।

बाइबल यह भी कहती है कि सर्वप्रथम मानवता की एक भाषा ही थी।

स्पष्टतः वह भाषा संस्कृत थी।

"सर्वप्रथम शब्द ही था"—बाइबल कहती है। यह भी उस वैदिक परम्परा का पृष्ठांकन, पुष्टिकरण ही है कि सृष्टि का आरंभ उच्च-आकाशों में "ओं" के गुंजरित होते शब्द-निनाद से ही हुआ था।

इस प्रकार उनकी बाइबल में ही अभिलिखित पूर्वकालिक विश्व-व्यापी वैदिक संस्कृति के ऐसे साक्ष्य से भी पश्चिमी विद्वान् अनभिज्ञ हैं, क्योंकि ईसाई शिक्षण ने उनके दिमागों को किसी भी ईसाइयत-पूर्व की वस्तु को ध्यान में लाने से प्रतिरक्षित, वर्जित कर दिया है।

4
मानव-बोली (भाषा) का आदि श्रीगणेश

चार्ल्स डार्विन की कल्पना पर आधारित वर्तमान इस विश्वास की पुष्टि वैदिक इतिहास द्वारा नहीं होती कि मानवता जीवन के विकास की अंतिम उत्पत्ति है।

वैदिक परम्परा के अनुसार तो समस्त सृष्टि एक समय ही उद्भूत है। जैसे कोई नाटक मंच पर पर्दा उठने के साथ ही प्रारंभ हुआ दिखता तो है, किन्तु वह उससे पर्याप्त समय पूर्व ही पूरी तरह अभिनीत हो चुका होता है, ठीक उसी प्रकार धरती पर मानव-जीवन का नाटक भी सृष्टि और जीवन के सभी प्राणियों को समाविष्ट करके ही प्रारंभ हुआ।

सभी प्राणियों में उच्चारण और परस्पर संप्रेषण, संवाद की अपनी-अपनी विशिष्ट नैसर्गिक, जन्मजात सहज प्रकृतियाँ थीं। इसी प्रकार मानवता को भी सबसे पहली पीढ़ी से ही दैवी कृपा से अपनी वाणी-विधा प्राप्त थी। वह बोली संस्कृत में ही थी।

यदि वर्तमान प्रचलित विश्वास को अपना आधार बनाकर हम अपने बच्चों को पक्षियों और पशुओं की ध्वनियों की नकल करके बोलने का शिक्षण लेने को छोड़ दें, तो किसी भाषा को सीख सकना तो दूर, वे स्वयं ही मूक पशु बन जाएँगे। अतः यह विश्वास भ्रांत, भ्रामक है कि मानव की भाषा का उद्गम बोलनेवाले पशु-पक्षियों की आवाज़ों का अनुसरण, नकल करने में हुआ। लगभग 50 वर्ष पहले लखनऊ के पास बीहड़ जंगलों में लगभग 8 वर्ष का मानव (बालक) घूमता-फिरता पाया गया था। प्रारंभिक वर्षों में किसी भी प्रकार के मानव-प्रशिक्षण के अभाव में वह न तो चल ही सका और न ही बोल पाता था।

अपना अनुभव ही देख लें। कोई भी शिशु अपने माता-पिता और अन्य मानवों के बोलने, वार्तालाप से ही अपनी भाषा सीखता है। इसके निकट

रहनेवाले सभी बड़े लोग निरंतर इसे यही सिखाते रहते हैं कि वह स्थितियों को हृदयंगम करे और इसकी कमियों और भावनाओं के अनुसार अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करे। बच्चे बोलना सीख जाते हैं—उनके चारों ओर रहनेवाले व्यक्तियों के ऐसे निरन्तर शिक्षण, साहचर्य से।

भाग्यवश, मध्यकालीन इतिहास में अभिलिखित एक विचित्र भाषायी प्रयोग भी उपलब्ध है। भारत के तीसरी पीढ़ी के मुगल बादशाह अकबर को उत्सुकता की एक विचित्र सूझ थी। उसने यह पता करने का निश्चय कर लिया कि यदि किसी बच्चे को किसी भी प्रकार की मानव-बोली से संपर्क का मौका न दिया जाए, तो वह कौन-सी भाषा का उच्चारण करेगा?

अपनी उक्त विचित्र उत्सुकता का समाधान पाने के लिए अकबर ने नितान्त एकान्तवास में पालने के उद्देश्य से कई माताओं से उनके सद्य-जन्मे दुध-मुँहे अबोध शिशुओं को अलग करा लिया। नौकरों को कड़े आदेश थे कि वे उन शिशुओं को खाना-पिलाना और कपड़े पहनाने का काम पूरी तरह शान्त-वातावरण में—अवाक् स्थिति में करें ताकि किसी भी प्रकार का मानव-स्वर या कोई शब्द-ध्वनि न सुन सकें।

चूँकि अकबर ने हज़ारों जंगली जानवरों और कौओं, कबूतरों, उल्लुओं, तोतों, और कोयलों जैसे अनेकों पक्षियों का प्राणि-समूह इकट्ठा किया हुआ था, इसलिए माना जाता है कि बच्चे पक्षियों का चहचहाना, शेरों और बाघों का दहाड़ना, तथा हाथियों के चिंघाड़ने की विभिन्न आवाज़ों को भी बराबर सुनते रहे। फिर भी, वे समस्त कर्णकटु पशु-ध्वनियाँ भाषायी उपयोगिता के किसी भी प्रकार योग्य सिद्ध नहीं हुईं। नितान्त एकान्तवास में पाले गए वे सभी शिशु पूरी तरह गूँगे, न बोलनेवाले रहे। यद्यपि वे साथ-साथ रहे, तथापि अपनी किसी भी भाषा का विकास नहीं कर सके।

उक्त बेहूदा और क्रूर, फिर भी मूल्यवान प्रयोग उस विश्वास को नकार देता है कि बच्चों को यदि मात्र पशु-पक्षियों की आवाज़ें सुनने का अवसर दे दिया जाए, तो वे बोलना सीख सकते हैं।

परिमाणस्वरूप ही वैदिक परम्परा घोषित करती है कि मानवों की प्रथम पीढ़ी में कम-से-कम ऐसे व्यक्तियों की एक श्रेणी तो थी जिनमें ईश्वरीय-नैपुण्य प्रदत्त था ताकि वे अन्य साथी मानवों को भी सिखा-पढ़ा सकें।

हम भी अनुभव से यही जानते हैं कि अधिक, उच्च पढ़े-लिखे द्वारा ही

कम योग्य व्यक्तियों को ज्ञान प्रदान किया जाता है। इस प्रकार शालाओं और महाविद्यालयों की स्थापना करते समय स्वयं प्राथमिक कक्षा के छात्रों को लिखाने-पढ़ाने के लिए भी उच्च योग्यता-प्राप्त शिक्षण-कर्मचारियों की भर्ती करने का भाव समक्ष रहता है। परिणामतः हम कह सकते हैं कि यह विश्वास, या कुछ वैज्ञानिकों की यह कल्पना पूरी तरह अग्राह्य, अस्वीकार्य है कि मानवी भाषा का उद्‌भव पशु-पक्षियों जैसे अपने से निचले स्तर के जीवधारियों की आवाज़ों की नकल करके हुआ है।

इन सब विचारों के पश्चात् विश्वासयोग्य मात्र एक यही विकल्प रह जाता है कि वैदिक अभिलेख स्वीकार किया जाए कि मानवों की प्रथम, या कुछ प्राथमिक पीढ़ियों में देव-प्रशिक्षित ऋषियों और देवतुल्य प्रतिभावाले विद्वानों, पंडितों का वर्ग अवश्य था जिनमें विश्व-भर में स्थापित ऋषियों—गुरुओं के गुरुकुल-आश्रमों, शालाओं में वैदिक संस्कृत-शिक्षा प्रदान करने के अग्रदूत थे, जैसे धन्वन्तरि (चिकित्सा-शास्त्र की सभी शाखाओं में विशेषज्ञ), मनु (विधि-प्रणेता), विश्वकर्मा (महास्तरीय वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी-विशेषज्ञ), गंधर्व (सभी ललितकलाओं के मूर्धन्य पंडित) और अनेक अन्य शैक्षणिक विद्वान् तथा वेदों के गायक-वाचक यथा अगस्त्य, वसिष्ठ, विश्वामित्र, गर्ग, भार्गव, कश्यप, पुलस्तिन, वाल्मीकि, याज्ञवल्क्य आदि।

शिक्षा में लेखन-विधि भी समाहित है। क्योंकि, जब तक कुछ लिखा न जाए, उसे पढ़ा ही नहीं जा सकता। अतः यह विश्वास या धारणा ग़लत है कि लेखन-प्रणाली काफ़ी बाद में शुरू हुई।

वेदों का गायन एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक किया गया। केवल इस तथ्य का यह निहितार्थ नहीं है कि उनका गायन करना ही पड़ता था, क्योंकि लेखन-कला उस समय तक ज्ञात नहीं थी। जिस किसी भी बात को शब्दशः उच्चरित करना होता है उसे सर्वप्रथम लिख लेना पड़ता है, और फिर हृदयंगम करने हेतु कई-कई बार पढ़ना, दोहराना पड़ता है।

चित्रों, रेखांकनों, उत्कीर्णांशों या धार्मिक ग्रंथों में भगवान् विष्णु की नाभि से प्रकट होते हुए ब्रह्मा के दृश्य-निरूपणों में परम्परागत रूप से ब्रह्माजी के हाथों में से एक में वेदों, ग्रंथ-समूह को धारण किए हुए दर्शाया जाता है। वे जिस ग्रंथ-समूह को हाथ में ऊँचा धारण किए होते हैं उस पर देवनागरी लिपि में वेद अंकित होता है। चूँकि वेद ब्रह्माण्ड-ज्ञान की सार-संहिता है, इसलिए एक पीढ़ी से

दूसरी पीढ़ी तक उनकी स्वर-शैली विभिन्न आठ शैलियों में बनाए रखी गई थी (अब काफ़ी सीमा तक अज्ञात है और इसीलिए व्यवहार में नहीं है)। सही उच्चारण और लम्बा, लघु या मध्यम स्वर, शब्दों, अक्षरों या धातुओं का अर्थ परिवर्तित कर देते थे।

एक उच्च तकनीक, जटिल और ज्ञान के सर्वसार-भंडार वेदों के संदर्भ में लेखन-कला की पूर्वकल्पना तो आवश्यक ही है। किसी नाटक का मामला ही देख लें जहाँ प्रत्येक नायक वा नायिका को अपनी भूमिका के वार्तालाप की प्रत्येक पंक्ति को शब्दशः उच्चारण करना होता है। कहने का अर्थ यह है कि नाटक का मुख्य प्रयोजन अभिनीत होना ही है। किन्तु उसका निहितार्थ यह नहीं है कि नाटक कभी लिखा ही नहीं जाता, या फिर नाटककारों को लेखन-कला का ज्ञान ही नहीं होता। इसके विपरीत, नाटक एक ऐसी विकसित कला है कि इसकी तुलना में लेखन-कला एक मूल, प्रारंभिक काम-काज ही है।

अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ईश्वर ने मानव की प्रथम पीढ़ी से ही मानवता को वेद-समूह और (संस्कृत भाषा) बोलने और लिखने की योग्यता प्रदान कर दी थी जिससे पृथ्वी पर मानवता की जीवन-लीला का शुभारंभ व विकास वृद्धि को प्राप्त होता रहे।

ऐसा चमत्कार कैसे संभव है—इस बात से हमें अब अधिक परेशान होने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि, जैसा हम पहले ही सार-रूप में प्रस्तुत कर चुके हैं, सम्पूर्ण अनन्त-असीम ब्रह्माण्ड और इस पर क्षणिक, अल्पकालिक मानव-अस्तित्व सभी तो पूर्णतया अथाह, अज्ञेय रहस्य ही है। हम जैसे उस सबको ज्यों-का-त्यों स्वीकार कर लेते हैं, उसी प्रकार हमें भी अन्य सभी बातों के समान ही, वेदों—उनकी भाषा संस्कृत और उनकी लिपि देवनागरी को भी ईश्वर-प्रदत्त ही स्वीकार कर लेना चाहिए।

मधु-मक्खियों का मामला लें। शहद बनाने की उनकी प्रक्रिया एक ऐसी उत्कृष्टता है जिसकी नकल करना तो दूर, जिसकी संकेत-लिपि ज्ञात कर पाना भी मनुष्य के लिए आकाश-कुसुम है। यदि मानवता ऐसा ही शीरा, चाशनी-सा द्रव्य बनाना चाहे, तो इसे भारी मशीनरी वाली एक पूरी फैक्टरी की ज़रूरत पड़ेगी। और फिर भी यह मानव-निर्मित उत्पादन उस उपचार-गुण से युक्त नहीं होगा जो प्राकृतिक शहद में होता है। मधु-मक्खी अपनी छोटे अवयवों के अतिरिक्त अन्य किसी भी उपकरण की सहायता के बिना ही शहद का निर्माण, उत्पादन करती है।

बिल्लियाँ और कुत्ते, साँप और नेवले, साँप और गरुड़ जन्म से ही शत्रुभाव रखते हैं। इनको ऐसा कौन बनाता है? क्या यह कोई मनुष्येतर शक्ति नहीं है? इसी प्रकार हम यह क्यों नहीं मान लेते कि मानवता की सर्वप्रथम पीढ़ी से ही सभी मानवों को ईश्वर द्वारा वेद, संस्कृत भाषा और वेदों के मौखिक रूप में गायन की सुविधा भी प्रदान की गई थी।

5
संस्कृत भाषा की प्राचीन काल में विश्व-व्यापकता

वैदिक परम्परा के अनुसार इस पृथ्वी पर जीवन का यह वर्तमान चक्र लगभग 20000 लाख वर्ष प्राचीन है। विचित्र संयोग है कि आधुनिक वैज्ञानिक भी अब लगभग इसी संख्या पर पहुँच गए हैं।

सभ्यता के वर्तमान प्रचलित चक्र की प्राचीनता, पुरातनता की वैदिक संगणना कोई काल्पनिक मोटी-सी संख्या नहीं है, अपितु यह वर्षानुवर्ष आ-तिथि की गई एक यथार्थ, सही संख्या है और प्रत्येक वैदिक पंचांग की भूमिका के भाग में अंकित की जाती है। चूँकि भारत में आज कई प्रान्तीय भाषाएँ हैं, इसलिए वैदिक पंचांग प्रत्येक वर्ष उन सभी भाषाओं में प्रकाशित होते हैं। और फिर भी, प्रचलित भूगोलीय सभ्यता की प्राचीनता के बारे में उनकी गणनाएँ समान ही होती हैं। इसका कारण है असंख्य मौलिक वैदिक संस्कृत-ग्रंथों में 'सूर्य-सिद्धान्त' अर्थात् सूरज से सम्बन्धित समस्त नियम-उपनियम के नाम से सर्वोत्तम साहित्य-सार का होना।

चिर अ-विस्मरणीय प्राचीनता वाला वह पाठ-सार हमारे सौर-मंडल और ब्रह्माण्ड के अन्य ग्रहों की, संपूर्ण सौर-प्रणाली की गणितीय संरचना प्रस्तुत कर देता है।

वेद, ईश्वर द्वारा, मानवता को प्रारंभ में ही अर्थात् 20000 लाख वर्ष पूर्व दे दिए गए थे। शब्दशः उनका गायन तब से निरन्तर चला आ रहा है। इसके परिणामस्वरूप 'वैदिक युग' का अर्थ मानवता की प्रथम पीढ़ी का काल, समय ही होना चाहिए।

और फिर भी अभी तक 'वैदिक युग' का अर्थ अयुक्तियुक्त और मनचाहे ढंग से 1200 ई० पू०, 5000 ई० पूर्व या अनुमान लगानेवाले अन्य विद्वान् की कल्पना पर आधारित कोई ऐसी ही संख्या माना गया है। किन्तु ऐसी किसी भी मनमौजी तरंग या वैयक्तिक कल्पनाओं के लिए कोई मान्यता या गुंजाइश नहीं

होनी चाहिए जब वैदिक परम्परा में स्पष्ट कहा गया है कि मानवता की प्रथम पीढ़ी को ही वेद सौंप दिए गए थे।

तब से तीन युग बीत चुके हैं। सर्वप्रथम 'कृत युग' था अर्थात् ईश्वर द्वारा तैयार किया गया युग जिसमें सम्पूर्ण सृष्टि की गई थी और भौतिक संसार की रचना हुई थी।

दूसरा 'युग' त्रेता था। संस्कृत भाषा की 'त्रि' (तृ) धातु से ही अंगरेज़ी भाषा की संख्या 'थ्री' (तीन) बनी है। उक्त युग के इस नामकरण का कारण यह है कि यह युग मूल दैवी-पूर्णता या सर्वोत्तमता के मात्र तीन भागों से ही प्रारंभ हुआ था।

संयोगवश, यह वैदिक ब्रह्माण्ड तन्त्र-व्यवस्था का एक नियम भी दर्शा देता है, क्योंकि ब्रह्माण्ड तो एक अतिविशालकाय यन्त्र, मशीन है। इसका कार्य, गुणवत्ता में प्रत्येक अनुवर्ती वर्ष में क्षरित हो जाता है, यद्यपि प्रत्येक आनेवाला युग अपने पूर्ववर्ती युग से चौथाई अवधि कम का होता जाता है।

वर्तमान युग कलियुग है। इसकी अवधि 4,32,000 वर्ष है। इससे पूर्व 'द्वापर युग' था जो दुगुनी अवधि अर्थात् 8,64,000 वर्ष का था।

इससे भी पहले 'त्रेता युग' था जो 12,96000 वर्ष का था, जबकि प्रारंभिक 'कृत युग' 17,28000 वर्ष का था। बीच की अवधि में कुछ संक्रमण कालखण्ड हैं। इस प्रकार यद्यपि प्रत्येक आनेवाला युग एक-चौथाई अंश अर्थात् 4,32,000 वर्षों से छोटा हो जाता है, तथापि यह प्रत्येक आनेवाले युग में द्रुततर गति का होता रहता है। यही बात मानव-निर्मित मशीनों में भी हम देखते ही हैं, जैसे एक मोटरसाइकिल जब बिल्कुल नई होती है, तो दीर्घकाल तक निर्बाध चलती है। बाद के वर्षों में इसमें सुधार-मरम्मत जल्दी-जल्दी करनी पड़ती है।

तीसरा युग 'द्वापर' मूल दैवी उत्तमता के मात्र दो भागों, अंशों (अर्थात् 50%) से ही प्रारंभ होता है। यह इसके शीर्षक में ही प्रतिबिम्बित होता है जहाँ 'द्वा' का निहितार्थ दो भाग, अंश अर्थात् 50% इसके मूल की अवशिष्ट अच्छाई है।

हम अब चौथे युग में हैं जिसे 'कलियुग' नाम से भी पुकारते हैं। यह युग कुल मिलाकर 4,32,000 वर्ष का है। इनमें से लगभग 5092 वर्ष बीत चुके हैं। इस युग में, प्रत्येक वर्ष बीतने के साथ-साथ संघर्ष, अपराध, अनैतिकता, भ्रष्टाचार, युद्ध और प्राकृतिक आपदाएँ क्रमशः बढ़ते जाने का अनुमान है।

मानवता चातुर्वर्णी वैदिक सामाजिक प्रणाली के साथ प्रारंभ हुई। 'ब्राह्मण' लोग वे थे जो उच्चतम शैक्षणिक ज्ञान और मानवीय कार्यकलापों में श्रेष्ठतायुक्त होते हुए भी समस्त धन-दौलत और सांसारिक इच्छाओं-आकांक्षाओं का परित्याग कर देते थे। उन्हें स्वैच्छिक दान आदि से इतना पर्याप्त मिल जाता था कि वे संयमी, मिताहारी और सात्त्विक जीवन व्यतीत कर सकें।

दूसरा वर्ग 'क्षत्रियों' का था जो राज्य-शासन का प्रबंध करता था और जिसे राज्य-शासन की प्रतिरक्षा का दायित्व सौंपा हुआ था। संपूर्ण आय का छठा भाग राज्य-व्यवस्था के लिए उनके पास चला जाता था।

एक अन्य सामाजिक वर्ग 'वैश्य' अर्थात् व्यापारियों और साहूकारों का था। उनको भी प्रशिक्षित किया गया था कि वे अपने मूल धन-निवेश में मात्र छठा अंश ही जोड़, बढ़ा सकते थे। उनके परम्परागत लालन-पालन-शिक्षण से किसी अन्य लाभ की वृत्ति बहिष्कृत होने के कारण मिलावट, कालाबाज़ारी, और अनुचित लाभ कमाने पर सुरक्षात्मक उपाय प्रयोग में ला रखे थे।

चौथे वर्ग में शिल्पी (कारीगर), मददगार और उपर्युक्त तीन वर्गों के सहायक जैसे मैकेनिक, कुम्हार, बढ़ई, परिचारिकाएँ, प्रसाविकाएँ, नाई, सुनार, लुहार और ठठेरे आदि गिने जाते थे। ये सभी शूद्र कहलाते थे।

वैदिक समाज के व्यावसायिक समूहों के अनुसार ऐसे चार स्थूल समस्तरीय विभाजन थे।

ऐसे ही प्रत्येक व्यक्ति के जीवन-क्रम के भी आयु-अनुसार चार-खंडीय विभाजन थे। मानव-जीवन की अवधि की कल्पना 100 वर्ष निर्धारित करते हुए इसका प्रथम एक-चौथाई भाग अर्थात् 25 वर्ष शिक्षा-ग्रहण में व्यतीत करना होता था। ऐसी शिक्षा न केवल मूल गणित, लेखन व पठन और व्यावसायिक निपुणता तक ही सीमित थी अपितु निजी और सामाजिक जीवन में दृढ़ साधुता, औचित्य व ईमानदारी भी सिखाई जाती थी। आधुनिक युग की असीमित धन-लोलुपता व 'किसी भी साधन से जल्दी-से-जल्दी अमीर बन जाओ' की प्रवृत्ति, संयमित वैदिक लालन-पालन-शिक्षण में पूरी तरह निषिद्ध, वर्जित थी। माता के समान ही, समाज में हर किसी को निःस्वार्थ भाव से अपनी भूमिका का निर्वाह करना चाहिए—आग्रह, ज़ोर इस बात पर था।

व्यवसाय में परिवर्तन, बदल जाने की अनुमति भी निश्चित रूप में थी, किन्तु उसके लिए इच्छा, प्रेरणा का उदय, कुछ हड़पने की भावना से न होकर

समाज के प्रति श्रेष्ठतर, निःस्वार्थ सेवा करने की हार्दिक इच्छा से होना ज़रूरी था। किसी अन्य स्थान या व्यवसाय में श्रेष्ठतर सेवा प्रदान करने की चाहना के अभाव में व्यक्ति को अपने आनुवंशिक व्यवसाय में ही बने रहने को कहा जाता था जिससे सामाजिक ताना-बाना और व्यक्ति के जीवन का अपना क्रम टूट-फूट न सके।

व्यक्ति के जीवन का वह चौथाई भाग उसे (बालक को 5 से 8 वर्ष की आयु में हो जाने पर) गुरु के आश्रम—विद्यालयों में गुज़ारना पड़ता था जब कि शिक्षा और वार्तालाप का माध्यम संस्कृत थी।

कन्या को परिवार के वृद्ध पुरुषों और महिलाओं द्वारा घर पर ही शिक्षा दी जाती थी। वहाँ भी प्रातः शैया-त्याग से रात्रि में शयन-काल तक मात्र संस्कृत ही प्रयुक्त होती थी।

व्यक्ति के जीवन का अगला चौथाई भाग परिवार के ही व्यवसाय में, या फिर समाज को अधिक अच्छी सेवा प्रदान करने के लिए परिवर्तित भूमिका में, विवाहित गृहस्थ के रूप में व्यतीत किया जाता था।

तीसरा चौथाई भाग घर से बाहर गुज़ारना होता था जिससे बड़ी होकर आने वाली नई पीढ़ी अपना दायित्व सँभाल सके। बड़ी आयु वाली पीढ़ी को निर्लिप्त-भाव पनपाना है और परिवार के साथ लगावों व झंझटों से दूर रहकर परिपूर्ण समाज-सेवा हेतु जीवन की तैयारी करनी है। यह तीसरा वानप्रस्थ अर्थात् कुटिया-वातावरण में घर से दूर—वन में रहना कहलाता था।

व्यक्ति के जीवन का अंतिम चौथाई भाग एक संन्यासी के रूप में बिताना होता था जब व्यक्ति परिवार के वातावरण से पूरी तरह विलग हो जाता था, 'आनन्द' प्रत्यय-सहित अपना नया नाम भी धारण कर लेता था जो एक आनन्दप्रद, वियुक्त मानस की स्थिति का द्योतक होता था, जहाँ एक व्यक्ति सामाजिक सागर में न पहचाने जानेवाली बूँद बन जाता है—अपने कौशल, वैयक्तिक सामर्थ्य या झुकाव के अनुरूप क्षेत्र में एक स्वैच्छिक प्रचारक, अध्यापक, मार्गदर्शक या सहायक के रूप में अपना जीवन बिताने के लिए।

कर्तव्य-समाहित वैदिक समाज का यह समान चातुर्वर्णीय और 'आश्रमीय' विभाजन, जो प्रारंभिक 'कृत युग' में सर्वश्रेष्ठ स्थिति में था, युगों के बीतते-बीतते, क्रमशः पतनावस्था की ओर अग्रसर होता गया। हम विद्यमान चार-चक्रीय युगों के अंतिम युग में हैं। यह 'कलियुग' संघर्ष-काल होने के कारण, जो 25% क्षरण

के साथ प्रारंभ हुआ, इसमें नैतिकता का पतन दिखाई देगा जिससे धन कमाने या निजी और सामाजिक गुणों में खुला महायुद्ध हो सकेगा।

वैदिक व्यवस्था के अन्तर्गत व्यक्ति का जीवन दैवी-भूमिका-निर्वाह के निमित्त है—ऐसा विचार किया जाता है, जो किसी भी प्रकार के निजी लोभ की प्रेरणा बिना ही कार्य की पूर्ति के रूप में करना होता है। उक्त सामाजिक वैदिक व्यवस्था के ताने-बाने की स्पष्ट समझ अंगरेज़ी भाषा की, अथवा तथ्यरूप में किसी भी भाषा की वैदिक, संस्कृत धातुओं के रूप में जानने के लिए आवश्यक है, क्योंकि आज ब्रिटिश द्वीपों के नाम से ज्ञात क्षेत्रों में और विश्व के अन्य भागों में जो भी लोग युगों-युगों से रहते चले आए हैं वे उसी वैदिक, संस्कृत-परम्परा के उत्तराधिकारी हैं। इसी के फलस्वरूप, उनकी भाषाएँ और रीति-रिवाज अवश्यंभावी रूप में अपने वैदिक, संस्कृत मूल स्रोत को प्रदर्शित कर देते हैं। फाउलरों के समान ऑक्सफोर्ड अंगरेज़ी शब्दकोश के सम्पादक और आधुनिक युग की अन्य भाषाओं के संपादक चूँकि इस तथ्य से अनभिज्ञ रहे हैं कि संस्कृत मानवता को ईश्वर-प्रदत्त सर्वप्रथम भाषा है, अतः वे तो सदैव व्युत्पत्ति-संबंधी भयंकर और भौंडी ग़लतियाँ करने के दोषी रहेंगे ही। इस पुस्तक का विषय इसी तथ्य की विशद व्याख्या करना है।

6
भाषाओं का इतिहास

भाषाओं का इतिहास समझने के लिए व्यक्ति को मानव-इतिहास की समुचित, सही समझ होनी चाहिए। मानव-इतिहास का वह ज्ञान अभी तक दोष-पूर्ण रहा है। इसी कारण विभिन्न भाषाओं का मूल अनुचित रूप में निर्धारित किया गया है, अथवा यह कहना अधिक सही होगा कि विभिन्न भाषाओं का मूल अभी तक पूरी तरह से अज्ञात रहा है, या फिर अटकल-पच्चू और ऊटपटाँग ढंग से ही स्पष्ट किया गया है।

पूर्व में उल्लेख किए गए अनुसार संस्कृत भाषा और वैदिक संस्कृति मानवता की प्रारंभिक आनुवंशिकताएँ रही हैं। परिमाणतः तीनों (कृत, त्रेता और द्वापर) युगों में सारा साहित्य संस्कृत भाषा में ही था।

सुविख्यात ऋषियों द्वारा ज्ञान की सभी शाखाओं में शिक्षा देने के लिए चलाए जा रहे आश्रम-विद्यालयों (गुरुकुलों) में प्रयुक्त सभी पाठ भी संस्कृत में ही थे।

सामाजिक व्यवस्था की उक्त वैदिक संस्कृत-प्रणाली ही विश्व-भर में सर्वत्र निर्बाध रूप में महाभारत-युद्ध तक, अर्थात् सन् 5561 ईसा पूर्व तक चलती रही। उक्त प्रणाली के अंतर्गत वैदिक विश्व के अंतिम सार्वभौम सम्राट् कौरव और पांडव थे।

उनके पारस्परिक युद्ध में करोड़ों की जनसंख्या वाली अक्षौहिणी सेनाएँ सम्मिलित हुईं जिनके सैनिक जैविक और आणविक शस्त्रास्त्रों का प्रयोग करते थे। यही कारण है कि उक्त महान् विश्व-युद्ध मात्र 18 दिन में ही समाप्त हो गया।

उक्त महायुद्ध के कारण हुआ सर्वनाश इतना घोर, भयंकर था कि इसने वैदिक-संस्कृत की प्रशासनिक, सामाजिक और शैक्षिक पद्धति को परी तरह झकझोर दिया, ध्वस्त और धराशायी कर दिया।

परिणामस्वरूप, शिक्षा के माध्यम के रूप में, विश्व-व्यापी रूप में बोले जानेवाली भाषा के रूप में, और प्रशासन के माध्यम के रूप में, संस्कृत भाषा की भूमिका अकस्मात् ही समाप्त हो गई। लगभग सभी गुरुकुलों की व्यवस्था, उनके द्वारा शिक्षा-प्रबंध समाप्त हो गया। संचार के माध्यम समाप्त, ठप्प हो गए थे और कुछ-कुछ लोगों के समूह अलग-थलग होकर भिन्न-भिन्न क्षेत्रीय खण्डों में रहने लगे। यह प्रक्रिया ऐसी थी मानो कोई बड़ा काँच, शीशा टूटकर चकनाचूर हो जाए, तो कुछ टुकड़े बड़े और कुछ छोटे भी इधर-उधर बिखर जाते हैं।

विश्व-व्यापी वैदिक देव-वाद के छिन्न-भिन्न होने के अनुक्रम में पश्चिम में स्टोइक्स (Stoics), ईसेनीस (Essenese), रमण (अर्थात् रोमन्स) और क्रिश्चियन्स (अर्थात् कृष्णीयन्स) तथा बाद में अरब-वासियों में इस्लाम के रूप में व पूर्व में बौद्धधर्म व जैनधर्म जैसे कई मत-मतान्तर स्थापित हो गए। ये सभी समूह महाभारत-युद्ध से पूर्व के दिनों में एक केन्द्रीभूत शिक्षा-माध्यम के रूप में संस्कृत का प्रयोग करने के स्थान पर क्रमिक रूप में ह्रासमान होती संस्कृत का ही उपयोग करते रहे।

विभिन्न क्षेत्रीय उच्चारण, बलाघात, ढंग और अपने-अपने पृथक्तावादी समूहों की अलग-अलग आवश्यकताओं ने स्वयं को वैदिक धातुमूलों से दूरी पर जाते हुए विभिन्न भाषाओं और बोलियों को जन्म दिया। इस प्रकार हर भाषा संस्कृत भाषा की ही एक शाखा, अंकुर या छिन्न-भिन्न रूप है।

इसी प्रकार विश्व-व्यापी वैदिक साम्राज्य भी सीरिया, असीरिया, बेबिलोनिया, मेसोपोटामिया, यूनान, रोम, मिश्र, चीन और हिन्दुस्तान (भारत) जैसे राज्यों में विभक्त हो गया। यही वह बिन्दु है जहाँ से आधुनिक इतिहास आरंभ होता है। इस क्रम में पूर्वकालिक इतिहास के लाखों-लाखों वर्षों की अनदेखी कर दी जाती है।

उक्त वैदिक संस्कृत-प्रणाली, जो क्रमिक रूप में विश्व के अन्य भागों से समाप्त होती हुई और सिन्धु के आस-पास ही प्रचलन में शेष रह गई थी, सिन्धु-धर्म उपनाम हिन्दू-धर्म के नाम से प्रचलित हो गई।

ऊपर प्रस्तुत विश्लेषण हमें इतिहास की अनेक गुत्थियाँ सुलझाने में सहायता प्रदान करता है, जैसे वैदिक संस्कृति की उत्पत्ति, प्राचीन विश्व-व्यापकता; हिन्दू-धर्म से संबद्ध वैदिक-संस्कृत वाङ्मय / ग्रन्थों में कहीं भी हिन्दू या हिन्दू धर्म का उल्लेख नहीं, फिर भी विश्वव्यापी वैदिक संस्कृति किस कारण

हिन्दू-संस्कृति के रूप में नाम-प्रचारित हो गई, किस प्रकार सभी भाषाएँ संस्कृत के ही टूटे-फूटे रूप हैं, किस प्रकार सभी धार्मिक मत-मतान्तर वैदिक संस्कृति के ही अंकुर-शाखाएँ हैं, और समस्त विश्व में वैदिक संस्कृति के चिह्न, अवशेष क्यों मिल जाते हैं ?

प्राचीन विश्व-व्यापी वैदिक संस्कृति और आज के हिन्दू धर्म में अभिन्नता होने के कारण कई महानुभाव यह ग़लत निष्कर्ष भी निकालने की भूल कर सकते हैं कि विश्व के अन्य भागों में वैदिक संस्कृति का प्रचार-प्रसार करने के लिए भारत से हिन्दू राजाओं और महाराजाओं ने ही प्रस्थान किया था। तथ्यतः तो यह बिल्कुल विपरीत ही हुआ, अर्थात् भारत में अवशिष्ट विश्व-व्यापी वैदिक-संस्कृति का नाम हिन्दू-धर्म हो गया।

चूँकि वैदिक संस्कृति, आधुनिक काल में, भारत और भारतीय लोगों तक ही अधिकतर सिमटकर रह गई है, इसलिए अधिकांश लोग ग़लत निष्कर्ष निकाल लेते हैं कि राम और कृष्ण जैसे अवतारों का जन्म भारत में हुआ था और उनके जीवन की सारी घटनाएँ भारत तक ही सीमित थीं।

ऐसी भ्रान्त धारणाओं के उपजने का कारण यह था कि मूल रूप में विश्व-व्यापी आयामों वाली वैदिक संस्कृति सिकुड़ती गई और अधिक बड़े रूप में मात्र भारत में ही सिमटकर रह गई। परिणामस्वरूप, राम और कृष्ण के जन्म से मृत्यु-पर्यन्त प्रसंगों को केवल भारत के विभिन्न स्थलों से मेल खाता हुआ निर्धारित कर दिया गया। समय बीतने के साथ-साथ स्वयं 'भारतवर्ष' शब्द का भ्रांत अर्थ किए जाने का भी उक्त परिणाम था। भारत एक प्राचीन वैदिक शासक था जो संपूर्ण विश्व का सम्राट् था। अतः भारतवर्ष शब्द का अर्थ सम्पूर्ण भूमण्डल था। किन्तु समय गुजरने के साथ ही जब वैदिक संस्कृति का अर्थ हिन्दुस्तान के हिन्दू-धर्म से लगाया जाना भ्रामक रूप से प्रारंभ हो गया, तब भारतवर्ष शब्द मात्र भारत के संदर्भ में ही उपयोग में लाया जाने लगा।

महाभारत-युद्ध के बाद संस्कृत-शिक्षा में अवरोध तथा संस्कृत-भाषी लोगों का भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में बिखराव व पृथकता ने संस्कृत भाषा के विभिन्न उच्चारणों व स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप शब्द-निर्माण को जन्म दे दिया। परिणामस्वरूप, मानव-विश्व की प्रत्येक भाषा संस्कृत की ही एक निकट की या दूर की संतान, वंशज है। अंगरेज़ी भी उन्हीं में से एक है।

चूँकि ऑक्सफोर्ड शब्दकोशों के संकलनकर्त्तागण, न केवल अंगरेज़ी शब्दों

के अपितु स्थान-वाचक नामों और निजवाची नामों के संपादक भी, उक्त मौलिक सत्य से सुखद रूप में पूर्णतः अनभिज्ञ हैं, इसलिए उन लोगों ने ग़लत व्युत्पत्तियाँ दे दी हैं, अंकित कर दी हैं।

सर रोजर इल्लियट की ओर से मुझे जो (पूर्व-उल्लिखित) उत्तर मिला था, उसने 'ऐतिहासिक साक्ष्य' के आधार पर प्रचलित ऑक्सफोर्ड शब्दकोश के व्युत्पत्ति-मूलक स्पष्टीकरणों को ठीक, सही, न्यायोचित ठहराया था। किन्तु हम अब उसी ऐतिहासिक साक्ष्य को चुनौती दे रहे हैं जिससे यह पता चल जाए कि शब्दकोश-निर्माण के अतिरिक्त भी खगोलशास्त्र, धातुविज्ञान, औषधचिकित्सा-शास्त्र, पुरा-विज्ञान और निर्माण-कला जैसे ज्ञान के अनेक अन्य क्षेत्रों में भी रूढ़िवादी पंडिताऊपन ने भयंकर भूलें की हैं। इसलिए हम सुझाव देते हैं कि सभी भाषाओं के शब्दकोश-निर्मातागण, अच्छा है कि अपने शब्द-व्युत्पत्ति-मूलक स्पष्टीकरण को पुनः प्रस्तुत, निर्धारित कर दें ताकि वे, जहाँ तक संभव हो, संस्कृत-धातुओं के अनुरूप हो जाएँ।

दृष्टान्त के रूप में हम 'हीब्रू' (हब्रू) भाषा का उदाहरण लें। 'जुडैका ज्ञानकोश' (यहूदी विश्व ज्ञानकोश) 'हीब्रू' (हब्रू) शब्द के मूल का स्पष्टीकरण देना प्रारम्भ करता है, किन्तु अनजाने ही मात्र आंशिक स्पष्टीकरण प्रस्तुत करके इतिश्री कर लेता है। यह स्पष्ट करता है कि प्रथम अक्षर 'ही' (ह) देवता के नाम का संक्षिप्त, आदि अक्षर है। किन्तु वह किस देवता का नाम है, यह कोश व्याख्या, विस्तार नहीं करता। इसके विद्वान् या तो अनभिज्ञ हैं या फिर यहूदीवाद, यहूदी धर्म के वैदिक मूल को स्वीकार करने के अनिच्छुक हैं। ईसाइयत और इस्लाम भी, इसी प्रकार, अपने वैदिक मूल को बताने, उजागर करने से झिझकते हैं। उनमें से हर एक ईश्वर से सीधे-अवतरित होने का दावा करने का इच्छुक है चाहे उनके मत-मतान्तर हज़ार वर्ष से कुछ काल ही अधिक पुराने हैं जबकि वैदिक संस्कृति की प्राचीनता कम-से-कम 20000 लाख वर्षों तक की है।

'ही' (ह) अक्षर 'हेरी' (हरि) अर्थात् भगवान् विष्णु के लिए है। भगवान् विष्णु ही ब्रह्माण्ड का मूलाधार हैं। अगला अक्षर 'ब्रू' संस्कृत-धातु है जिसका अर्थ वाणी, भाषा, बोलना है। परिणामस्वरूप 'हीब्रू' (हब्रू) शब्द उस भाषा का द्योतक है जिसे 'हेरी' (हरि) अर्थात् विष्णु अर्थात् उसके अवतार कृष्ण ने बोला था।

इससे 'हीब्रू' भाषा के कोशकारों को भी इस बात को शिरोधार्य कर लेना

चाहिए कि उनकी भाषा के प्रधान-स्रोत के रूप में संस्कृत भाषा को मान्यता देने की नितान्त आवश्यकता है।

चूँकिं अरबी भाषा हीब्रू भाषा की सेमेटिक-सहोदरा है और चूँकि इस्लाम काबा में पूर्वकालिक वैदिक संस्कृति की अपहृत उपशाखा है, इसलिए अरबी भाषा और इस्लामी धार्मिक शब्दावली के कोशों को भी अपनी व्युत्पत्ति संस्कृत-भाषा से ही खोजनी चाहिए। और यहाँ भी इतिहास-संबंधी उनका दोषपूर्ण ज्ञान अरबों और मुस्लिमों को उक्त विषय में उनके वैदिक सांस्कृतिक और संस्कृत-भाषायी मूलों से पूर्णरूपेण अनभिज्ञ रखता है।

तथ्य-रूप में तो, सत्य और ज्ञान के सभी भक्तों की जानकारी में इस बात को लाने की आवश्यकता है कि ईसाइयत और इस्लाम जैसे मत-मतान्तरों की क्षुद्र भावनाएँ तथा बौद्धमत, साम्यवाद व यहूदी धर्म के राजनैतिक झुकाव उनके अपने विश्वासों से परे एक-समान वैदिक वंश की ओर देखने से रोकते हैं। वे सभी पाखण्ड करते हैं और ऐसा दर्शाते हैं कि वे मानवता की पहली पीढ़ी से ही अस्तित्व में हैं। वे यह तथ्य भूल जाते हैं कि उनके मत-मतान्तर हज़ार साल से कुछ वर्ष ही अधिक काल के हैं, जबकि वैदिक संस्कृति को मूल रूप से करोड़ों-अरबों वर्ष हो चुके हैं। इस प्रकार, यह स्पष्ट द्रष्टव्य है कि साम्प्रदायिक निष्ठा सत्यज्ञान के शोध और उसकी उपलब्धि में किस प्रकार अवरोधक का कार्य करती है।

7
विश्व वैदिक संप्रभुता

चूँकि ईसाई और मुस्लिम धर्मान्ध उग्रवादियों ने पूर्वकालिक सारा इतिहास नष्ट कर डाला था, इसलिए इस्लाम और ईसाइयत द्वारा पैरों तले रौंदे गए क्षेत्रों के लोगों को उक्त शून्य, रिक्त स्थान को भरने के लिए डार्विन जैसे भौतिकशास्त्रियों और जीवशास्त्रियों की कपोल-कल्पनाओं पर निर्भर होना पड़ा।

इसी के साथ-साथ, जो लोग इस्लाम और ईसाइयत में परिवर्तित कर दिए गए थे उन्हें बार-बार शिक्षा दी गई थी कि वे अपनी वैदिक आनुवंशिकता को भूल जाएँ और इसीलिए ऐसे धर्म-परिवर्तित विशाल समूहों को ब्रह्माण्ड की सृष्टि से ही संस्कृत-ग्रंथों में अंकित वैदिक इतिहास से सर्वथा अछूता, अनभिज्ञ, दूर ही रखा गया।

इससे पूर्व-अध्यायों में सार-रूप में प्रस्तुत किए गए उक्त इतिहास के अनुसार मानवता का आदि-प्रारम्भ वेदों, संस्कृत भाषा, ज्ञान की सभी शाखाओं में ईश्वरीय निपुणता और एक संयुक्त विश्व-संप्रभुता के साथ हुआ था।

उक्त विश्व-व्यापी आदिकालीन वैदिक परम्परा का असीम विशाल प्रमाण हमारे इस युग में भी उपलब्ध है जो हम इसके बाद अंशों में व्याख्या-सहित प्रस्तुत करेंगे।

आइए, हम सर्वप्रथम 'संप्रभुता' पर विचार करें। वैदिक परम्परा के अनुसार, भगवान् विष्णु उपनाम हेरी (या हरि) संपूर्ण ब्रह्माण्ड के संप्रभु, अधिष्ठाता हैं। अतः इस धरती तक सीमित संप्रभु सम्राट् अपने साम्राज्य पर शासन करने के लिए उक्त ब्रह्माण्ड के स्वामी के अधिकार में साझीदार होना चाहते हैं। परिणामस्वरूप वैदिक संस्कृति के अन्तर्गत (जो मुख्यतः भारत में अभी भी हिन्दू धर्म के रूप में बची हुई है) प्रत्येक सम्राट् पूरी विनम्रता और तत्परता के साथ अपने लौकिक शासन का प्रबन्ध भगवान् विष्णु के प्रतिनिधि या उनके सहायक

के रूप में करने का आत्म-बोध रखता है।

सम्राटों का दैवी अधिकार

यूरोपीय इतिहास के विद्यार्थियों को ज्ञात है कि अधिकांश यूरोपीय देशों में मुक्त, बे-रोक, निर्बाध राजतंत्र था। शताब्दियों के कालखण्ड में निरंकुश अत्याचारों का प्रतिरोध करते हुए, लोगों ने, प्रजाजनों ने कुछ विशिष्ट अधिकार माँगे। समय-समय पर बढ़ती गई उन माँगों के कारण संप्रभुता घटती-घटती मात्र नाम के लिए ही अध्यक्ष, प्रधान में बदल गई (जैसे संयुक्त साम्राज्य या ग्रेट ब्रिटेन में) या सम्राट्-पद बिल्कुल समाप्त हो गया और 'जनता का राज'-प्रणाली स्वीकृत हो गई (जैसे फ्रांस में)।

उस दीर्घकालीन संघर्ष के मध्य यद्यपि सभी यूरोपीय लोग ईसाइयत में धर्म-परिवर्तित हो गए, फिर भी उनके सम्राट् उन पर शासन करने के अपने दैवी अधिकार का स्मरण करते रहे और उसका आग्रह भी करते रहे। कारण, उनकी परम्परा वैदिक परम्परा ही थी। क्या यह उनकी वैदिक धरोहर, पैतृक व्यवस्था का अकाट्य प्रमाण नहीं है?

यूरोपीय सम्राटों द्वारा जोर दिए गए राज करने के दैवी अधिकार का स्पष्टीकरण ऊपर व्याख्या किए गए वैदिक अनुसरण के अनुरूप ही किया जा सकता है।

आइए, हम अब अंगरेज़ी के 'किंग' (King) शब्द पर विचार करें। चूँकि अंगरेज़ी भाषा के 'सी' अक्षर का उच्चारण कभी 'स' से होता है (जैसे सिविल और सेन्टर में) और कई बार 'क' होता है (जैसे कॉट, कट, क्रिकेट में), अतः 'किंग' शब्द के आदि अक्षर 'क' के स्थान पर 'सी' रख दें और इस 'किंग' शब्द को 'सिंग' लिख दें, जैसा पुरानी अंगरेज़ी में होता था। अतः आज जिसका प्रचलित रूप 'किंग' है वह प्राचीन काल में 'सिंग' लिखा जाता था (और उसका उच्चारण भी 'सिंग' ही होता था।)

अब यह स्मरण करने की बात है कि वैदिक (चक्रवर्ती) सम्राट् अपने नामों के अन्त में 'सिंह' प्रत्यय, जो शेर का पर्याय है, अवश्य ही जुड़ा रखते थे, जैसे मानसिंह, जगतसिंह, उदयसिंह आदि।

उक्त प्रत्यय उच्चारण में पतित होता हुआ आधुनिक काल में 'सिंघ' के रूप में ही बचा रह गया। भारत के पंजाब क्षेत्र में सभी सिख व्यक्ति

आवश्यकीय रूप में उक्त 'सिंघ' प्रत्यय अपने नाम के साथ जोड़कर रखते हैं, क्योंकि हिन्दुत्व की सेना के रूप में उनसे अपेक्षित था कि वे मुस्लिम आक्रान्ताओं और सुलतानों के भय, यातनाओं और अत्याचारों के विरुद्ध शेरों—सिहों के समान लड़ेंगे, संघर्ष करेंगे।

चूँकि प्राचीन ब्रिटेन वैदिक साम्राज्य का भाग ही था, इसलिए इसके सम्राट् भी उसी प्रत्यय को अपने साथ लगाए रहे। तथापि अंगरेज़ी नामों में उक्त प्रत्यय की वर्तनी का उच्चारण 'सिंग' रहा 'सिंघ' की बजाय (जैसा आधुनिक भारत में है)। समय बीतने के साथ-साथ अंगरेज़ी में 'सिंग' लिखा जाने वाला वह संस्कृत-शब्द 'सिंह' अंगरेज़ी में 'किंग' लिखा जाने लगा। इस प्रकार यह देखा जा सकता है किस प्रकार 'किंग' शब्द वैदिक, संस्कृत-धरोहर का है चाहे कुछ भिन्न, विकृत उच्चारण और वर्तनी लिये हुए है।

आइए, हम अब 'सोवरेन' (Sovereign) शब्द पर विचार करें। यह स्पष्टतः संस्कृत यौगिक शब्द 'स्व' (स्वयं या स्वयं का 'अपना' अर्थ-द्योतक) और 'रेन' अर्थात् 'राजन' अर्थात् 'राजा' है। अतः यह संस्कृत यौगिक शब्द 'स्व-राजन' है जो एक शाही, राजसी अधिपति का द्योतन करता हुआ अंगरेज़ी में 'सोवरेन' उच्चारण किया जाता है।

इसी का पर्याय 'सुज़रेन' (Suzerain) भी देख लें। यह भी उसी संस्कृत यौगिक शब्द 'स्व-राजन' का विकृत, भ्रष्ट वैकल्पिक उच्चारण ही है।

इससे व्युत्पन्न 'सुज़रेनटी' (Suzeranty) शब्द में भी संस्कृत-प्रत्यय 'इति' अर्थात् 'ति' अर्थात् 'इस प्रकार' है अर्थात् परम, निर्विवाद, बे-रोक सत्ता का द्योतक—यह इस शब्द का अर्थ हुआ।

अंगरेज़ी 'रीगल' (Regal) शब्द संस्कृत के 'राजा' शब्द से व्युत्पन्न है। इस प्रकार, अंगरेज़ी भाषा में इसका उच्चारण 'राजल' होना चाहिए था। किन्तु अंगरेज़ी वर्णमाला में अक्षर 'जी' व 'ज' प्रायः भ्रष्टरूप में ही उच्चारण किए जाते हैं। अक्षर 'ग' (ध्वनि) को भी 'जी' बोलते हैं। 'जिनेरेटर' (Generator) शब्द में उक्त उच्चारण कुछ अंश तक बना हुआ है। किन्तु 'गैदर' (gather, इकट्ठा करना) शब्द में अक्षर 'जी' बिल्कुल ही भिन्न उच्चारण किया जाता है। इससे व्यक्ति को यह समझने में सहायता होगी कि किस प्रकार 'रीगल' अंगरेज़ी शब्द तथ्यतः 'रीजल' अर्थात् 'राजल' शब्द है जो संस्कृत 'राजा' शब्द से ही है।

इसका पर्याय 'रॉयल' (Royal) भी संस्कृत का 'रायल' शब्द है। क्योंकि

संस्कृत में शब्द 'राय' और 'राजा' का समान अर्थ है। यह सम्राट् के दुर्ग के द्योतक 'राजगढ़' और 'रायगढ़' शब्दों से या फिर 'शिवराया' और 'शिवराजा' जैसे शब्दों से स्पष्ट हो जाएगा, जहाँ शिवा अर्थात् शिवाजी सम्राट् से मतलब है। इस प्रकार संस्कृत भाषा में रायपुर (उपनाम राजपुर), रायसेन (उपनाम राजसेन), रायरत्न (उपनाम राजरत्न) और इसी प्रकार के शब्दों का विशाल भंडार, आधिक्य है।

गदा, चोब अंगरेज़ी परम्परा में राजसी सत्ता और अधिकार के प्रतीक के रूप में अभी तक चली आ रही है। जब राष्ट्राध्यक्ष अपने औपचारिक सम्बोधनं के लिए संसद की ओर प्रस्थान करते हैं तब इस गदा को उनसे आगे लेकर चलने की प्रथा है। उक्त परम्परा सुप्रसिद्ध महाकाव्य रामायण के भगवान् राम के दिनों से विश्व-भर के अनेक देशों में अभी तक चली आ रही है, क्योंकि भगवान् राम को एक आदर्श कठोर, न्यायप्रिय, नेक और दयालु शासक माना जाता है जिनके आगे-आगे, सभी राजकीय समारोहों में, उनके गदाधारी हनुमान चला करते थे।

ब्रिटेन में सम्राट् या साम्राज्ञी का अंगरक्षक सैन्यदल संतरे के रंग के कुरते, कंचुक की वस्त्र-भूषा में रहता है। इसका कारण है कि यह भारत में वैदिक रंग है। युद्ध में जानेवाले क्षत्रिय वीर योद्धा विशेष रूप में केसरिया वेशभूषा धारण करते थे, क्योंकि उक्त रंग लौकिक प्रलोभनों या आकर्षणों से विलगता और निःस्वार्थ सेवा का द्योतक है।

रोमन लोग भी जो रमण (रामन) हैं अर्थात् राम के अनुयायी हैं, युद्ध के लिए संतरे (या केसरिया) रंग की वेश-भूषा ही धारण करते थे ताकि सच्ची वैदिक क्षत्रिय योद्धाओं की परम्परा में रक्त सोखनेवाली उनकी पोशाक में रक्त सूख जाए और सत्कार्य के निमित्त किए जानेवाले संघर्ष में उनके संकल्प, मनोबल को दुर्बल, क्षीण न कर सके।

आज जिनको ब्रिटिश द्वीप के नाम से जाना जाता है, वहाँ की अंतिम स्मरणीय साम्राज्ञी बोडिसिया (Bodicia) थी। यह वही महिला थी जिसने रोमन आक्रमणकारियों के विरुद्ध स्थानीय, देशी सैन्य टुकड़ियों का नेतृत्व किया था। वह वैदिक परम्परा में ही रथ पर आरूढ़ होती थी। उसका बोडिसिया नाम भी संस्कृत का यौगिक शब्द 'बुद्धि-ईशा' अर्थात् 'दिव्य-बुद्धि' है।

ब्रिटेन उपनाम 'ब्रिटैनिया' शब्द संस्कृत भाषा का 'बृहत्-स्थानीय' शब्द है जो चहुँ ओर समुद्रों के मध्य कुछ बड़े द्वीपों अर्थात् भूमि का द्योतक है।

अंगरेज़ी शब्द 'सी' (Sea, सागर, समुद्र) संस्कृत पर्यायवाची समुद्र अर्थात्

सागर का संक्षिप्ताक्षर है।

'वैस्ट मिन्स्टर एबे' (West Minster Abbey) में रखी हुई शाही सिंहासनी कुर्सी के चारों पैरों में चार स्वर्ण के शेरों की आकृतियाँ हैं। संस्कृत शब्दावली में राजगद्दी को सिंहासन अर्थात् शेर की बैठक कहा जाता है क्योंकि एक सिंह अर्थात् सिंघ उपनाम एक 'सिंग' अर्थात् 'किंग' को इस पर मुकुट धारण कराया जाता है और राजगद्दी के शेरों की आकृतियों की सहायता से सम्बल प्राप्त होता था।

फ्रांसीसी परम्परा में सम्राट् को 'रोई' (उच्चारण में रुवा) कहा जाता है जबकि साम्राज्ञी को 'रेनि' पुकारते हैं। फ्रैंच शब्द 'रोइ' (उपनाम रुवा) स्पष्टतः संस्कृत शब्द 'राया' है जबकि 'रेनि' (रन की ध्वनि में उच्चरित) संस्कृत-शब्द 'राजनी' का भिन्न रूप है जो आधुनिक भारतीय भाषाओं में (जो मान्य रूप में संस्कृत से ही व्युत्पन्न हैं) 'रानी' के रूप में अक्षुण्ण है जो फ्रैंच शब्द 'रेनि' के पर्याप्त निकट है।

फ्रांस के एक उत्तर-कालीन राज-परिवार 'बोरबौन' (Bourbon) ने 'वीरता, शौर्य का सूर्य' अर्थ-द्योतक 'वीरभानु' सम्मान अंगीकृत किया हुआ था। हिन्दी और बँगला जैसी आधुनिक भारतीय भाषाओं में 'वीरभानु' 'बीरभानु' उच्चारण किया जाता है जो फ्रैंच भाषा में 'बोरबौन' का रूप धारण कर बैठा है।

संस्कृत वैदिक परम्परा में सम्राट् की वीरता सूर्य की चमक-दमक, उसकी प्रकाशमयी आभा से, प्रतीक-रूप में, सादृश्य बताई जाती थी जैसा प्रतापादित्य उपनाम विक्रमादित्य शब्दों से स्पष्ट देखा जा सकता है जो वीरभानु के पर्यायवाची हैं।

रोमन परम्परा और रोमन साम्राज्य, दोनों के नाम राम से उद्भूत हैं जो आदर्श, दन्तकथा-समूह के वैदिक शासक हुए हैं।

राम और/या रामन/रमण शब्दों का रोम या रोमन शब्दों जैसा 'ओ'-ध्वनि-प्रधान उच्चारण यूरोप में सामान्य, प्रचलित है। जैसा कि संस्कृत शब्द 'नासा' का उच्चारण 'नोस' (नोज़, Nose) और 'गा' का उच्चारण 'गो' (जाना) से और 'पापह' से 'पोप' में परिलक्षित किया जा सकता है। स्वयं भारत में भी संस्कृत-शब्दों का बंगला उच्चारण भी यूरोपीय भाषाओं की भाँति ही, जैसा अभी दिखाया गया है, बहुत मात्रा में 'ओ'-ध्वनि प्रधान है।

रोमन-राजवंश का सूर्य-चिह्न भी इसका राम-परम्परा का होने का एक अन्य

संकेतक है क्योंकि राम सूर्य-वंश का एक वंशज ही था।

किसी के भव्य स्वागत में लाल-दरी (कालीन/पट्टी) बिछाने का प्रायः वर्णन किया जाता है, क्योंकि यह वैदिक राजवंशी रंग था।

यूरोप में शाही मानोपाधियाँ जैसे केसर/सीज़र, (Caesar), कैसर (Kaiser) और ज़ार (Czar) सभी वैदिक मूलोद्भव हैं। वे संस्कृत शब्द 'ईश्वर' या 'केसरी' का भ्रष्ट उच्चारण हैं। संस्कृत में 'ईश्वर', 'परमशक्तिमान प्रभु' या 'श्रेष्ठतर' का द्योतक है क्योंकि 'ईश' का अर्थ प्रभु और वर का अर्थ महान् या श्रेष्ठ होता है। इसलिए वैदिक परम्परा में सम्राट्, राजाधिराज को 'ईश्वर' पुकारते थे या उक्त शब्द से सम्बोधित करते थे। यदि अंगरेज़ी शब्दों 'सीज़र', 'कैसर' और 'ज़ार' में शुरू अक्षर 'सी' या 'के' निर्ध्वनि, ध्वनिहीन मान लिया जाए तो शेष शब्द संस्कृत का 'ईश्वर' रह जाएगा।

संस्कृत का 'स' अक्षर (ईश्वर में जैसे) यूरोपीय और सेमिटिक उच्चारण में प्रायः 'ज़' बोला जाता है। उदाहरण के लिए 'इस्रायल' (Israel) का उच्चारण 'इज़रायल' किया जाता है।

फ्रांसीसी पर्यटक-जौहरी टेवरनियर (Tavernier) ने संस्मरण में 'ताज' (महल) को 'तास' (Tas) कहा है।

'काहिरा' स्थित 'अल-अज़र' विश्वविद्यालय तथ्य रूप में अल 'ईश्वर' अर्थात् 'दैवी' उपनाम 'दिव्य' शिक्षा की पीठ है।

वैकल्पिक रूप में वैदिक संप्रभु सम्राट् 'केसरी' अर्थात् सिंह, शेर भी कहलाता था। यदि अंगरेज़ी शब्दों केसर, कैसर और ज़ार के प्रारंभिक 'सी' या 'के' अक्षरों का उच्चारण किया जाए, तो वे सभी शाही यूरोपीय मानोपाधियाँ सिंह के द्योतक संस्कृत के शब्द 'केसरी' के रूपान्तर ही होंगे जैसा वैदिक राजाधिराज से अपेक्षित था और जो सिंह-सदृश साहस का मूर्तिमन्त रूप बनने को प्रशिक्षित किया जाता था।

8
विश्व वैदिक धर्मविज्ञान—ईश्वर-मीमांसा

सु-संगठित मानवता ने अपने आदिकाल से ही एक सामान्य वैदिक देव-विज्ञान का अनुसरण किया। स्वयं 'थियोलॉजी' (Theology) शब्द संस्कृत-भाषायी यौगिक शब्द है। यूरोपीय शब्द 'थियोस' (Theos) संस्कृत शब्द 'देवस्' अर्थात् 'देव' का अपभ्रंश, अशुद्ध उच्चारण है। इसका अर्थ 'ईश्वर' अथवा 'देवत्व' है।

'लॉजी' (logy) प्रत्यय संस्कृत-शब्द 'लग' का 'ओ'-ध्वन्यात्मक उच्चारण है जिसका अर्थ 'से संबंधित', 'से संयुक्त,' 'से जुड़ा हुआ', या 'संबंधित'-'के बारे में' है।

परिणामतः 'थियो, लाजी' शब्द 'देवलग' है जिसका अर्थ 'देव या ईश्वर से सबंधित ज्ञान या विषय' है।

पाठकों को संस्कृत 'लग' अर्थात् 'लॉजी' का मूलार्थ भली-भाँति समझ लेना चाहिए जैसा ऊपर स्पष्ट किया गया है, क्योंकि इस शब्द का बायोलॉजी (Biology), एस्ट्रॉलॉजी (Astrology), फ़िज़ियॉलॉजी (Physiology), न्यूमेरॉलॉजी (Numerology), साइकॉलॉजी (Psycology), और इसी प्रकार के अन्य शब्दों में बहुत व्यापक उपयोग किया गया है।

वैदिक धर्म-मीमांसा अर्थात् हिन्दू धर्म की तुलना इस्लाम या ईसाइयत जैसे संकुचित मत-मतान्तरों से नहीं करनी है, और न ही उनसे संभ्रम में पड़ना है।

वैदिक धर्मविज्ञान किसी ऐसी रहस्यमयी, आदि आध्यात्मिक शक्ति, सत्ता का अस्तित्व, मान्य / स्वीकार करता है जिसने ब्रह्माण्ड की सृष्टि की है। किन्तु वह सत्ता आवश्यकीय रूप में कोई वैयक्तिक ईश्वर होना ज़रूरी नहीं है। यह तो मात्र स्वतः सृजनात्मक और विनाशक विधि भी हो सकती है जो किसी भी प्रकार के आह्वान-अभिचार, अनुपम-विनय या प्रार्थना से वश्य नहीं है।

फलस्वरूप, वैदिक देव-शास्त्रीय मीमांसा में आस्तिक व नास्तिक, दोनों ही

समाविष्ट, विद्यमान हैं। ये दोनों अंगरेज़ी शब्द भी 'थीस्ट' (Theist, आस्तिक) और 'अथीस्ट' (Atheist, नास्तिक) संस्कृत भाषा के ही हैं। थीस्ट संस्कृत का देव-अस्ति शब्द है अर्थात् वे लोग जो विश्वास करते हैं कि ईश्वर है। 'अ-थीस्ट' शब्द संस्कृत का 'अ-देव-अस्ति' शब्द है अर्थात् वे व्यक्ति जो विश्वास करते हैं कि कोई ईश्वर नहीं है।

'नहीं' अथवा 'किसी के अभाव का द्योतक' उपसर्ग 'अ' एक संस्कृत-भाषायी विधि है जो अंगरेज़ी में सामान्य रूप से प्रयोग में आती है। जैसे 'अमोरल' (Amoral, अनैतिक, निर्नैतिक) शब्द में।

'नास्टिक' (Gnostic), या 'अ-नास्टिक' (A-gnostic) समस्रोतीय सजातीय शब्द पूर्णरूपेण संस्कृत-शब्द हैं। ईश्वर में विश्वास रखनेवालों के लिए आधुनिक संस्कृत में 'आस्तिक' शब्द सामान्य प्रयोग है और 'नास्तिक' शब्द उन व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त होता है जो ईश्वर के अस्तित्व से इन्कार करते हैं।

'नास्टिक' (गूढ़ज्ञानवादी) शब्द संस्कृत-यौगिक 'ज्ञ-आस्तिक' है जहाँ प्रथम अक्षर 'ज्ञ' अर्थात् 'ग्न' में 'ज्ञ' शब्द 'ज्ञान' या 'ज्ञान' की धातु, मूल है जिसका अर्थ ज्ञान, विश्वास या चैतन्य है। इसलिए 'नास्टिक' से निहितार्थ उस व्यक्ति से है जिसे ईश्वर के अस्तित्व में श्रद्धा या विश्वास है। इसके विपरीत 'अनास्टिक' वह व्यक्ति है जो ईश्वर के अस्तित्व में कोई श्रद्धा या विश्वास नहीं रखता।

उक्त दोनों शब्द पूर्णतया संस्कृत के होने पर भी संपादक-वृंद फाउलरों ने उनको यूनानी मूल का बताया है।

यहाँ यह भी सूचित कर देने की आवश्यकता है कि यूनानी सभ्यता स्वयं ही वैदिक सभ्यता थी और इसलिए यूनानी भाषा संस्कृत का एक विकृत रूप ही है। सार-रूप में तो ऐसे इतिहास के ज्ञान का अभाव ही वह कारण है जिससे फाउलरों ने व्युत्पत्ति-मूलक ऐसी हास्यास्पद ग़लतियाँ, भूलें की हैं।

हम अब इस पुस्तक में अंगरेज़ी शब्दों के संस्कृत-भाषा-मूलक शब्द बताने तक ही स्वयं को मुख्यतः सीमित रखेंगे, बजाय इसके कि हर बार बताएँ कि ऑक्सफोर्ड शब्दकोश में उन शब्दों की व्युत्पत्ति क्या उल्लेख की गई है। उक्त शब्दकोश ने जहाँ कहीं अंगरेज़ी शब्दों की व्युत्पत्ति संस्कृत-शब्दों से स्वीकार कर ली है, हम उसकी सराहना करते हैं। किन्तु चूँकि उसी शब्दकोश ने ऐसी व्युत्पत्तियों को अत्यन्त कम शब्दों में और बहुत कठिनाई से ही मान्य किया है, अतः हमारा प्रयत्न रहेगा कि हम बता दें कि अंगरेज़ी शब्दों का मुख्य स्रोत और

बहुत व्यापक रूप में संस्कृत-भाषायी शब्दों से ही है।

वैदिक धर्ममीमांसा-विषयक अपनी चर्चा पर पुनः आते हुए यह स्पष्टतः ध्यान में कर लेना चाहिए कि यद्यपि 'हिन्दू धर्म' वैदिक संस्कृति का आधुनिक पर्याय है, फिर भी अधिकांश लोग यह भ्रांत विश्वास करते हैं कि हिन्दू धर्म (अर्थात् वैदिक संस्कृति) इस्लाम, ईसाइयत, या बौद्ध धर्म जैसा ही संकुचित, विशिष्टवर्गीय धर्म है।

यहाँ यह समझ लेने की आवश्यकता है कि वैदिक संस्कृति (उपनाम हिन्दू धर्म) मानवता का मातृवत् विश्वास, आदि-विश्वास है, न कि ऊपर लिखे गए नामों जैसा संकुचित धर्म, क्योंकि यह किसी पर भी कोई सिद्धान्त बलात् लागू नहीं करता। यह आस्तिक अथवा नास्तिक, सभी सिद्धान्तों, सभी विचारों को समाविष्ट करता है। यह प्रार्थना अथवा उपासना के किसी भी विशिष्ट प्रकार का आग्रह नहीं करता और व्यक्तियों को किसी भी प्रकार विवश या नियंत्रित नहीं करता कि वे किसी विशिष्ट देवदूत/पैग़म्बर या धर्म-ग्रंथ के प्रति ही अपनी एकांतिक, एकमात्र अनन्य निष्ठा रखें। यह तो प्रत्येक मानव को पूर्णः स्वतंत्र रखता है कि वह पूरी तरह अपने आस्तिकवादी या अ-आस्तिकवादी (नास्तिकवादी) विश्वासों का अनुसरण, तदनुसार आचरण कर सके। हिन्दू धर्म अर्थात् वैदिक संस्कृति ने सद्-आचरण के कुछ प्रतिदर्श और नियमों की सिफ़ारिश मात्र की है ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपने साथी-प्राणियों के प्रति निःस्वार्थ सेवा का पूर्णतया संतुष्ट और शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत कर सके।

परिणामतः हिन्दूधर्म को बहुदेव-वाद या मूर्तिपूजा के रूप में समान समझना ग़लत है। वैदिक संस्कृति जिन आस्तिक व नास्तिक पद्धतियों और विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है, उसमें एकेश्वरवाद, बहु ईश (देव) वाद, मूर्तिपूजक, और ग़ैरमूर्तिपूजक, आस्तिक व नास्तिक, तथा आप अन्य जो भी हों, सभी समाविष्ट हैं। जैसे अनेक बच्चों की माता, जब तक वे बच्चे आपस में मिल-जुलकर रहते हैं और अपने साथियों को उपयोगी सेवा, सहयोग प्रदान करते हैं तब तक उक्त माता अपने बच्चों की विविधतापूर्ण प्रवृत्तियों, प्रतिभाओं और योग्यताओं-कुशलताओं पर सहज गर्व, गौरव अनुभव करती है, उसी प्रकार वैदिक संस्कृति भी सभी मत-मतान्तरों, विश्वासों और रीति-रिवाजों के प्रति सम्मान और सहिष्णुता रखती है जब तक इनके अनुयायी लोग संतोषी, सहायक और शांत जीवन व्यतीत करते हैं। देव-धर्मशास्त्र, आध्यात्मिक अथवा धार्मिक

शब्दावली की व्युत्पत्ति-मूलकता पर विचार करने से पूर्व हमने पूर्वोक्त विचारधारा-सम्बन्धी स्पष्टीकरण प्रस्तुत करना आवश्यक समझा।

'क्रिश्चियनिटी' शब्द को जीसस क्राइस्ट द्वारा प्रारंभ किया गया धार्मिक विश्वास या सिद्धान्त ग़लत ही समझा गया है। क्योंकि जीसस क्राइस्ट तो काल्पनिक, मिथ्या अस्तित्व है। ऐसा कोई व्यक्ति कभी हुआ ही नहीं। अति व्यापक रूप से ईसाइयत की घोषणा करनेवाले लगभग सभी पश्चिमी देशों से सैकड़ों शोध-प्रकाशनों में तथा 'क्रिश्चियनिटी इज़ कृष्णनीति' (क्रिश्चियनिटी कृष्णनीति है) तथा 'वर्ल्ड वैदिक हेरिटेज' (विश्व वैदिक राष्ट्र का इतिहास) नामक मेरे अपने ग्रंथों में भी इस विषय पर पर्याप्त विवेचन किया जा चुका है।

उक्त मूल दोष, भूल-चूक के कारण कोई आश्चर्य नहीं है कि (अंगरेज़ी-सहित) सभी यूरोपीय शब्दकोशों में सभी धार्मिक शब्दावली के व्युत्पत्तिमूल-विषयक स्पष्टीकरण उलटे-पुलटे, गड़बड़ हो गए हैं।

यूनानी शब्द 'कृष्टोस' संस्कृत के 'कृष्णस' (क्रिसनोस) अर्थात् भगवान् कृष्ण का भ्रष्ट, अशुद्ध उच्चारण था। भगवान् कृष्ण महाभारत-युद्ध (सन् 5561 ई० पू०) में (मुख्यतः अर्जुन के रथवाहक मार्गदर्शक के रूप में) सम्मिलित हुए थे।

यदि क्रिश्चियनटी जीसस क्राइस्ट द्वारा स्थापित या उनके नाम पर स्थापित सचमुच ही कोई धर्म होता तो बौद्ध धर्म (अंगरेज़ी में बुद्धिज़्म—बुद्ध-इज़्म) और कम्यूनिज़्म (साम्यवाद) के अनुकरण पर इसका नाम भी क्राइस्ट-इज़्म या जीसस-इज़्म होता।

उपर्युक्त से स्पष्ट हो जाना चाहिए कि क्राइस्ट-नीति अर्थात् क्रिश्चियनिटी 'कृष्णनीति' का अशुद्ध उच्चारण है। परिणामतः तथाकथित क्रिश्चियनिटी को अपने मूल धर्मग्रंथ 'भगवद् गीता' पर आ जाना, लौट आना चाहिए—बाइबल को त्यागकर, जो न तो कृष्ण द्वारा ही लिखी गई है और न ही क्राइस्ट द्वारा।

विलियम डूरन्ट ने अपने 11-खण्डीय विश्व-विख्यात महाग्रंथ 'स्टोरी ऑफ सिविलाइज़ेशन (सभ्यता की कहानी) में विस्तारपूर्वक विवेचन किया है कि किस प्रकार शताब्दियों तक अग्रणी यूरोपीय ईसाई विचारकों ने अति दृढ़तापूर्वक विश्वास किया कि जीसस क्राइस्ट कोई व्यक्ति था ही नहीं—यह तो कल्पित व्यक्ति-शीर्ष था जिसकी जीवन-गाथा मात्र कल्पना, मनगढ़न्त कथा ही है।

संस्कृत भाषा में 'ईशस कृष्ण' (अर्थात् ईश्वर कृष्ण) शब्द है। चूँकि प्राचीन

लैटिन भाषा में 'ईशस' को (अंगरेज़ी 'आई' और 'जे' वर्णों में अधिक समरूपता होने के कारण वैकल्पिक रूप से 'जीसस' लिखा और बोला, उच्चारण किया जाता था, तथा चूँकि 'कृष्ण' शब्द 'कृष्ट' के रूप में अशुद्ध बोला जाता था, इसलिए उत्तर-काल में (महाभारत-पश्चात् किन्तु ईसाइयत-पूर्व के यूरोप के) लोग 'ईशस कृष्ण' का नाम 'जीसस क्राइस्ट' के रूप में करने लगे।

प्रत्यय 'इति' या 'नीति' ही संस्कृत है। अतः 'क्रिश्चियन' शब्द का मन्तव्य, प्रयोजन, अर्थ 'कृष्णन्' था अर्थात् कृष्ण का अनुयायी। संस्कृत में प्रत्यय 'इति' 'ऐसा है' का द्योतक होता है। अतः क्रिश्चियन-इति का अर्थ होना चाहिए, 'कृष्णन्-इति' अर्थात् 'कृष्ण का अनुयायी' (इस प्रकार)।

किन्तु वास्तव में श्ब्द 'क्रिश्चियनिटी' संस्कृत-शब्द 'कृष्ण-नीति' का अशुद्ध उच्चारण है। संस्कृत में 'नीति' शब्द का अर्थ 'जीवन-पद्धति' य़ा 'मानव-अस्तित्व के सिद्धान्त' है। अतः संस्कृत में 'नीति' सामान्यतः सुलभ, प्रयोज्य है जैसे 'युद्ध-नीति' (युद्ध के सिद्धान्त या नीति), कृष्ण-नीति (अर्थात् भगवान् कृष्ण द्वारा अपने 'भगवद्गीता' धार्मिक प्रवचन में उल्लेख किए गए जीवन-सिद्धान्त), नीतिशास्त्र, धर्म-नीति, विदुर-नीति, कुटिल नीति (धूर्ततापूर्ण व्यवहार) आदि में।

इस प्रकार संस्कृत 'निति' (उच्चारण में 'नीति') शब्द एक अति सम्मान्य और सामान्यरूप से व्यवहार में आनेवाला शब्द है, जबकि अंगरेज़ी भाषा में प्रत्यय 'निति' का कोई स्वतंत्र अस्तित्व है ही नहीं। अंगरेज़ी में यह कोई शब्द नहीं है और इसीलिए इसका कोई अर्थ भी नहीं है। इसलिए, क्रिश्चियनिटी की पूरी शब्दावली ही न केवल अंगरेज़ी अपितु सभी यूरोपीय और अमरीकी शब्दकोश-निर्माताओं द्वारा ग़लत समझी गई व ग़लत उपयोग में ली गई है। अतः इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि क्रिश्चियनिटी से संबंधित संपूर्ण शब्दावली व्युत्पत्ति-विषयक प्रक्रिया में ग़लत समझी गई और ग़लत रूप से ही इसकी व्याख्या की गई है जबकि इसकी खोज-पड़ताल इसके वैदिक, संस्कृत-मूल में करनी चाहिए।

जहाँ तक 'कृष्ण' शब्द का उच्चारण 'क्राइस्ट (कृष्ट)' किए जाने की बात है, तो यह कोई यूरोपीय विशिष्टता नहीं है। स्वयं भारत में भी कम-से-कम दो प्रदेशों के समुदाय (बंगाली और कन्नडी) 'कृष्ण' नाम का उच्चारण 'कृष्ट' (क्राइस्ट) ही करते हैं।

उपर्युक्त वर्गीकरण व स्पष्टीकरण से यह तो स्पष्ट हो ही जाना चाहिए कि

कृष्ण-नीति-समुदाय ईसाइयत-पूर्व उद्भव, मूल का था। चूँकि कृष्ण-नीति की (अर्थात् भगवान् कृष्ण के नैतिक प्रवचन की) पूर्ण व्याख्या 'भगवद्-गीता' में की गई है, इसलिए कृष्ण-नीति-समुदाय ने 'भगवद्-गीता' को ही अपने समुदाय का मूल धर्मग्रंथ माना। यही कारण है कि सेंट पॉल का जो चित्र उसके जन्म-स्थान पर टँगा हुआ है, उसमें उसके बाएँ हाथ में एक धर्मग्रन्थ है और दाएँ हाथ में तलवार दिखाई गई है। स्वयं सेंट पॉल ने एक धोती पहन रखी है और शाल ओढ़ा हुआ है। सेंट पॉल के समय/काल में बाइबल थी ही नहीं। इसलिए, सेंट पॉल के बाएँ हाथ में धर्मग्रंथ स्पष्टतः भगवद्गीता ही थी। दाएँ हाथ में तलवार का होना भी एक अन्य समर्थक, पक्का साक्ष्य है। क्योंकि, 'भगवद्-गीता' का संपूर्ण आग्रह निराश, खिन्न, अनिश्चित मन, किंकर्तव्य-विमूढ़ अर्जुन को, अन्य किन्हीं भी परिणामों की चिन्ता किए बिना, सत्य और न्याय के लिए युद्ध हेतु तत्पर करने की प्रेरणा प्रदान करना ही है।

'सेंट' भी संस्कृत-शब्द 'संत' का विकृत, अशुद्ध उच्चारण है। पॉल भी एक कल्पित नाम था। उसका मूल नाम कुछ अन्य, भिन्न था। चूँकि कृष्ण एक ग्वाले थे, इसीलिए भगवान् कृष्ण के भक्तों ने अपने आराध्यदेव भगवान् कृष्ण के प्रति विरह-भक्ति में गोपाल नाम अतिरुचिपूर्वक धारण कर लिया।

भारत में (विशेषकर इसके पंजाब प्रान्त में) बहुत सारे व्यक्ति अपने नाम संत जी० (ग) पाल (अर्थात् सेंट गोपाल) या संत डी० (ध०) पाल (अर्थात् सेंट धर्म पाल) लिखते हैं। कल्पित ईसाई सेंट पाल, इस प्रकार मूल वैदिक प्रचारक संत जी० (ग) पाल था जिसका नाम ईसाईकरण द्वारा सेंट पाल कर दिया गया था।

अपनी जननी वैदिक संस्कृति और उक्त वैदिक पद्धति का अनुसरण किए गए चिह्नों को उजागर न करने के रूढ़िवादी कट्टरवादी ईसाई और मुस्लिम रुझान/प्रवृत्ति ने ईसाई और मुस्लिम देशों के शब्दकोशकारों को अयुक्तियुक्त, अतर्कसंगत और अरक्षणीय व्युत्पत्तिमूलक स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने के लिए दिग्भ्रमित कर दिया है।

अतः आइए हम अब 'कैथोलिक' (Catholic) शब्द पर विचार करें। यह दो संस्कृत-शब्दों 'का' जो (संस्कृत में 'स' या 'सा' की भाँति) 'सा' उच्चारण किया जाना चाहिए और 'थोलिक' का मिश्रण, यौगिक शब्द है। यह 'थोलिक' (tholic) शब्द संस्कृत के 'देवालिक' शब्द का अशुद्ध उच्चारण है।

इसका अर्थ 'मंदिर जानेवाला' अर्थात् मंदिर-भक्त है। परिणामस्वरूप 'कैथोलिक' शब्द का अर्थ वह व्यक्ति है जो मंदिर में (भगवान् कृष्ण की) पूजा करता है। यह इस निष्कर्ष की भी पुष्टि करता है कि आज जिसे 'क्रिश्चियनिटी' कहकर धर्म विश्वास किया जाता है, वह तथ्य रूप में कृष्णनीति-समुदाय की पृथक् हुई शाखा है जो सत्ता, प्रसिद्धि और धन की पिपासा से क्राइस्ट-मिथ्यावाद का आविष्कार करके एक स्वतंत्र 'धर्म' के रूप में विलग हो गई है, यद्यपि क्राइस्ट (कृष्ट) शब्द 'कृष्ण' शब्द का ही एक भ्रष्ट, अशुद्ध उच्चारण स्थानीय रूप से था।

महाभारत-युद्ध के तुरन्त बाद जब घोर विनाशकारी शस्त्रास्त्रों के प्रयोगवश वैदिक-संस्कृत शैक्षिक, सामाजिक और प्रशासनिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई, तब उपनिषद्, रामायण, महाभारत और पुराण भी खण्ड-विखण्ड हो गए जिसके परिणामस्वरूप अनेक छोटे-छोटे मत-मतान्तर होते गए जिनमें भिन्न-भिन्न देवताओं व देवियों के प्रति निष्ठा होती गई या हठ-योग, ध्यान-मनन और पुण्य नाम-स्मरण जैसी विशिष्ट पद्धतियों पर आग्रह बढ़ता गया। ऐसे वर्गों के कुछ उदाहरण हैं—स्टोइक, ईसनीज़, सदूसी, समारी, मलेनसियन्स, रमण (रामन अर्थात् रोमन्स), कृष्णनन्स (अर्थात् क्रिश्चियन्स), फिलस्तीनी, जरथुस्त्रवादी और यहूदी।

कृष्णनन्स (कृष्णानुयायी अर्थात् क्रिश्चियन्स) नामक वर्ग के अलग हुए गुट के दो गरम-मिज़ाज नेता पीटर और पाल को तो उनके महत्त्वाकांक्षी, झगड़ालू, अस्थिर-मन और हिंसक देव-भक्तिपूर्ण जीवन-पद्धति अपनाने के कारण मार डाला गया था। किन्तु बाद में चूँकि उनका अपना समूह/जन-मत अन्य लोगों को चुप कर देने में और यूरोप में हर किसी का धर्म-परिवर्तित करने में सफल हो गया, इसलिए इन दोनों झगड़ालू अग्रणियों—पीटर और पाल को सन्तों अर्थात् सेंट्स की पद-गरिमा से महिमा-मंडित कर दिया गया।

हम पाल उपनाम पॉल नाम के संस्कृत-मूलक होने की चर्चा पहले ही कर चुके हैं। अन्य नाम 'पीटर' जिसका अर्थ पत्थर है, संस्कृत-शब्द 'प्रस्तर' का अशुद्ध, अपभ्रंश उच्चारण है।

ईसाई पादरियों और साध्वियों-मठवासियों के आवासीय गृहों को 'मोनासट्रीज़' (Monasteries, मठ) कहा जाता है। उक्त शब्द संस्कृत का यौगिक शब्द 'मुनि-स्था-रि' है। 'मुनि' का संस्कृत भाषा में अर्थ पुण्य, पवित्र,

ज्ञानी व्यक्ति होता है। 'स्था' का मतलब 'स्टे' (रुकना, ठहरना) विराजना है। तथ्यरूप में तो अंगरेजी शब्द 'स्टे' भी संस्कृत के 'स्था' शब्द का अशुद्ध उच्चारण ही है। अंतिम 'रि' अक्षर का विशिष्ट उपयोग है। इस प्रकार 'मोनासट्री' शब्द संस्कृत के शब्द 'मुनि-स्था-रि' का गड़बड़, ऊट-पटाँग उच्चारण है।

अंगरेज़ी शब्द 'नन' (Nun, साध्वी, मठवासिनी) संस्कृत में दो बार 'न····न' इन्कार है। किसी प्रस्ताव, सुझाव को अस्वीकार करते हुए व्यक्ति प्रायः 'नो-नो' (नहीं-नही) कहता है। वह 'नो' संस्कृत के 'न····न' शब्द का मात्र 'ओ'-ध्वन्यात्मक प्रकार का उच्चारण है। "क्या तुम किसी बच्चे को जन्म देना चाहोगी?"—पूछने पर जो महिला 'नो' (नहीं) कहती है और फिर यह पूछे जाने पर कि "क्या तुम विवाह/शादी करोगी?" उत्तर में दुबारा 'नो' (नहीं) कहती है—वह 'न····न' अर्थात् 'नहीं-नहीं' अर्थात् इनमें से 'नन' (कोई भी नहीं) कहलाती है। यह वही दो बार कहा गया संस्कृत 'न····न' है जो संस्कृत का न-कार ईसाई शब्द 'नन' का जन्मदाता बन गया है।

'प्रीस्ट' (Priest) शब्द संस्कृत का 'पुरोहित' शब्द है जो अशुद्ध उच्चारण से इस रूप को प्राप्त हो गया। उक्त शब्द को प्रारंभिक अवस्था में 'प्रीह्ट (Prieht) उच्चारण किया गया, और चूँकि 'ह' और 'स' ध्वनियाँ परस्पर परिवर्तनीय हैं (जैसे अंगरेज़ी शब्द 'सेमिस्फीयर' ही 'हेमिस्फीयर' लिखा जाता है), इसलिए 'प्रीह्ट' शब्द ही 'प्रीस्ट' के रूप में लिखा और बोला जाता रहा। ये सब परिवर्तन तब प्रारंभ हुए जब महाभारत-युद्ध के बाद संस्कृत भाषा के माध्यम से शिक्षण, पठन-पाठन बंद हो गया तथा लिखित व बोली जानेवाली संस्कृत में क्षेत्रीय रूपान्तरण और अर्थ प्रविष्ट हो गए जिससे विभिन्न भाषाओं व उच्चारणों को अवसर प्राप्त हो गया।

'कॉन्वेंट' (Convent) को 'सॉन्वेंट' लिखा जा सकता है क्योंकि 'सी' और 'एस' परस्पर-परिवर्तनीय हैं। 'सोनवेंट' संस्कृत का शंवंत है जिसका अर्थ पवित्र, कल्याणकारी, सुख-आनन्दमय स्थान है। संस्कृत में 'शं' पवित्र अर्थात् आनन्दमय है (जैसे शंकर में) और 'वंत' का मतलब 'वाला' से युक्त होता है।

'चर्च' (Church) संस्कृत-शब्द 'चर्चा' है जो द्योतक है बातचीत अर्थात् प्रवचन का। चूँकि कृष्णनीति (अर्थात् भगवद्गीता) कृष्ण-सम्प्रदाय की बैठकों, सभाओं में चर्चा का विषय होती थी, इसलिए ऐसी बातचीत को चर्चा कहने लगे। कालान्तर में, उक्त शब्द उस स्थान या भवन का ही परिचायक हो गया

जहाँ चर्चा होती थी।

'सरमन' (Sermon) शब्द दो संस्कृत-शब्दों 'श्रमण' और 'श्रवण' का घालमेल, गड़बड़ झालमेल है। बौद्ध परम्परा में अनुयायियों को 'श्रमण' कहा जाता था अर्थात् वे लोग जो पवित्र कार्य के लिए 'श्रम' करते थे। अन्य संस्कृत-शब्द 'श्रवण' का अर्थ 'सुनना' या 'ध्यान देना' है। परिणामस्वरूप 'श्रमण' (सरमन) का अर्थ अनुयायियों या प्रशंसकों के लिए होने वाले 'प्रवचन' से लगाया जाने लगा।

'डिविनिटी' (Divinity) संस्कृत के दो शब्दों 'देव-निति' (अर्थात् देवताओं की (जीवन-विधि) या वैकल्पिक रूप में 'देवन-इति' (अर्थात् 'देवता इस प्रकार हैं' का यौगिक रूप है। 'डिवाइन' शब्द की व्युत्पत्ति भी यही है। संस्कृत में 'दिव' शब्द का अर्थ 'चमक' है। आकाशीय पिंड (उदाहरणार्थ तारे) चमकदार, दिव्य हैं। संस्कृत-शब्द 'दिव्यम्' से ही अंगरेज़ी शब्द 'डिवाइन' बना है।

संस्कृत शब्द 'देव' और इसके पर्याय 'देवता' से ही अंगरेज़ी शब्द 'डीटी' (Deity) और 'डीवोटी' (Devotee) बने हैं।

ईश्वर के लिए संस्कृत-शब्द 'भगवान्' का उच्चारण 'पगवान' होता था। इसी से 'पगावन' शब्द बन गया जिसका अर्थ भगवान् में विश्वास, आस्था रखनेवाले या भगवान् की पूजा करनेवाले होता है।

इसका प्रारंभिक 'बोग' (Bog) अक्षर स्लेवोनिक भाषाओं में 'ईश्वर' के लिए है।

ब्रिटैनिका ज्ञानकोश में 'आर्मीनियन्स' शीर्षक के अन्तर्गत उल्लेख के अनुसार 'भगवान्' उनकी तीर्थयात्रा का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान था। स्पष्टतः इसमें कुछ थोड़ा-सा संशोधन आवश्यक है। भगवान् से अभिप्राय ईश्वर से है। इसी कारण ईसाइयत-पूर्व काल में सभी मंदिर भगवान् के घर, निवास-स्थान थे। अतः वास्तविकता यह है कि उनके सभी पवित्र स्थानों अर्थात् देवालयों में भगवान् की कोई-न-कोई मूर्ति थी। इसमें उनका सबसे बड़ा मंदिर भी सम्मिलित था।

चूँकि संस्कृत-शब्द 'भगवान्' से संस्कृत विशेषण 'भगवद्' बना है (जैसा भगवद्गीता में), उसी से 'पगवद्' शब्द बना अर्थात् 'पगोडा' (Pegoda) जो फ्रैंच भाषा में मंदिर का द्योतक है। बाद में यही 'पगवद्' शब्द 'गवद्' अर्थात् 'गॉड' (ईश्वर) का घर, निवास-स्थान के रूप में व्याख्या कर दिया गया।

'पोप' (Pope) अकेला अनूठा, निराला अंगरेज़ी शब्द है। यह अंगरेज़ी में भी पथभ्रष्ट है—यह तथ्य इसके दो व्युत्पन्न शब्दों 'पापल' (Papal) और 'पापासी' (Papacy) से प्रत्यक्ष, स्पष्ट है। यूरोपीय प्रायद्वीप की भाषाओं में शब्द पूर्णतया उपयुक्त रूप में 'पापा' ही है। यह मूल रूप में संस्कृत का 'पापह' अर्थात् 'पापहर्त्ता' उपनाम 'पापहन्ता' है। 'पाप' वैदिक शब्दावली में पाप, बुरा काम है; 'हर्त्ता' दूर करनेवाला है जबकि 'हन्ता' का अर्थ 'मारनेवाला' है। इस प्रकार 'पापह' के रूप में शिरोधार्य वह व्यक्तित्व एक वैदिक पुरोहित था जिसका कार्य समाज के नैतिक आचरण का निरीक्षण करना और किसी भी सदस्य द्वारा जान-बूझकर या अनजाने में किए गए पाप-कृत्य को हटाने के लिए लोगों को परामर्श देना था। अंतिम अक्षर 'ह' अन-उच्चरित रहने के कारण 'पापा' उपनाम 'पोप' का प्रचलित उच्चारण व्यवहार में आ गया। पोप अर्थात् पापा वर्ष में कम-से-कम एक बार या जब-तब समारोहपूर्वक पद्धति के अनुसार, अतिश्रद्धा-पूर्वक किसी एक बच्चे के पैर धोता, पग पखारता है। आधुनिक, मोजे और जूते की शैली वाले जीवन में यूरोप में यह सोचने योग्य है ही नहीं कि कोई भी व्यक्ति मोजे और जूते उतारने के लिए विवश हो, क्योंकि उसे चरण-प्रक्षालन कराना है और वह भी 'पापा' जैसे किसी अतिविशिष्ट उच्च आध्यात्मिक गण्यमान्य व्यक्ति के कर-कमलों से। पग पखारने की उक्त पद्धति पूर्व के समान पश्चिम में भी प्रचलित पूर्वकालिक वैदिक सांस्कृतिक पद्धति का एक स्मृति-चिह्न ही है।

भगवान् कृष्ण (पश्चिम में कृस्त/कृष्ट /क्राइस्ट के रूप में उच्चरित) को अपने शिशुकाल से ही ईश्वर-अवतार के रूप में समस्त प्राचीन विश्व में पूजा जाता था। इसलिए, देवता के निर्दोष स्वरूप के रूप में शिशु के पैर धोना वैदिक पद्धति का एक अंग बन गया है। पोप उक्त पद्धति का परिपालन जारी रखे हुए अपने वैदिक मूल का ही प्रदर्शन कर रहा है, परिचय दे रहा है।

पोप का निवास 'वैटिकन' (Vatican) संस्कृत-शब्द 'वाटिका' अर्थात् कुंज-निकुंज, लतामण्डप है जो वैदिक आश्रम के वन्य-वातावरण का द्योतक है।

ये पुरोहित, पादरी लोग 'बिशप' (Bishop) कहलाते हैं। 'ऑक्सफोर्ड' शब्दकोशों में दिया 'धातु-गत' अर्थ आध्यात्मिक व धार्मिक प्रशासन का निरीक्षण करना है। यह मनमानी, दूरस्थ कल्पना है। 'विपश्य' ही संस्कृत में वास्तविक व्युत्पत्ति है जो 'बिपश्य' उच्चारण हुई और फिर 'बिशप' पर जाकर रुक गई।

संस्कृत भाषा में 'विपश्य' का अर्थ 'निरीक्षण करना' होता है।

इससे हमें वह सूत्र भी ज्ञात हो जाता है कि किस प्रकार संस्कृत-अक्षर यूरोपीय भाषा में कई बार रूप-परिवर्तित हो गए। संस्कृत-शब्द 'पश्य' भ्रमपूर्वक 'श्यप' अर्थात् 'स्कोप' (Scope) उच्चारण किया जाने लगा, क्योंकि बिशप शब्द की व्युत्पत्ति कोशकार 'स्कोप'-देखना से बताते हैं।

पौलेंड में बातचीत करते समय व्यक्ति प्रायः कहते हैं 'पपश्य' (संस्कृत 'पश्य' से) जिसका अर्थ होता है 'देखो' या 'ध्यान दो' अर्थात् मैं जो कह रहा हूँ उसे सुनो। 'पश्य' के वही अक्षर अंगरेज़ी में उलटे क्रम में वर्तनी-गत हो गए अर्थात् 'श्यप' अर्थात् 'स्कोप' जैसे स्टेथेस्कोप या टेलिस्कोप में।

'डाइ-ए-सीस' (Diocess, अर्थात् बिशप का धर्मप्रदेश) शब्द की व्युत्पत्ति फाउलर-द्वय ने 'ओडिको' (Oddikeo) अर्थात् 'निवास करने' शब्द से बताई है। मेरे विचार में, यह बिल्कुल अ-प्रासंगिक है। मूल संस्कृत-शब्द 'देवाशीष' है अर्थात् 'ईश्वर का आशीष—आशीर्वाद प्राप्त' (क्षेत्र, धर्मक्षेत्र)।

'पूजा-स्थल' अर्थात् एक मकान या संस्था से संलग्न चर्च का द्योतक 'चैपल' (Chapel) शब्द संस्कृत के 'चाप' शब्द से है जिसका अर्थ एक छत से है जो 'चाप' अर्थात् 'धनुष' जैसी मुड़ी, ढलवाँ हों।

'केथेड्रल (Cathedral) जैसा अन्य शब्द संस्कृत-भाषा के तीन शब्दों 'काष्ठ-द्रुम-दल' का विचित्र संयोग, मिश्रण है जहाँ अर्थ है 'बाँस-काठ-शाखाएँ-पंत्तियाँ' अर्थात् उपर्युक्त वृक्षीय सामग्री से बना लिये गए प्रार्थना-घर अर्थात् मंदिर। फाउलरों ने बिल्कुल भिन्न, काल्पनिक उद्गम-स्रोत उल्लेख किया है। यहाँ यह स्मरण रखना आवश्यक है कि ईसाइयत-पूर्व के वैदिक पुरोहितों और ऋषियों का निवास पर्ण-कुटीर-वातावरण में होता था जहाँ प्रार्थना व पूजा के कक्षों-सहित कुटियाँ लता, बेलों, पत्तों और काष्ठ-द्रुमों से ही बनाई जाती थीं।

'चैपलों' की घुमावदार छत का आशय प्रतीक-स्वरूप यह प्रकट करना था कि पृथ्वी पर स्वर्गों का अवतरण हो रहा है।

बाइबल और यहूदी धर्मग्रन्थों में प्रार्थनाओं को 'साम (P-salm, प-साम) कहते हैं। वहाँ प्रारंभिक 'प' ध्वनि-शून्य होने के कारण उक्त शब्द का उच्चारण 'साम' किया जाता है जो स्पष्टतः 'सामवेद' से है जो ईसाइयत-पूर्व युगों में समस्त मानवता का मूल वेद (ज्ञानस्रोत) था।

मुस्लिमों ने भी सामवेदिक परम्परा को ही सँजोया और जारी रखा हुआ है,

जैसा कि प्रार्थना के लिए उनके मुअज़्ज़िन (काज़ी) के पुकारने में लक्षित किया जा सकता है। इसकी स्वर-लिपि, लय, विराम और दीर्घीकरण सभी सामवेदिक परम्परा के हैं।

ईसाई शब्द 'प्रेयर' (Prayer) भी संस्कृत-शब्द 'प्रार्थना' का खण्डित प्रारंभिक अंश ही है।

ईसाइयों के 'ब्लैक फ्रायर्स' (Black Friars), और 'व्हाइट फ्रायर्स' (White Friars) का उद्गम भी यजुर्वेद के गायकों—वाचकों की शुक्ल यजुर्वेदी और कृष्ण यजुर्वेदी शाखाओं में ही है। 'फ्रायर' संस्कृत का 'प्रवर' शब्द है जिसका अर्थ ऋषि है—निहितार्थ उस व्यक्ति से है जो आध्यात्मिक दृष्टि से इतना श्रेष्ठ, उच्च है कि वह लौकिक, सांसारिक प्रलोभनों, आशाओं-आकांक्षाओं और आकर्षण-विकर्षण से लेशमात्र भी विचलित नहीं होता। थाईलैंड और निकटवर्ती क्षेत्रों में बौद्ध (अर्थात् हिन्दू, आर्य, वैदिक) भिक्षुगण अपने नामों से पूर्व 'फ्रा' अक्षर लगाते हैं जो लौकिक आकर्षणों से उनकी स्वतंत्रता का द्योतक ही है। वही उपसर्ग 'फ्रा' अथवा 'फ्र' ईसाई परम्परा में भी विद्यमान है, बना हुआ है। यूरोपीय शब्द 'फ्री' उसी वैदिक धरोहर का शब्द है। "स्वतंत्र (व्यक्तियों) की भूमि" का अर्थ-द्योतक फ्रांस शब्द भी 'फ्रा' अक्षर का संस्कृत-बहुवचन ही है।

इस्लामी धर्म-विज्ञान

इस्लामी धर्म-विज्ञान की शब्दावली भी वैदिक मूल की है, क्योंकि मुस्लिम-पूर्व युग के अरब (अरब-वासी) लोग भी वैदिक संस्कृति के माननेवाले व्यक्ति ही थे।

तथ्य रूप में तो ईसाइयों के समान ही, अपनी शब्दावली का मूलोद्गम स्पष्ट करते हुए मुस्लिम लोग भी व्युत्पत्ति-विषयक ऊल-जलूल स्पष्टीकरण देने लगते हैं।

उनका 'अल्लाह' शब्द 'माँ देवी' के अनेकानेक संस्कृत नामों में से एक है।

'मुसलमान' शब्द का कुरान में कहीं भी उल्लेख नहीं है। फिर, मुहम्मदी लोग मुसलमान अर्थात् मुस्लिम क्यों पुकारे जाते हैं? यह शब्द 'महाभारत' महाग्रंथ में पाया जाता है। इसका एक अध्याय 'मौसल पर्व' के नाम से है।

महाभारत-युद्ध के पश्चात् किसी समय यादव-समुदाय को अपना द्वारका-

साम्राज्य, चारों ओर बिखरे पड़े अ-प्रयुक्त आणविक प्रक्षेपणास्त्रों के विस्फोटो तथा समुद्र की बाढ़ द्वारा क्षेत्र में जल-प्लावन के कारण, त्याग देना पड़ा। उन प्रक्षेपणास्त्रों को संस्कृत भाषा में मूसल कहते थे। मूसल द्वारा विस्थापित व्यक्तियों को मूसल-मन (अर्थात् मुसलमान अर्थात् मुसलमीन) कहते थे।

इन लोगों, यदुओं—यादवों उपनाम सेमाइट्स को अर्थात् श्याम (भगवान् कृष्ण) की प्रजा को अपना पैतृक प्रदेश (द्वारका) छोड़ना पड़ा और (यदु-जातियों के नाम से ज्ञात) समूहों में—एक के बाद एक—ये पश्चिम एशिया में भटकते-भटकते तथा सऊदी अरब, जोर्डन, फिलस्तीन, ईरान, इराक, तुर्कस्तान, मिश्र, रूस आदि में बसते-बसते इधर-उधर फैलते गए।

यहूदी भी एक प्रकार से मुसलमान अर्थात् मूसल (अर्थात् विस्फोटित प्रक्षेपणास्त्र) द्वारा विस्थापित ही थे। प्रचलित शब्द 'मिसाइल' (प्रक्षेपणास्त्र) संस्कृत शब्द 'मूसल' का अपभ्रंश, अशुद्ध उच्चारण है। 'महाभारत' महाकाव्य में मौसल-पर्व अर्थात् 'मिसाइल (प्रक्षेपणास्त्र) अध्याय' में उस महाविनाश का विवरण दिया गया है जो अपने क्षेत्र, भू-प्रदेश में इधर-उधर बिखरे पड़े अ-प्रयुक्त युद्ध-मिसाइलों से बालोचित शैतानी-पूर्ण अबोध-भाव में यदु-बालकों ने उन शस्त्रों से छेड़खानी करके (महाविनाश) उपस्थित कर दिया गया था।

कुरान में कहीं भी उल्लिखित न होने पर भी 'मुसलमान' शब्द 'मुहम्मदी' शब्द का पर्याय बना रहा है क्योंकि वे यादव अर्थात् यहूदी जो आतंक, यातना और अत्याचार द्वारा मुहम्मदी बन जाने के लिए मजबूर कर दिये गए थे, उन्होंने मुहम्मद-पूर्व की अपनी पहचान 'मुसलमान' के रूप में अर्थात् मिसाइलों के विस्फोटों से (के कारण) विस्थापित हुए व्यक्तियों के रूप में बनाए रखी थी।

द्वारका क्षेत्र से विस्थापित गैर-परिवर्तित विस्थापितों ने अपने मूल-नाम यदु (यादव) जो बाद में जदु या जादव उच्चारण किया गया, को बचाए-बनाए रखा ताकि वे इस्लाम में धर्म-परिवर्तित और स्वयं को मुहम्मदी घोषित करने के लिए विवश किए गए अपने ही सह-धर्मियों, संगी-साथियों से अलग तथा विशिष्ट परिलक्षित होते रहें।

प्रसंगवश, संयोग से हमें विश्व-इतिहास की एक अन्य विचित्र समस्या का ज्ञान हो जाता है, यद्यपि यह मूलतः अंगरेज़ी भाषा की समस्या नहीं है।

मुस्लिम-युग की गणना मक्का से मुहम्मद की वापसी से की जाती है, जब घोर विरोध के परिणामस्वरूप उसे ऐसा करने के लिए विवश होना पड़ा।

मुस्लिम 'हिज्री' काल-गणना (सन्) से यही तात्पर्य है।

उक्त घटना एक अति लज्जास्पद व अ-प्रकट, अन-उल्लेखनीय बात थी। अतः प्रश्न यह है कि अपने युग का प्रारंभ मानने के लिए मुहम्मद की मौत का दिन, या इस्लाम की घोषणा का दिन, या उसके जन्म का दिन, या मक्का में विजयी पुनः प्रवेश का दिन जैसा कोई शुभ अवसर और महत्त्वपूर्ण घटना न चुनकर, मुस्लिम लोग मक्का से मुहम्मद की विवशतापूर्ण वापसी से ही युग-प्रारम्भ क्यों मानते हैं?

उत्तर यह है कि जिन्हें हम आज अरब-मुस्लिम और यहूदी के नाम से जानते हैं, मुहम्मद-पूर्व युग में वे सभी एक ही समान समुदाय के व्यक्ति थे जो अपना वियोग, विछोह, विलाप-वर्ष उस काल से गणना करते थे जब आणविक विस्फोटों और सागर द्वारा जल-प्लावन जैसी प्राकृतिक आपदाओं के कारण भगवान् कृष्ण के द्वारका-साम्राज्य को दुःखी, विह्वल-हृदय से छोड़ने के लिए विवश हो गए थे। यहूदी लोग उसे 'पास्का' (वियोग) युग, काल कहते हैं।

उन लोगों में से एक वर्ग जब बलात् इस्लाम में धर्मपरिवर्तित कर दिया गया, तब एक अति त्वरित, शीघ्र ऐसा वैकल्पिक काल चाहिए था जो वैसी ही अवसाद-पूर्ण, हृदय-विदारक और आनन-फानन वापसी वाला हो। इसलिए, इस्लाम में परिवर्तित अरब-लोगों ने मात्र अपने स्वभाव के अनुसार ही विवश होकर, मक्का से मुहम्मद की लज्जात्मक वापसी को ही अपने विभाजक-युग का प्रारंभिक बिन्दु विकल्प रूप में स्वीकार, निर्धारित कर लिया।

अन्य सम्बंधित समस्या यह है कि यहूदी, अरेमीनियन, फ़ोनेशियन, अरब और असीरियन लोग सीमाइट्स (सेमाइट्स) क्यों कहलाते हैं? उत्तर यह है कि वे लोग द्वारका-साम्राज्य में श्याम अर्थात् भगवान् कृष्ण की प्रजा थे। उक्त साम्राज्य अफगानिस्तान के पश्चिम में फैले देशों में था जो आज इस्लाम के प्रभाव में है। यहूदी लोग श्याम की वर्तनी शैम (शैमाइट्स, सैमाइट्स, सीमाइट्स) करते हैं।

एक अन्य समस्रोतीय समस्या खान शब्द के मूलोद्गम की है, जो अफज़ल खान (खाँ) और शाइस्ता खाँ (खान) जैसे मुस्लिम नामों में आज भी प्रत्यय के रूप में अधिकतर जुड़ा चला आ रहा है।

उक्त शब्द 'कान्हा' शब्द का भ्रष्ट, अशुद्ध उच्चारण है जो भगवान् कृष्ण का लाड़-प्यार-दुलार का मुँह-बोला नाम था। महाभारत-काल के पश्चात् समयावधि में बहुत लोग स्वयं को ही 'कान्हा' अर्थात् भगवान् कृष्ण के प्रशंसक,

अनुयायी व भक्त न कहकर भगवान् कृष्ण के प्रति अपनी भक्ति व आसक्ति अभिव्यक्त करने लगे थे। मंगोल लोग उनमें सबसे आगे थे। मुस्लिमों को दण्डित, पीड़ित करनेवाला पराक्रमी चंगेज खान वैदिक परम्परा का महान् योद्धा था। उसे प्रायः बौद्ध व्यक्ति ग़लत ही बताया जाता है। किन्तु बुद्ध धर्म कोई पृथक् धर्म नहीं है। यह तो हिन्दू-धर्म अर्थात् वैदिक संस्कृति का एक जन-प्रिय मार्ग ही था। चंगेज खान का पौत्र वह व्यक्ति था जो परिवार से सर्वप्रथम इस्लाम में धर्म-परिवर्तित हो गया।

उपर्युक्त गुणवाचक विशेषण जैसे ईशस् अर्थात् जीसस, और क्राइस्ट, कृष्ट अर्थात् कृष्टोस ईसाइयों में, तथा मुस्लिमों में कान्हा अर्थात् खान उस संभ्रम, फड़फड़ाहट को प्रमाणित करते हैं जो भगवान् कृष्ण के उल्लेख-योग्य जीवन ने उनके अपने जीवन-काल में तथा बाद में महाभारत-युग के पश्चात् समस्त विश्व में गुंजरित कर दी थी।

जिस प्रकार मूल ईसाई कैथोलिक्स अर्थात् मंदिर जानेवाले जाने जाते थे जिनमें आगे शाखाओं में विभक्त हो जाने की कोई भी झलक नहीं थी, उसी प्रकार मुहम्मदी लोग भी प्रारंभ में 'सुन्नी' कहलाते थे, अर्थात् वे व्यक्ति जो 'सुनह' अर्थात् ईश्वर के शब्द में अर्थात् वेदों में विश्वास करते थे। भारत में, वैदिक संस्कृत प्रयोग में वेदों को 'श्रुति' (अर्थात् सुनी गई) कहते हैं, क्योंकि सृष्टिकर्त्ता 'ब्रह्मा' ने मानवों की सर्वप्रथम पीढ़ी को वैदिक गायन का पाठ पढ़ाया था। वही 'श्रुति' शब्द 'सुनह' अरबी-समानक बन गया है। 'सुनह' का प्रचलित मुस्लिम स्पष्टीकरण ग़लत है।

मुहम्मद के चाचा और दादा 'सुन्नी' कहलाते थे (यद्यपि उस समय कोई 'शिया', नहीं थे)। मुहम्मद पिता की मृत्यु-बाद पैदा हुआ बच्चा था जिसने अपने पिता को कभी नहीं देखा। वे लोग 'सुन्नी' कहलाते थे क्योंकि वे 'श्रुति' अर्थात् वेदों का वाचन करते थे जिनकी स्वरलिपि सुने-समान बनानी थी (जिससे उसके उच्चारण और अर्थ में कोई बदल, परिवर्तन न हो सके)।

इसी बात की पुष्टि आगे इस तथ्य से भी होती है कि मस्जिदों के शिखरों से दिन में पाँच बार प्रार्थना के लिए दी जाने वाली मुस्लिम-पुकार की स्वर-लिपि सामवेद-उच्चार के समान ही है।

मक्का संस्कृत-शब्द 'मख' अर्थात् अग्नि-पूजा है। उक्त स्थान वैदिक अग्नि-पूजा का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र था और इसीलिए अन्तर्राष्ट्रीय तीर्थयात्रा का

बिन्दु था जहाँ विश्व के विभिन्न भागों से वैदिक देवी-देवताओं को भक्त-श्रद्धालु यात्रियों द्वारा पालकियों में विराजमान कर, बारी-बारी से भार-वहन कर, लाया जाता था।

इसका केन्द्रीय पूजालय आजकल 'काबा' के नाम से प्रसिद्ध है जो संस्कृत शब्द 'गाभा' से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ पवित्र 'गर्भ-गृह' है।

वहाँ बचा हुआ श्रद्धा का एकमेव केन्द्रीय पदार्थ बेलनाकार शिवलिंग है जिसे स्थानीय रूप से 'संगे-अस्वद' अर्थात् काला (अश्वेत) पत्थर (प्रस्तर) कहते हैं।

'शेख' शब्द संस्कृत के शिष्य (दीक्षापाल, अनुयायी) उर्फ सिख का ही भिन्न रूप है।

'मौलाना' संस्कृत यौगिक मौला (अर्थात् प्रदान या सर्वोच्च) तथा नः (अर्थात् हम) है। इस प्रकार मौलाना शब्द एक आध्यात्मिक नेता का द्योतक है।

'कव्वाली' संस्कृत का 'काव्यवाली' शब्द अर्थात् पद्य की पंक्तियाँ हैं।

'निक्का' (निकाह)—शादी के लिए इस्लामी शब्द संस्कृत-शब्द 'निकट' से है—अर्थात् एक पुरुष और एक महिला को वर और वधू के रूप में निकट लाना।

जुडेइज़्म (यहूदी धर्म, यहूदीवाद)

'जुडेइज़्म' येदुइज़्म का अशुद्ध, विकृत उच्चारण है क्योंकि कुछ भू-क्षेत्रों में 'वाई' (य) और 'जे' (ज) एक-दूसरे के स्थान पर प्रयोग में आते हैं। 'येदु' (यदु) लोग भगवान् कृष्ण के वंश, कुल के लोग थे। उनको अपनी मूल द्वारका राज-नगरी छोड़नी पड़ी थी और अन्य (सुरक्षित) निवास-स्थान की खोज में पश्चिम की ओर जाना पड़ा था।

उनका नवीनतम प्राप्त साम्राज्य 'इस्रायल' दो खण्डित संस्कृत-शब्दों का मिश्रण, यौगिक शब्द है। 'इस्र' संस्कृत-शब्द 'ईश्वर' है जो भगवान् का अर्थद्योतक है। 'आयल' संस्कृत 'आलय' का संक्षिप्त रूप है, जिसका अर्थ 'घर', 'निवास' होता है। इस प्रकार 'इस्रायल' शब्द एक देव-निवास, स्थान का द्योतक है।

यहूदी लोग स्वयं को 'ईश्वर के लाड़ले' प्राणी मानते हैं, क्योंकि वे भगवान् कृष्ण के यदु-कुल से संबंध रखते हैं।

उनकी 'हीब्रू' (हब्रू) भाषा भी दो संस्कृत धातुओं, मूल शब्दों के नाम से ही व्युत्पन्न है। उसका आदि अक्षर 'ही' (ह) हरि अर्थात् भगवान् कृष्ण के नाम का संक्षेप है। 'ब्रू' संस्कृत-शब्द का अर्थ बोलना, वाणी है। भगवान् कृष्ण संस्कृत भाषा में बोले थे जैसा महाकाव्य 'महाभारत' और 'भगवद्गीता' में अंकित, लिखित है। चूँकि सन् 3760 ई० पू० से यदु लोग अपने स्वदेश द्वारका क्षेत्र से विलग हो चुके हैं, इसलिए उन्होंने जिस संस्कृत भाषा को मूल, प्रारंभिक रूप में बोला था, वह शनैः-शनैः 'हब्रू' में परिवर्तित हो गई चाहे उक्त नाम अभी भी उसी भाषा का संकेतक, द्योतक है जो उनके सर्वोच्च नेता भगवान् कृष्ण ने बोली थी।

इस पुस्तक के विभिन्न अध्यायों में जो जानकारी अंकित की जा रही है वह विशद, सुविस्तृत नहीं है। इसका प्रयोजन शोध के लिए एक नई दिशा की ओर संकेत करना और भावी शोधकर्ताओं को एक नवीन मार्ग पर अग्रसर करना मात्र है। भिन्न-भिन्न भाषाओं के बृहत्-शब्दकोशों को उन भाषाओं के संस्कृत-स्रोतों के आधार पर तैयार करना अतिविचलित और निरुत्साहित करनेवाला काम है जिसे केवल दोनों भाषाओं के विद्वानों के बड़े-बड़े दल ही वर्षों तक परिश्रम करने के बाद पूरा कर सकते हैं। वर्तमान कार्य—पुस्तक-रचना—का मुख्य उद्देश्य अव्यवस्थित, सिद्धान्तहीन, भाषाओं के ऊबड़-खाबड़ विकास के विचार से शब्दकोश-निर्माताओं को दूर हटाना और यह स्पष्ट करना है कि किस प्रकार मानवी भाषा और कार्यकलाप वैदिक संस्कृत से ही मूल रूप में प्रारंभ हुए हैं।

'अपासल' (Apostle) संस्कृत का यौगिक शब्द आप-स्थल है अर्थात् वह व्यक्ति जो (प्रचार अथवा अन्य धार्मिक, आध्यात्मिक उद्देश्यों से) एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा करता रहता है।

(पत्र का द्योतक) 'एपीसल' (Epistle) शब्द भी इसी प्रकार व्युत्पन्न है क्योंकि एक पत्र (अर्थात् लिखित टिप्पणी) भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेज दिया जाता है।

इवेन्जैल, इवेन्जेलिक, इवेन्जेलिज़्म, इवेन्जेलिस्ट, इवेन्जेलिस्टिक और इवेन्जेलाइज़ जैसे अंगरेज़ी शब्द संस्कृत के अंजली शब्द से उद्भूत हैं—अंजलि अर्थात् पवित्र भाव से प्रार्थना या विनती करने हेतु हाथ की दोनों हथेलियों को एक द्रोण-सा बनाते हुए जोड़ने की मुद्रा, स्थिति—वैदिक आध्यात्मिक-पद्धति में अत्यंत सामान्य, प्रचलित है।

'टैस्टामैंट' (Testamant) अंगरेज़ी शब्द ईश्वर (या मानव-प्राणी) की

इच्छा का द्योतक है। संस्कृत में यह 'तथास्तु' अर्थात् 'ऐसा ही हो' है। अन्त्य 'मैंट' संस्कृत का 'मन्तव्य' अर्थात् इच्छित या अभिप्रेत है, जो 'मैन्टेलिटी' और 'मैन्टर' जैसे शब्दों में देखा जा सकता है। इस प्रकार पूर्ण 'टैस्टामैंट' शब्द का अर्थ होगा 'वह जो एक विशिष्ट प्रकार का होना अभिप्रेत है।' अंगरेज़ी 'टैस्टामैंट' का पहला आधा भाग 'टैस्टा' संस्कृत का 'तथास्तु' है।

'एबे' (Abbey) अंगरेज़ी-शब्द संस्कृत का 'अभय' शब्द अर्थात् निडर, निश्शंक कृपा की अवस्था है। आज जो ईसाई गिरजाघर हैं वे पूर्वकालिक मंदिर थे जिनमें वैदिक देवगण विराजमान, प्रस्थापित थे। परेशानियों, चिन्ताओं या भय से ग्रस्त व्यक्ति मंदिर में आया करता था और देवमूर्ति के समक्ष, उसके चरणों में गिरकर अभय अर्थात् पूर्ण शान्ति, संतोष और भय से मुक्ति की याचना करता था। अभय अर्थात् 'एबे' शब्द का मूलोद्गम इस प्रकार हुआ है।

'मिसलटो' (Mistleto) वैदिक जड़ी-बूटी सोमलता की ऊलजलूल वर्तनी है, जिसका उपयोग वैदिक समारोहों में व्यापक रूप से हुआ करता था।

'बैपटिज़्म (Baptism) संस्कृत की अभिव्यक्ति 'बास्पित-स्म' अर्थात् "हम लोग अभिषिक्त हो चुके हैं" का अशुद्ध, अपभ्रंश उच्चारण है। 'बास्पित-स्म' अभिव्यक्ति में संस्कृत-अक्षरों के क्रम-परिवर्तन से ही अंगरेज़ी शब्द 'बैप्टिज़्म' का रूप-निर्धारण हो गया है।

9
विश्व-व्यापी वैदिक देवकुल

वैदिक संस्कृति अत्यधिक वैज्ञानिक है क्योंकि वेद का अर्थ, मतलब ही (हर प्रकार का) ज्ञान है। यही कारण है कि चेकोस्लोवाकिया की अकादमियों में विज्ञान-संकायों को 'वेद' ही कहा जाता है, नामोल्लेख है।

वैदिक संस्कृति ठीक ही स्वीकार करती है कि कोई अतिप्राकृतिक, अलौकिक सत्ता है जिसने न केवल इस विश्व की सृष्टि की है अपितु जो प्रत्येक अणु को कार्यरत रखने का नियमन करती है, और जो सभी जीवधारी प्राणी और जड़-अचेतन वस्तुओं में भी व्याप्त है।

इसी प्रकार वैदिक संस्कृति मान्य करती है कि गुरुत्वाकर्षण सभी आकाशीय पिण्डों में प्रकाश और उनकी गतियाँ भी उक्त दैवी सत्ता, शक्ति के भिन्न-भिन्न रूपान्तरण ही हैं।

उसी पालनकर्ता दैवी शक्ति को भगवान् विष्णु का मानव-रूप घोषित किया है। उनको शाश्वत शेषनाग की कुंडलियों पर लेटा हुआ दिखाया गया है। वे कुंडलियाँ उन आकाशगंगाओं की प्रतीक हैं जो असीम वक्र अन्तरिक्ष और महाव्योम के मध्य घूमती रहती हैं। उन्हीं के ऊपर विष्णु भगवान् 'शयनमान' हैं जो इस बात का प्रतीक है कि दैवी शक्ति आधार बनी हुई है अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को सँभाल रखा है।

ब्रह्मा अपने विश्व का सृष्टिकर्त्ता है। भगवान् शिव उस कार्यकारी शक्ति के प्रतीक हैं जो न केवल समस्त मानवों की गति का, अपितु भू-कम्पों और वज्र-पात जैसी अन्य शक्तियों की गति का भी शासन, नियमन करती है।

अतः भगवान् शिव उस दैव की कार्यकारी बाजू का प्रतीक हैं। वे पितृ-ईश्वर के रूप में ही सारे विश्व में पुकारे जाते थे। उनकी अर्धांगिनी 'माँ देवी' कहलाती थीं। वैदिक संस्कृत परम्परा में 'पितृ-ईश्वर' और 'माँ देवी' दोनों के ही अनेकानेक नाम हैं।

ईसाइयों ने पिछले 1600 वर्षों में शिवलिंग को लिंग का प्रतीक मानकर ग़लत व्याख्या की है। वैदिक देव-देवियों का तिरस्कार और उनकी निन्दा करके, लोगों को ईसाइयों के रूप में अनुयायी बनाने के लिए विवश करने हेतु अनेकों कुचक्रों में से एक यह विधि थी जो ईसाई उग्र धर्मान्धों ने अपनाई थी। शिवलिंग ब्रह्माण्ड का निराकार ठूँठ-सदृश मुख्याधार का प्रतीक है, कोई लैंगिक प्रतीक नहीं।

शिव का अन्य निरूपण द्रुतशीतल बर्फीले पर्वतीय वातावरण में गहन समाधिस्थ अवस्था में निश्चल, अकंप बैठे व्यक्तित्व का है जिनके शीर्ष पर गंगा नदी की अजस्र धारा बहती रहती है। यह संपूर्ण, समस्त प्रकृति का ब्रह्माण्डीय मुख्य सम्बल है।

भगवान् शिव का एक अन्य निरूपण नटराज के रूप में होता है जो अखण्ड ब्रह्माण्डीय ताण्डव नृत्य में लीन हैं, और जो उस अनन्त गति का प्रतीक है जो सभी जीवधारी प्राणियों और जड़, अचेतन पदार्थ में अविच्छिन्न रूप से प्रत्येक अणु और लघु उप-अणु में व्याप्त रहती है, संचालन करती है।

दैव की उक्त संचालन-शक्ति, सत्ता का नाम 'शक्ति', उपनाम 'माया' है। इसे दैव के नारी-अंश के रूप में निरूपित किया जाता है।

इन शक्तियों को, जो ब्रह्माण्डीय अंशों को सम्बल देती हैं, अनुशासित-नियंत्रित करती हैं, सृजन, नष्ट, या पुनर्व्यवस्थित करती हैं, एक ही दैव के विभिन्न रूपों में निरूपित या प्रतीक-स्वरूप दर्शाया जाता है।

इन शक्तियों को विभिन्न देवों या देवियों के रूप में व्यक्तित्व प्रदान किया जाता है। किन्तु उनकी पूजा करो या उनकी प्रार्थना करो या उनका आह्वान करो या उनको अन-व्यवधानकारी अस्तित्व मानो या उनमें पूर्णतः नास्तिकी अविश्वास रखो—यह सब-कुछ वैदिक संस्कृति ने प्रत्येक व्यक्ति के निजी स्वभाव, रुझान पर छोड़ा हुआ है। अतः वैदिक संस्कृति अर्थात् हिन्दू धर्म के साथ मूर्तिपूजा, आस्तिकवाद या नास्तिकवाद को जोड़ना पूर्णतया, नितान्त ग़लत है।

हिन्दू धर्म अर्थात् वैदिक संस्कृति में कोई धर्मान्तरण या धर्मपरिवर्तन नहीं है, क्योंकि इस्लाम और ईसाइयत से पूरी तरह भिन्न, हिन्दू धर्म किसी भी व्यक्ति को (मुहम्मद या जीसस जैसे) किसी विशिष्ट देवदूत (पैग़म्बर) से, या किसी विशिष्ट प्रार्थना या उपासना-पद्धति या किसी विशिष्ट धर्मग्रंथ (जैसे बाइबल या

कुरान) से बाँधकर नहीं रखता। किसी भी स्थान पर, कहीं भी, किसी भी समय, किसी भी देश में जन्मा हर व्यक्ति वैदिक संस्कृति का प्राणी है जो कि मानवता की मूल संस्कृति है, जब तक कि वह स्वयं ही उसका परित्याग न कर दे।

इस्लाम या ईसाइयत जैसे मत-मतान्तरों में जन्मे व्यक्तियों की ओर से मात्र इतनी स्वैच्छिक घोषणा ही उन्हें हिन्दू बना देती है कि वे हिन्दू हैं। फिर भी, यदि वे हिन्दू धर्म में प्रवेश की ओर औपचारिक दीक्षा-पद्धति समारोह आयोजित करना चाहें तो इसकी व्यवस्था भी मसुराश्रम (गोरेगाँव), बम्बई या किसी भी आर्यसमाज मंदिर में की जा सकती है।

चूँकि हिन्दू धर्म अर्थात् वैदिक संस्कृति में आस्तिकवाद और नास्तिकवाद के सभी प्रकार समाविष्ट, समाहित हैं इसलिए मुस्लिमों और ईसाइयों को भी हिन्दुओं के रूप में ही गिना जा सकता है, किन्तु शर्त यह है कि वे गुप-चुप प्रलोभन या मजबूरी द्वारा अन्य लोगों को अपने मत/धर्म में परिवर्तित करने की अपनी प्रवृत्ति का त्याग कर दें। हिन्दू धर्म उपनाम वैदिक संस्कृति देव-शास्त्र और अध्यात्म के रूप में स्वतंत्र विचारकों का समूह, सम्मेलन है। यही कारण है कि बौद्ध, जैन, आर्यसमाजी, ब्रह्मसमाजी, सनातनी, जड़ात्मवादी, शून्यवादी आदि इसके वर्तमान सदस्य वे लोग हैं जो कभी भी किसी अन्य साथी को प्रलोभन या बल द्वारा अपने मत-मतान्तरों में प्रवेश दिलाने का यत्न नहीं करते। एक हिन्दू किसी भी समय किसी भी देवालय में जा सकता है या प्रार्थना कर सकता है। वह यदि न चाहे तो कहीं भी किसी भी साकार देव-पूजा या आराधना-प्रार्थना को न करे। देवशास्त्रीय विचार-प्रणाली की ऐसी स्वतंत्रता ही वैदिक संस्कृति अर्थात् हिन्दू धर्म का सर्वोच्च प्रमाणांक है।

यही हिन्दू धर्म या वैदिक संस्कृति थी जो सकल भू-खण्ड में समस्त मानव-प्राणियों की आस्था-बिन्दु थी जब तक कि पीटर और पाल नामक दो महत्त्वाकांक्षी उतावले क्रोधी व्यक्तियों द्वारा प्रारंभ किए गए कृष्ण-सम्प्रदाय के पृथकतावादी गुट ने शक्ति और धन सँजो लेने की महत्त्वाकांक्षा से अहंकारी और सनकी रोमन सम्राट् कॉन्स्टैनटाइन (Constantine) को 'अपनी श्रेणी' में सम्मिलित कर लेने में सफलता प्राप्त नहीं कर ली। यह कार्य ईसवी पश्चात् लगभग सन् 312 में हुआ। इस घटना के बाद तो परिवर्तित रोम-सम्राट् की सेनाएँ ही थीं जिन्होंने पश्चिमी विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को विवश कर दिया कि हर व्यक्ति अपनी गर्दन में एक छोटा-सा 'क्रास'-चिह्न ज़रूर लटकाए जिससे

स्पष्ट हो जाए कि वह एक ईसाई है। तीन शताब्दियों बाद मुहम्मदी-वाद ने भी धर्मान्तरण की ईसाई पद्धति का ही अनुकरण किया और प्रत्येक मकान पर 'क्रॉस' चिह्न लगा दिया जिससे उसमें रहनेवाले सभी व्यक्ति क्रमिक रूप में आतंकित, भयभीत होकर स्वयं को मुस्लिम या ईसाई घोषित कर दें। मुस्लिमों और ईसाइयों द्वारा धर्मान्तरण की उक्त जबरन प्रयुक्त रीति 'अली बाबा और चालीस चोर' वाली अरेबियन नाइट्स कथा में अनजाने ही उत्कीर्ण, सचित्र दर्शाई और अमर कर दी गई है। उक्त कथा में, अपने नेता के कहने पर चोरों का वह दल अली बाबा के मकान पर 'क्रॉस (काटे) का निशान लगा देता है जिससे पहचानकर उसे मार डाला जाए। उसी प्रकार ईसाई और मुस्लिमों की अंतिम निर्णायक चेतावनी में धर्मान्तरण या मृत्यु का आदेश होता था।

उपर्युक्त विषयान्तर चर्चा की आवश्यकता इस कारण हुई कि विवशकर्त्ता और बाध्यकारी इस्लाम और ईसाइयत के विपरीत ईसाइयत-पूर्व के विश्वव्यापी वैदिक विचारों के अनिवार्य लक्षणों का स्पष्टीकरण हो जाए और उन पर आग्रह भी कर सकें।

इसलिए ईसाइयत-पूर्व विश्व के विभिन्न भागों में मिली मूर्तियों को ग़लत न समझा जाए, उनकी ग़लत व्याख्या न की जाए और उनको ग़ैर-ईसाईवाद या ग़ैर-मुस्लिमवाद या काफ़िरवाद के स्मृति-चिह्न समझकर निन्दा नहीं की जानी चाहिए, क्योंकि मूर्तिपूजा तो लौकिक-संस्कृति का मात्र एक लक्षण ही था जैसा आज भी है। किन्तु उसका यह अर्थ भी नहीं है कि ईसाइयत-पूर्व समाज के सभी मत-मतान्तरों में मूर्तिपूजा का प्रचलन था। कुछ योग का अभ्यास करते थे, कुछ केवल पुण्य-पवित्र नामों का स्मरण व जाप ही करते थे, कुछ वेदों का स्वाध्याय-गायन-वाचन करते थे, कुछ अन्य लोग तप करते थे, कुछ पूर्णतया नास्तिक थे, कुछ अतिदुरूह उपनिषदों का ही अध्ययन करते थे, कुछ रामायण, महाभारत, श्रीमद्‌भागवतम्, भगवद्गीता, अथवा पुराणों का अध्ययन करते थे। इस प्रकार ईसाइयत-पूर्व का वैदिक समाज संपूर्ण मानव आस्तिकवाद या नास्तिक विचारधारा को अंगीकार, समाहित करता था। वैदिक संस्कृति का वही नमूना—हिन्दूधर्म का वही प्रकार निरन्तर विद्यमान रहा है। आज भी यह वही है। अतः पूजा-आराधना, प्रार्थना और दार्शनिकता के ईसाई और मुस्लिम प्रकार भी इस वैदिक, हिन्दू संस्कृति में अपना अस्तित्व रख सकते हैं। किन्तु ईसाइयत और इस्लाम नरभक्षी हैं। वे अन्य सभी को निगल जाने का आग्रह करते हैं जिससे

कोई भी क्षेत्र, मैदान में शेष रहे ही नहीं। यह हिन्दू धर्म अर्थात् वैदिक संस्कृति के लिए अत्यन्त असंगत, अप्रीतिकर, घृणास्पद है जो दैव या अध्यात्म-संबंधी मामलों में हर व्यक्ति को पूर्ण स्वतंत्रता देने के पक्ष में है, इसमें दृढ़ विश्वासी है।

अतः हम जब शिव का उल्लेख ईसाइयत-पूर्व के विश्व में पितृ-ईश्वर के रूप में करते हैं—हाथ में त्रिशूलधारी मानव-आकृति में चित्रित करके तथा ब्रह्माण्ड के मुख्य सम्बल एक ठूँठ के रूप में अविनाशी शक्ति के प्रतीकस्वरूप शिवलिंग के रूप में, तब यह आवश्यकीय रूप में मूर्ति-पूजा नहीं है। यह वैज्ञानिक प्रतीकवाद भी है।

भक्त लोग अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति हेतु शिवलिंग के समक्ष प्रार्थना भी करते थे। उन्हीं में निस्सन्तान महिलाएँ भी थीं जो संतान की इच्छा रखती थीं। प्रार्थना करते समय ये महिलाएँ कभी भी लिंग का आह्वान नहीं करती थीं/हैं। ये तो ईसाई कट्टरपंथी ही थे, जिन्होंने अपने धर्मान्ध उग्रवाद में वैदिक श्रद्धा से लोगों को दूर हटाने के लिए शिवलिंग को घृणित अश्लील पुरुष-लिंग कहकर निन्दा की है। यह दुष्कृत्य ईसाई लोगों की प्रेरित द्वेषी बाज़ीगरी थी जिससे लोग वैदिक संस्कृति से घृणा करने और उसका त्याग करने के लिए इच्छुक हो सकें।

संस्कृत भाषा में प्रत्येक देवी-देवता और लगभग हर वस्तु के लिए पर्यायवाची शब्दों का बाहुल्य, आधिक्य है। इसीलिए पितृ-ईश्वर शिव के भी अनेक नाम हैं। उनमें से एक 'त्र्यम्बकेश' है जिसका अर्थ 'तीन नेत्र—आँखोंवाला ईश' है। वह तीसरा नेत्र ललाट के मध्य में था। यूनानी कथाओं में साइक्लोपों (Cyclopes) की भी ऐसी आँख थी। उक्त तथ्य यूनानी सभ्यता के वैदिक मूल की ओर संकेत करता है।

'त्र्यम्बकेश' में बाद का—पीछे का—अक्षर यूनानी कथाओं में 'बकस' अथवा 'बक्खोस' के रूप में बचा हुआ है।

अतः अंगरेज़ी शब्द 'बैकेनेलियन' (सुरादेवोत्सव, मद्यपानोत्सव) संस्कृत नाम त्र्यम्बकेश से व्युत्पन्न है जो संक्षेप में बकेश अर्थात् बकस हो गया है।

भारत में कुछ निरंकुश अड़ियल लोग अध्यात्म के नाम पर मद्यपान, धूम्रपान और ऐसे ही कुत्सित व्यसनों में आसक्त होने पर भगवान् शिव के नाम पर ऐसे ही कार्य करते रहे हैं। इन्हीं की आदि-कृतियाँ, हूबहू पूर्व-नकलें यूनान में भी थीं। यूनानियों की भाषा विकृत, पतित संस्कृत थी, जिसमें शिव को केवल

बकेस (त्र्यम्बकेश) सम्बोधित किया गया था। अतः 'बैकेनेलियन' शब्द का अर्थ केवल 'शिव'-सम्बन्धी होना चाहिए। किन्तु अब 'बैकेनेलियन' शब्द का अर्थ बकेस अर्थात् त्र्यम्बकेश के भक्तों द्वारा की जानेवाली मदमस्त अनियंत्रित शराब-खोरी और नाच-मंडली ही रह गया है।

विश्व के शेष भागों के समान ही शिव ईसाइयत-पूर्व के पश्चिम क्षेत्रों की क्षत्रिय योद्धा-जातियों का युद्ध देवता भी था। शत्रुओं पर निर्णायक आक्रमणों का नेतृत्व करते समय वैदिक योद्धा-कुल शिव के नाम की गर्जना करते थे। मराठों का 'हर-हर महादेव' युद्ध-नाद, राजपूतों का 'जय एकलिंग जी' जय-जयकार और सिक्खों का 'सत् श्री अकाल' सिंहनाद ऐसे ही कुछ उदाहरण हैं।

रोमन सेनाएँ भी विजय-प्रयाण करते समय एक रथ में शिवलिंग या भगवान् की प्रतिमा स्थापित कर लेती थीं और फिर 'शिव-शिव हरे' का उच्च स्वर से जय-नाद करती हुई रथ का अनुसरण करती थीं।

यह वही विजय-नाद है जो बाद में 'सिपसिप हरे' उच्चारण किया गया और अब उसी का वर्तमान रूप 'हिप-हिप हुर्रा' है। उस संपूर्ण वैदिक इतिहास को ईसाइयों द्वारा बड़े सुनियोजित ढंग से नष्ट कर दिया गया है।

एकमेव कार्यकारी देवता होने के कारण शिव (जिन्हें साम्ब, सदाशिव, शंकर, महादेव, आशुतोष आदि जैसे अन्य अनेकों नामों से जाना जाता है) पितृ-ईश्वर के रूप में सर्वाधिक लोकप्रिय और व्यापक स्तर पर पूज्य, आराध्य थे।

चूँकि शत्रुओं पर पूरी शक्ति से आक्रमण करने के लिए प्रहार-उद्यत सेनाओं को प्रेरित करने के उद्देश्य से युद्ध-घोषों में शिव का आह्वान किया जाता था, इसलिए अंतर्राष्ट्रीय संधियों पर हस्ताक्षर करते समय भगवान् शिव को दैवी साक्षी के रूप में स्वीकार किया जाता था। हित्ती और मित्तानी जन-जातियों के मध्य संधि की शर्तों का उल्लेख करती हुई चिकनी मिट्टी की पट्टियों पर दैवी साक्षियों के रूप में अनेक वैदिक देवगणों के नाम अंकित हैं जिनमें भगवान् शिव भी एक साक्षी हैं।

समय बीतते-बीतते 'शंकर' नाम को अंगरेज़ी में 'कंकर' लिखा जाने लगा, किन्तु उच्चारण तब भी 'शंकर' ही किया जाता रहा। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि अंगरेज़ी में 'सी' अक्षर कई बार 'स' बोला जाता है और अन्य अवसरों पर 'क' भी उच्चारण किया जाता है जैसे अंगरेज़ी शब्द 'ऐक्सेप्ट' (Accept, स्वीकार करना) में है। इसी भाँति 'कंकर' (कौंकौर, Concor) शब्द

में भी पहला 'सी' अक्षर 'स' बोला जाना चाहिए और दूसरा 'सी' अक्षर 'क' का उच्चारण करना चाहिए, मात्र यह अनुभव करने के लिए कि अंगरेज़ी 'कौंकौरडट' (Concordat) और 'कौंकौरडियम' (Concordium) शब्दों में प्रारंभिक अंश वैदिक देव शंकर (संकर या सोनकर) का ही नाम है। बाद का 'डट' संस्कृत का 'दत्त' शब्द है जिसका अर्थ 'दिया हुआ' या 'सौंपा हुआ' है। अतः शाब्दिक रूप में कहा जाए तो 'कौंकौरडट' का अर्थ होना चाहिए '(भगवान्) शंकर द्वारा दिया गया'। शब्दकोश में दिया गया अर्थ है 'पोप और एक धर्म-निरपेक्ष सरकार के मध्य समझौता'। आगे आनेवाले किसी एक अध्याय में मैं बताऊँगा कि किस प्रकार रोम में वेटिकन में पोप का परमधर्माध्यक्ष-पद वैदिक शंकराचार्य की पीठ हुआ करती थी और पोप अर्थात् पापह् (भगवान्) शंकर के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता था, यद्यपि शंकर की वर्तनी 'सी' से कर देने के कारण 'कौंकर' या 'कंकर' ही उच्चारण होने लगा। परिणामस्वरूप पोप और एक धर्म-निरपेक्ष सरकार के बीच किया गया समझौता (करार) 'कौंकरडट' (Concordat) था अर्थात् भगवान् शंकर द्वारा दिया गया या उनके नाम में दिया गया था।

एक अन्य शब्द 'कौंकौरडियम' जो 'कौंकौरडट' (अर्थात् दो वर्गों के मध्य समझौता का अर्थद्योतक) के समान ही है, आधुनिक प्रयोग में संस्कृत का 'शंकर देवम्' है। शब्द 'कौंकोरडियम' के रूप में वर्तनी किया गया संस्कृत-शब्द 'शंकर देवम्' वास्तविक अर्थ 'शंकर देव को' का द्योतक है जिसका निहितार्थ भगवान् शंकर के पवित्र नाम में (अर्थात् प्रसंविदा, प्रतिज्ञा-पत्र, कोवनैन्ट) है जिसका कभी भी उल्लंघन नहीं किया जाना चाहिए।

ईसाइयत-पूर्व युगों में भारत के समान ही यूरोप में परमधर्माध्यक्ष-पद वैदिक शंकराचार्य का पद ही होता था। पोप को पृथ्वी पर भगवान् शिव का प्रतिनिधि, प्रतीक ही माना जाता था। अतः धर्म-निरपेक्ष सरकारों के साथ किए गए पोप के करार, समझौते 'कौंकौरडट' अर्थात् (संस्कृत में) शंकर-दत्त अर्थात् 'ईश्वर शंकर द्वारा दिए गए' माने जाते हैं।

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि किस प्रकार 'सेन्टार' (Cantaur), कौंकौरडट (Concordat), कौंकौरडियम् (Concordium), बकेस (Bacchus) और हिप-हिप-हुर्रा (Hip-Hip-Hurra) जैसे अनेक शब्द ईसाइयत-पूर्व के पश्चिम में संस्कृत भाषा और वैदिक संस्कृति के प्रचलन को, उसकी विद्यमानता को स्पष्टतः दर्शाते, चरितार्थ कर देते हैं। परिणामतः, इससे न

केवल आध्यात्मिकता, अपितु वैदिक इतिहास भी समक्ष प्रकट हो जाता है।

पोप वैदिक शंकराचार्य के रूप में शिव की मूर्तियों की और शिवलिंग के रूप में विख्यात उनके प्रतीक-चिह्नों की भी पूजा-अर्चना करते थे। इसी कारणवश वह भवन सिसटाइन चैपल (Sistine Chapel) कहलाता था जहाँ धर्म-प्रमुखों द्वारा पोप का निर्वाचन किया जाता है। यहाँ सिसटाइन शब्द 'शिवस्थान' संस्कृत-शब्द का विकृत उच्चारण है। शिव-स्थान का अर्थ है शिव मंदिर।

भगवान् शिव का वाहन व समाचार, संवाद, धर्म-विज्ञप्ति, पहुँचानेवाला वृषभ अर्थात् नन्दी (बैल) है। इसीलिए पोप का धर्म-निर्देश 'बुल' (नन्दी) कहलाता है।

सन् 312 ईसा पश्चात् के आसपास जब नव-दीक्षित सम्राट् कौन्स्टैन्टाइन ने वैदिक वैटिकन (वाटिका) पर चढ़ाई कर दी और वैदिक सर्वोच्च धार्मिक-प्रधान की हत्या करने के बाद अपने मनोनीत व्यक्ति को ईसाइयत के पोप के रूप में वहाँ प्रस्थापित कर दिया, तब वाटिका-स्थित (वैटिकन) मंदिरों से भगवान् शिव की मूर्तियों और उनके प्रतीक-चिह्नों को तथा अन्य वैदिक देवगणों को उखाड़ फैंकने की प्रक्रिया शुरू हो गई।

उनमें से कुछ देव-प्रतिमाएँ व उनके प्रतीक-चिह्न, जो बाद में वाटिका-भूमि में दबे हुए उपलब्ध हुए थे, वैटिकन-स्थित 'एट्रूस्कन म्यूज़ियम' (संग्रहालय) में प्रदर्शित किए गए हैं। वहाँ गए दर्शनार्थियों ने उक्त संग्रहालय में भगवान् शिव के लगभग आधा दर्जन रूप देखे बताए हैं। किन्तु उनसे भी बहुत अधिक तो अन्यत्र ले-जाए गए थे, या छुपा दिए अथवा भूमि में दबा दिए गए थे। वैटिकन की वैदिक-संस्थापना पर उक्त ईसाइयत के शाही आक्रमण की अफरा-तफरी में वैदिक संस्कृत धर्मग्रन्थों को बड़ी संख्या को लूटा और ध्वस्त किया गया, या फिर उनको छुपा दिया गया या अन्यत्र भेज दिया गया।

अंगरेज़ी में 'अंडर' (Under) शब्द संस्कृत भाषा का 'अंतर्' शब्द है जिसका अर्थ अंदर का, अन्दरूनी है जैसे अन्तर्ध्यान, अंतर्-आत्मा आदि में। अतः 'अंडरलिंग' (Underling) शब्द संस्कृत का 'अंतर्लिंग' है। यह वैदिक मंदिर-परम्परा में दो तलों पर एक शिवलिंग के ठीक ऊपर दूसरा शिवलिंग स्थापित करने की प्रथा से व्युत्पन्न है। ऐसे मामले में तहखाने, निचले स्थान वाले शिवलिंग को अंतर्लिंग कहा जाता है (जिसकी अंगरेज़ी वर्तनी 'अंडरलिंग' है)।

शिव के पुत्र गणेश का उल्लेख यूनानी दन्तकथाओं में जेनस (Jenus) के

नाम से किया गया है जो दो मुखाकृतियों वाला देवता कहा गया है। जेनस को गणेश के रूप में ही उच्चारित किया जाना चाहिए यह अनुभव करते हुए कि वह शिक्षा और शान्ति का देवता है जिसे पौराणिक पद्धति के अनुसार अन्य सभी देवताओं से पूर्व पूजा, आराधा जाता है। विश्वास किया जाता है कि गणेश मानव-जीवन में सामान्य कल्याण की व्यवस्था करते हैं। फलस्वरूप गणेश (उपनाम जेनस) की प्रतिमाएँ, पीठ से पीठ मिलाकर, घरों और नगरों के प्रवेश-द्वारों के शिखरों पर स्थापित की जाती हैं जिससे ये अपनी शुभ-दृष्टि घर-नगर के अंदर और बाहर डालती रहें और सभी विघ्न-बाधाओं, अशुभ बातों से रक्षा करें।

वास्तव में यूनान में प्रवेशद्वारों पर, पीठ-से-पीठ जोड़कर, गणेश की प्रतिमाओं का एक जोड़ा था। किन्तु वैदिक संस्कृति और संस्कृत भाषा का यूनान और शेष यूरोप में ईसाइयत के आक्रमण के कारण समय बीतने के साथ लोप होता गया। पीठ-से-पीठ जोड़कर स्थापित की गई प्रतिमाओं को दो-मुख वाली एक ही देव-प्रतिमा भूल से मान लिया गया।

प्राचीन पौराणिक कथाओं के अनुसार गणेश (उपनाम जेनस) गजानन-ईश्वर स्वयं पितृ-ईश्वर शिव के पुत्र हैं।

पितृ-ईश्वर शिव की अर्धांगिनी पार्वती, दुर्गा, उमा, चंडी, भवानी, मरिअम्मा, और बहुत सारे अन्य नामों से पुकारी जाती हैं।

फ्रांस में नोत्रे डेम (Notre Dame) मंदिरों की भरमार है। नोत्रे डेम अर्थात् मातृ-देवी ईसाइयत-पूर्व फ्रांस की राष्ट्रीय-देवी थी। इसके नगर 'तोलाउज' (Taulouse) का स्वयं का नाम भी इसी कारण पड़ा है क्योंकि इसका केन्द्रीय, मुख्य उपासना-गृह, 'तुलजा भवानी' मातृ-देवी का था। देवी भवानी का वह संस्कृत-विशेषण तुलजा ही अंगरेज़ी में 'तोलाउज' की वर्तनी का होकर ऐसा उच्चारण किया जाता है।

जब ईसाइयत यूरोप पर प्रभुत्व कर बैठी, तब पौराणिक देवी-देवताओं को अत्यन्त दक्षता, निपुणतापूर्वक ईसाई-रूप में अंगीकार कर लिया गया। इस प्रकार, उदाहरणार्थ मरिअम्मा को 'माँ मेरी' के रूप में शाब्दिक तौर पर अनूदित कर दिया गया। दक्षिण भारतीयों के मध्य विशेष रूप में, मरिअम्मा मंदिर बहुत लोकप्रिय हैं। माँ के लिए संस्कृत शब्द 'अम्बा' है। उक्त 'अम्बा' शब्द हिन्दी तथा अन्य अनेक भाषाओं में 'अम्मा' बन गया है। अतः 'माँ मेरी' के रूप में मरिअम्मा एक पौराणिक देवी है।

मेरे शोध-निष्कर्षों के अनुसार, जिनकी विशद व्याख्या मैं अपनी पुस्तकों 'क्रिश्चियनिटी इज़ कृष्ण-नीति' [क्रिश्चियनिटी कृष्णनीति है] और 'वर्ल्ड वैदिक हैरिटेज' [वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास] में कर चुका हूँ—जीसस कोई व्यक्ति हुआ ही नहीं। ऐसे किसी व्यक्ति का कभी कोई अस्तित्व नहीं रहा। उसकी 33-वर्षीय जीवन-कथा सर्वथा झूठ, मिथ्या है। उसकी माता 'मेरी' कुँआरी समझी जाती है। जिस क्षण कोई महिला किसी शिशु को जन्म देती है, वह माँ बन जाती है और कुँआरी, कुमारी, अक्षत-योनि नहीं रह जाती। अतः कुमारी मेरी, जीसस की माँ विपरीतार्थक शब्द है, परस्पर-विरोधी है। यह विवरण ईसाइयत का फ़रेब, उसकी जालसाज़ी भी उघाड़ देता है। पौराणिक 'माँ देवी' अर्थात् मरिअम्मा जिसके मंदिर ईसाइयत-पूर्व यूरोप में प्रचुर संख्या में थे, चुपके से पिछले द्वार से ईसाइयत-जनश्रुति में 'माता मेरी' के रूप में प्रविष्ट करा दी गई। चूँकि वह 'मातृ देवी मेरी' के रूप में पहले ही पूजी जाती थी, इसलिए उसे 'जीसस की माता' कहकर विज्ञापित, प्रसिद्ध कर दिया गया।

ईसाइयत में पौराणिक देवी-पूजा के सातत्य का एक अन्य उदाहरण काल्पनिक ईसाई नाम 'अन्ना पेरिना' है। वैदिक परम्परा में 'अन्नपूर्णा' अनाज/खाद्यान्न की बहुलता की देवी है। उक्त नाम का यह प्रथम अंश ही है जो ईसाई जनश्रुति में 'अन्ना' अर्थात् 'अन्न' के रूप में अभी तक प्रचलन में है।

हम अब स्वयं जीसस क्राइस्ट (Jesus Christ, कृष्ट) के नाम पर ही आ जाते हैं। जीसस क्राइस्ट का नाम, आइए, हम अंगरेज़ी में छोटे प्रथम 'जे' (ज) अक्षर से लिखें (jesus Christ), इसी के साथ-साथ पौराणिक नाम 'ईशस् कृष्ण' (jesus Chrisn, भगवान् कृष्ण या कृष्ण का अर्थ-द्योतक) भी लिखें जिससे स्पष्ट हो जाए कि ईसाइयत-पूर्व का देवता 'ईशस् कृष्ण' थोड़ा अशुद्ध उच्चारण किया गया था और जीसस क्राइस्ट (कृष्ट) के रूप में विज्ञापित कर दिया गया था।

भारत में भी कुछ समुदाय जैसे बंगाली और कन्नड़ी लोग अपने देवता 'कृष्ण' का उच्चारण 'कृष्ट' ही करते हैं।

प्राचीन लैटिन भाषा में लघु 'आई' (ई) और जे (ज) परस्पर परिवर्तनीय हो गए क्योंकि वे इतने अधिक एक-जैसे लगते थे कि उनको एक की बजाय दूसरा समझ लिया जा सकता था। जैसे उदाहरण के लिए 'स्कैन्डिनेवियाई' नाम 'बिओन्सटिअरना' (Bionstierna) को 'बिजोन्सटिअरना' (Bijonstierna) भी

लिखते हैं तथा इसका उलटा भी हो जाता है।

यह भी ज्ञात है कि एक शिशु/बाल ईश्वर 'बाल कृष्ण' ('बाल कृष्ट' उच्चरित होकर…अर्थात्, बच्चा कृष्ण) ईसाइयत-पूर्व यूरोप में पूजा जाता था। समय बीतते-बीतते 'बाल' एक देवता समझा जाने लगा और 'कृष्ण' अर्थात् कृष्ट दूसरा देवता।

ईसाइयत-पूर्व के यूनान में (और तथ्यतः यूरोप के अन्य भागों में भी) 'ईशस्' (ईसस) नाम प्रचलित था। उदाहरण के लिए एक यूनानी सुप्रसिद्ध वकील 'ईसस' नाम का ही था जो 'महा ईश्वर' के अर्थद्योतक संस्कृत के 'ईश्वर' शब्द का संक्षिप्त रूप है।

ईश्वर कृष्ण उपनाम हरकुलिस (हेराक्लीज़, हेराकिल्स वर्तनी, उच्चारण भी करते हैं) के मंदिर संपूर्ण यूरोप में विद्यमान थे। उदाहरण के लिए, स्पेन में कैडिज़ के निकट अन्तरीप 'पवित्र' माना जाता था क्योंकि इसमें हरकुलिस का एक अतिविशाल मंदिर था जिसे नाविक लोग सागर में बहुत दूर से ही देख लिया करते थे। इस प्रकार यह एक अतिमहत्त्वपूर्ण निशान का काम करता था।

जिब्राल्टर के जलडमरूमध्य के दोनों ओर की चट्टानों को 'हरकुलिस के खंभे' (Pillars of Hercules) कहा जाता है क्योंकि वहाँ वास्तव में एक अतिविशाल हरकुलिस-मंदिर विद्यमान था जब तक कि ईसाइयों ने अपने मूर्तिभंजक धार्मिक उन्माद में उसे भूमिसात्, ध्वस्त नहीं कर दिया।

हरकुलिस संस्कृत का 'हरि-कुल-ईश' यौगिक शब्द है, जिसका अर्थ 'हरि के कुल का ईश, भगवान्' है। भगवान् विष्णु को हरि कहा जाता था। उनके वंश, कुल को 'हरि-कुल' कहते हैं। प्रत्यय 'ईस' (जिसका उच्चारण 'ईश' होता है) का अर्थ भगवान्, ईश्वर, स्वामी है। अतः संस्कृत-शब्दावली 'हरि-कुल-ईश' का निहितार्थ भगवान् कृष्ण है। इसकी 'हेराक्लीज़' वर्तनी व उच्चारण भी होता है। ईसाई-युग से पूर्व यूनान के शासकों ने भगवान् कृष्ण और उनके भाई 'बलराम' की छाप, निशानवाले सिक्के जारी किए थे। क्राइस्ट (कृष्ट) तो कृष्ण नाम का बाद में किया गया अशुद्ध उच्चारण था। इससे यह स्पष्ट, प्रत्यक्ष है कि ईसाइयत-पूर्व युगों में महाभारत-युद्ध में भाग लेनेवाले कृष्ण, जो पौराणिक अवतार थे, भारत के समान ही, विश्व के अन्य सभी भागों, क्षेत्रों में श्रद्धा से शिरोधार्य थे और सर्वत्र पूजे जाते थे।

ईसाइयत-पूर्व यूरोप में हैरी (हरि) का नाम हेनरि नाम का संक्षेप विश्वास

किया जाता है, किन्तु हम जो कुछ ऊपर कह चुके हैं उसके अनुसार यह भी हो सकता है कि इसका विपरीत ही सही हो अर्थात् हैरी उपनाम हरि ही मूल नाम हो और हेनरि इसका ईसाई-छद्मरूप हो।

हमने, इस प्रकार, देख लिया है कि भारत के समान ही पश्चिमी संसार में भी पितृ-ईश्वर भगवान् शिव, उनकी अर्धांगिनी मातृ देवी, उनके पुत्र गणेश उर्फ़ जेनस, देवी अन्नपूर्णा, अन्य देवी मरिअम्मा और भगवान् कृष्ण पूज्य थे, आराध्य थे, उनकी वन्दना होती थी। स्पष्टतः ईसाइयत-पूर्व का संसार पौराणिक संसार ही था। यह इतिहास का वह तथ्य है जो यूरोपीय स्मृति से विस्मृत, ओझल हो गया है, या फिर ईसाई-धर्मान्ध उग्रवादियों ने रद्द, अस्वीकार, अमान्य कर दिया है। इस नूतन ज्ञान से सुसज्जित, सन्नद्ध होकर यूरोपीय शब्दकोशकार अपने अनेक शब्दों की खोज इन देवी-देवताओं के माध्यम से कर सकेंगे। संस्कृत भाषा और वैदिक संस्कृति से भी उनको असंख्य शब्दों की सही व्युत्पत्ति का पता चल जाएगा जिसके लिए वे अभी तक किन्हीं ग़लत स्रोतों पर आधारित थे, उनको श्रेय-यश देते थे।

'हरकुलियन' शब्द लें। किंवदन्ती-गत 12 'विशेष श्रम' जो हरकुलिस की यश-गरिमा में उल्लेख किए जाते हैं वे वास्तव में भगवान् कृष्ण की चमत्कारी, अलौकिक उपलब्धियाँ हैं, जैसे नदी में रहनेवाले महाकाय अजगर-सदृश शक्तिशाली सर्पराज कालिया नाग से उनका संघर्ष, अपनी छोटी-सी तर्जनी अँगुली पर गोवर्धन-पहाड़ी उठा लेना आदि। यूनानियों से धर्म-परिवर्तित ईसाइयों ने 'हरिकुल-ईश' संस्कृत-शब्दावली को 'हरकुलिस' से जोड़ते-मिलाते समय चतुराई, धूर्ततापूर्वक भगवान् कृष्ण की उन 12 चमत्कारी, अलौकिक लीलाओं को मनगढ़न्त 12 प्रसंगों में बदल दिया।

इसी प्रकार क्राइस्ट की काल्पनिक जीवन-कहानी का अकस्मात् अन्त, पटाक्षेप भी क्रूस-(फाँसी) चढ़ाकर मनगढ़न्त रूप में ही कर दिया गया क्योंकि मनमौजी दौरे, तरंग में झूठी कहानियाँ लिखने, गढ़नेवालों को परेशानी रही कि यदि जीसस की कहानी और भी अधिक लम्बी करते गए तो उसके पूर्ण जीवन-क्रम को भरने, पूरित करने के लिए न जाने कितनी और कल्पनाएँ करनी पड़ेंगी। 'जीसस' के अधिक लम्बे जीवन-कालखण्ड में भरी गई काल्पनिक घटनाओं के विवरण अन्य समर्थक तत्कालीन साक्ष्य के अभाव में डगमगाकर धराशायी हो जाते।

इस पुस्तक की भूमिका में हमने जिस सारांश को उद्धृत किया है उसमें ऑक्सफोर्ड शब्दकोश संस्थापना ने आग्रहपूर्वक कहा है कि उनके व्युत्पत्ति-विषयक स्पष्टीकरण ऐतिहासिक साक्ष्य के कारण न्यायोचित, संगत हैं। आशा की जाती है कि इस पुस्तक के इस अध्याय तथा अन्य भागों में प्रस्तुत किए गए ऐतिहासिक तथ्यों को ध्यान में रखते हुए उनको अपनी धारणा में परिवर्तन करने की आवश्यकता महसूस होगी कि न केवल उन्हें अपितु विश्वभर के बुद्धिजीवियों को भी ईसाइयत के धर्मान्ध उग्रवादियों ने धोखा दिया है जिन्होंने यूरोप के पूर्वकालिक वैदिक इतिहास को मिटा दिया और उसके स्थान पर झूठा, जाली ईसाइयत का इतिहास गढ़ दिया। उस इतिहास की रूप-रेखा मेरी 1315-पृष्ठीय पुस्तक 'वर्ल्ड वैदिक हैरिटेज' (वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास) में प्रस्तुत की गई है। उस महाग्रंथ में दिए गए विवरण को दृष्टि में रखकर न केवल विश्व-इतिहास तथा पश्चिमी शब्दकोश-निर्माण में, अपितु ज्ञान की कुछ अन्य शाखाओं, विधाओं में भी संशोधन, परिमार्जन की आवश्यकता होगी।

मानवता के आदि-प्रारंभ से लेकर महाभारत-युद्ध की समाप्ति (सन् 5561 ईसवी पूर्व) तक सम्पूर्ण विश्व में मात्र वैदिक संस्कृति और संस्कृत भाषा ही थी। उक्त महायुद्ध के कारण हुए भू-खंडीय घोर विनाश ने वैदिक व्यवस्था को सर्वथा छिन्न-भिन्न कर दिया। फिर भी, जो कुछ प्रचलन में सभी क्षेत्रों में विद्यमान रहा वह वैदिक संस्कृति का चिथड़ा-गुदड़ा ही था जब तक कि ईसाई और मुस्लिम अत्याचार ने उन सूत्र-धागों को भी अपने ही सिद्धान्तों, विचारों से नहीं ढक डाला। इतना सब-कुछ हो जाने के बाद भी वैदिक संस्कृति के अवशिष्ट अंश ईसाइयत और मुस्लिम (इस्लामिक) पृष्ठावरण, परत से आधुनिक जीवन के लगभग सभी पक्षों में झिलमिलाते, जगमगाते मिलते रहते हैं जैसा इस पुस्तक के विभिन्न अध्यायों के माध्यम से अभी तक संकेत-रूप में प्रस्तुत किया गया है।

10
वैदिक शिक्षा-सम्बन्धी शब्दावली

रामायण, महाभारत तथा अन्य वैदिक साहित्य से ज्ञात होता है कि वैदिक ऋषियों ने विश्व-भर में वैदिक विद्याश्रम, पाठशालाएँ खोल रखी थीं जहाँ शिक्षा दी जाती थी।

5 से 8 वर्ष की आयुवाले बालकों का औपचारिक यज्ञोपवीत (जनेऊ) संस्कार किया जाता था जो उनको उनके माता-पिता के साथ घर पर रहने की अवधि समाप्त हो जाने का, और अगले 10 से 20 वर्षों तक वन-स्थित शालाओं में प्रवेश व निवास-हेतु गुरु के पास जाकर शिक्षा ग्रहण करने का संकेत होता था। यह व्रत-बंध कहलाता था अर्थात् यज्ञोपवीत उस शपथ का द्योतक था कि इस बालक ने अपना जीवन निर्जन, एकान्त में रहकर ज्ञानार्जन-हेतु ब्रह्मचर्य का पालन व पूर्ण एकाकी मन से निष्ठावान होने का व्रत लिया है। पवित्र जनेऊ ब्रह्मचारी बालक के बाएँ स्कन्ध से लटकाया जाता था और यह कटि, कमर तक पहुँचता था।

बालकों को स्व-घरों से इस प्रकार पृथक् करना उस स्वास्थ्यवर्धक सिद्धान्त, उक्ति पर आधारित था जिसका निहितार्थ है कि बालक का पाँच वर्ष की आयु तक तो लालन-पालन होना चाहिए, किन्तु उसके बाद उसकी शिक्षा-दीक्षा कठोर अनुशासन द्वारा नियमित की जानी चाहिए।

घरों से पृथक्ता का नियम बालिकाओं के लिए नहीं था। उनको शिक्षा उनके अपने घरों में ही परिवार के गुरुजनों द्वारा दी जाती थी।

चूँकि संपूर्ण प्राचीन विश्व में शिक्षा की इसी पद्धति का अनुसरण किया जाता था, इसलिए मैं इस अध्याय में यह बताना चाहता हूँ कि आधुनिक शैक्षिक शब्दावली का सतर्क विश्लेषण किस प्रकार, वैदिक संदर्भ से सम्बन्ध त्याग देने के कारण, बेहूदा सिद्ध होता है।

स्वयं 'स्कूल' (School) शब्द लें। इसका ज्यामितीय-प्रमेय के समान

हल, समाधान करें। इसके 'सी' अक्षर की वर्णमालानुरूप ध्वनि 'सी' ही रखें। उक्त अक्षर-सहित, स्कूल को 'स्सीऊल' (Ssihool) लिखा जा सकता है।

हम अब यह भी स्मरण रखें कि संस्कृत की 'अ' ध्वनि को प्रायः अंगरेज़ी में 'ओ' ध्वनि-रूप दे दिया जाता है और यह 'ओ' लिख दी जाती है। तदनुसार हम 'ओ' अक्षर 'अ' से बदल दें और स्कूल शब्द को 'स्शाल' (Sshaal) के रूप में लिखें। वह लगभग संस्कृत का शाला शब्द है जो वैदिक है।

अंगरेज़ी 'प्राइमरी' (Primary) शब्द संस्कृत का 'प्रथमरी' शब्द है। संस्कृत का व्यंजन 'थ' त्याग दिया गया है जिससे अंगरेज़ी शब्द 'प्राइमरी' मात्र रह गया है।

अंगरेज़ी भाषा में 'प्राइमरी' शब्द का अर्थ प्राथमिक, प्रारंभिक, अल्पविकसित या फिर 'प्राइम टाइम' (Prime time, सर्वश्रेष्ठ समय) और 'प्राइम मिनिस्टर' (प्रधानमंत्री) जैसे शब्दों में प्रथम महत्त्व या श्रेणी/स्तर का अर्थद्योतक हो सकता है। यह दो प्रकार का अर्थ संस्कृत की उस पद्धति से घटित होता है जिसमें निम्नतम स्तर को पहला, प्रारंभिक या सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण श्रेणी/स्तर को पहला, प्रमुख पदनाम दिया जाता है जो प्रथम शब्द द्वारा प्रकट किया जाता है। तथापि, अंगरेज़ी शब्द ने संस्कृत अक्षर 'थ' छोड़ दिया है और 'प्राइम' के रूप में संस्कृत-शब्द का विकृत, टूटा-फूटा रूप स्वीकार, अंगीकार कर लिया है।

'मैट्रीकुलेशन' (Matriculation) शब्द संस्कृत का यौगिक शब्द 'मातृ-कुलेषु-न' (Matri-culeshu-na) है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'अब और अधिक माता के परिवार में नहीं'।

स्पष्टतः यह वह शब्द है जिसे गुरुकुल-आश्रमशाला में शिक्षा-पद्धति का वैदिक प्रकार अव्यवस्थित और समाप्त हो जाने के बाद संस्कृत से ले लिया गया था। इसे माता-पिता के घरों से विद्यालय में उपस्थित होनेवाले बच्चों से बदल दिया गया था। अतः विद्यालय में शिक्षा-समाप्ति के लिए निर्मित संस्कृत-शब्द 'मातृ-कुलेषु-न' था जो उस चरण/स्तर का संकेतक था जिसके आगे घर में रहकर, माता के पास निवास कर, शिक्षा प्राप्त करना संभव नहीं था। निहित भाव यह था कि शाला की शिक्षा पूर्ण कर लेने के बाद विद्यार्थी को महाविद्यालयी-शिक्षा प्राप्त करने के लिए अन्यत्र जाना पड़ेगा।

विद्यमान ऑक्सफोर्ड शब्दकोश का यह स्पष्टीकरण अपंग, लूला-लँगड़ा

और दूर की कल्पना है कि 'रजिस्टर' का अर्थद्योतक 'मैट्रीकुला' शब्द ही 'मैट्रीकुलेशन' शब्द-निर्माण का सूत्र है। यदि सुझाव यह है कि उक्त परीक्षा उत्तीर्ण करनेवालों के नाम किसी रजिस्टर में सूचीबद्ध किए जाते हैं, तब तो यह भी ध्यान में रखने की बात है कि किसी भी परीक्षा को उत्तीर्ण करनेवालों के नाम किसी-न-किसी उपयुक्त रजिस्टर (पंजिका) में लिखे ही जाते हैं। साथ ही 'मैट्रीकुलेशन' शब्द में अतिरिक्त शब्द 'शन' के 'टी आई ओ एन' अक्षर क्यों हैं? अतः सही स्पष्टीकरण यह है कि यह पूर्णतः संस्कृत उक्ति है जिसका अर्थ है कि पात्र-व्यक्ति अब और अपनी माता के साथ निवास नहीं कर सकेगा, अपितु उसे उच्चतर (महाविद्यालयी) शिक्षा के लिए बाहर जाना पड़ेगा। इसका संस्कृत का अक्षर-विभाजन है "मातृ-कुलेषु-न" = मैट्रीकुलेशन।

महाविद्यालय (कॉलेज) में प्रथम दो वर्ष 'इंटरमीडिएट' (Intermediate) स्तर के द्योतक हैं। उक्त 'इंटर-मीड-एट' शब्द संस्कृत के शब्द 'अंतर-मध्य-स्थ' का गड़बड़ उच्चारण है जिसका अर्थ वह मध्य अवस्था है जो शाला की समाप्ति व कला-स्नातक (बी० ए०) पाठ्यक्रम के प्रारंभ के बीच होती है।

बी० ए०, बी० एस-सी० और बी० ई० उपाधियाँ किसी भी व्यक्ति को 'बैचलर' (Bachelor) प्रमाणित करती हैं। 'बैचलर' शब्द स्वयं ही गड़बड़ किया हुआ संस्कृत का 'ब्रह्मचारी' शब्द है जो इन दोनों शब्दों में विद्यमान व्यंजन 'ब····च····र' से स्पष्ट देखा जा सकता है। वैदिक भाषा में 'ब्रह्मचारी' का अर्थ वैदिक ऋषियों के शिक्षा-गुरुकुलों में अध्ययन करनेवाला अविवाहित, ब्रह्मचारी बालक होता था।

सफल होनेवाली विवाहिता महिलाओं के मामलों में तो दी जानेवाली उपाधि होनी चाहिए "विवाहिता महिला····वि० म० या एम० डब्ल्यू०····मैरीड वूमन (कला, विज्ञान, चिकित्सा, वाणिज्य, इंजीनियरी आदि), किंतु उस विवाहिता महिला को (कला, विज्ञान, चिकित्सा, वाणिज्य, इंजीनियरी आदि का) 'बैचलर' (ब्रह्मचारी) कहना दुगुनी बेहूदगी होगी क्योंकि स्वयं अंगरेज़ी शब्दकोश ही किसी अविवाहिता महिला के लिए 'बैचलर' शब्द-प्रयोग को मना करता है, और दूसरी बात यह है कि चूँकि वह 'विवाहिता' है इसलिए 'बैचलर' शब्द उसके लिए प्रयुक्त नहीं हो सकेगा, जबकि किसी विवाहित पुरुष को भी 'बैचलर (ब्रह्मचारी) नहीं कहा जा सकता।

फिर क्या कारण है कि विश्वविद्यालय, जो ज्ञान के उच्चतम केन्द्र हैं, सारे

संसार में स्त्रियों को 'बैचलर' उपाधि प्रदान करने में और विवाहित पुरुषों को 'बैचलर' उपाधि को विवाहोपरान्त भी अपने पास रख लेने और उसका उपहास, अपमान करने की अनुमति देकर उचित, न्यायप्रिय कार्य कर रहे हैं—माना जाता है?

क्या विश्वविद्यालय के नियमों-विनियमों में यह निर्धारित नहीं होना चाहिए कि 'बैचलर' उपाधि रखनेवाले सभी पुरुषों को विवाहोपरान्त आवेदन करना चाहिए कि उक्त उपाधि को उपयुक्त एम० एम० (मैरीड मैन···· कला, विज्ञान, आदि)···· वि० पु० (विवाहित पुरुष···· कला, विज्ञान, आदि) उपाधि में बदल दिया जाए?

ऊपर उस हास्यापद स्थिति की अतिसूक्ष्म कुछ अगणित अनोखी जटिलताओं की विशद चर्चा पाठक को यह बताने के लिए की गई है कि किसी विद्यार्थी के शैक्षिक जीवन से असंगत हो जाने पर उसके विवाहोपरान्त भी, हज़ारों वर्ष की अवधि बीत जाने के पश्चात् भी 'बैचलर' (ब्रह्मचारी) की उपाधि प्रदान करते रहना इस तथ्य का प्रबल और पूर्ण प्रमाण है कि मानवता के अभ्युदय से प्रारंभ कर इस्लाम व ईसाइयत के शुरू होने तक संपूर्ण विश्व में संस्कृत-शिक्षा की वैदिक प्रणाली ही प्रचलित थी। क्योंकि, मात्र उस प्रणाली के अंतर्गत ही अपनी शिक्षा की समाप्ति तक सभी बालकों को ब्रह्मचारी (बैचलर) ही रहना पड़ता था।

आइए, अब हम 'कॉलेज' (College) शब्द पर दृष्टिपात करें जहाँ किसी भी व्यक्ति को 'मैट्रीकुलेशन' परीक्षा के बाद अध्ययन करना पड़ता है।

यदि 'सी' अक्षर को अपना वर्णमालागत उच्चारण बनाए रखने दिया जाए, तो 'कॉलेज' शब्द 'सॉलेज' (Sollage) बन जाता है। संस्कृत भाषा में स्कूल अर्थात् किसी भी शिक्षा-संस्थान को 'शाला' कहते हैं। 'ज' अक्षर 'से जन्मा', 'से उत्पन्न' या 'के अनुक्रम में' का द्योतक है। अतः शब्द 'सॉलेज' (अर्थात् कॉलेज) संस्कृत का 'शाला-ज' अर्थात् वह संस्था है जो वहाँ से, उस बिन्दु से प्रारंभ होती है जहाँ शाला में पठन समाप्त हो जाता है।

आइए, हम अब आधुनिक शब्द 'करिकुलम' (कुरिकुलम, Curriculum) पर ध्यान दें। संस्कृत शब्द 'गौ' में, जो अंगरेज़ी भाषा में 'काऊ' (Cow) उच्चारण किया जाता है, हम पहले ही देख चुके हैं कि संस्कृत का 'ग' अक्षर 'क' बोला जाता है। अतः 'कुरिकुलम' शब्द में 'क' उच्चारण किए जा रहे 'सी' अक्षर

को 'ग' में बदल देने पर हमें 'गुरुकुलम्' शब्द प्राप्त हो जाता है जो यथार्थ संस्कृतमूल शब्द है जो गुरु की शिक्षण-संस्थापना का द्योतक है। क्या इस उदाहरण के बाद भी प्राचीन वैदिक, संस्कृत-शिक्षा का विश्व-प्रभुत्व होने के बारे में किसी प्रकार का संशय, संदेह शेष रह जाता है ?

'बैचलर'-स्तर के बाद मास्टर (Master) की उपाधि आती है एम० ए०, एम० एस-सी०, एम० कॉम०, एम० एड० आदि)। उक्त 'मास्टर' शब्द संस्कृत का 'महा-स्तर' है जिसका अर्थ है उच्च-स्तर अर्थात् 'उच्च-प्रतिभा'।

फिर उसके बाद आती है 'डॉक्टर' उपाधि। मूल रूप में तो शब्द 'डॉक्टर' (Doctor) का निहितार्थ है एक चिकित्सक व्यक्ति, किन्तु ज्ञान, विद्या की किसी भी शाखा में विशेषता प्राप्त करनेवाले व्यक्ति को भी 'डॉक्टर' (पी-एच० डी०) का पदनाम दिया जाता है। उसका कारण यह है कि शिक्षा की वैदिक पद्धति में चिकित्सा की आयुर्वेदिक प्रणाली में विशेषता प्राप्त करनेवाले व्यक्ति को 'कवि' कहा जाता था जबकि ज्ञान की अन्य किसी भी शाखा में उच्चतम प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्ति को भी 'कवि' के रूप में मान्य, सम्बोधित किया जाता था। इस प्रकार, आधुनिक शिक्षा-पद्धति ग़ैर-चिकित्सा विषयों में भी उच्च क्षमता को स्वीकार, शिरोधार्य कर 'डॉक्टरेट' प्रदान करने की प्राचीन वैदिक पद्धति का ही अनुसरण कर रही है।

ह्यूमैनिटीज़ (Humanities, मानविकी)

पाठ्यचर्या-गत अध्ययनों में स्पष्ट विभाजन है, जैसे एक ओर वे विषय हैं जो विज्ञान-विषयों के रूप में वर्गीकृत, श्रेणीबद्ध हैं, और दूसरे वे विषय हैं जो ह्यूमैनिटीज़ (मानविकी) समूह में रखे गए हैं। विज्ञान-विषयों का सम्बन्ध विश्व की उन भौतिक विशिष्टताओं से है जिनमें हम निवास करते हैं और इनमें भौतिकी, रसायन-शास्त्र और वनस्पति-शास्त्र जैसे विषय आते हैं। मानविकी में वे विषय आते हैं जो हमारे सामाजिक जीवन के भाग, अंश हैं जैसे इतिहास, सामाजिकशास्त्र और अर्थशास्त्र। यद्यपि विद्वान् लोग उक्त शब्द को प्रायः उपयोग में लाते हैं, तथापि संभवतः कोई भी इसके संस्कृत-मूल को नहीं जानता। यह जानते हुए कि अंगरेज़ी वर्ण 'एस' (स) और 'एच'(ह) परस्पर स्थान-परिवर्तन कर सकते हैं, आइए हम 'ह्यूमैनिटीज़' शब्द को 'सुमैनिटीज़ (Sumanities) करके लिखें जिससे इसका संस्कृत-अर्थ समझ में आ सके। संस्कृत में 'सु' का

अर्थ 'अच्छा' है। अगला अक्षर 'मन' है और अंतिम अक्षर 'इति' का अर्थ 'ऐसा' है। फलस्वरूप, इकट्ठे मिलकर तीनों अक्षरों का अर्थद्योतन उन विषयों से है जो मानवों के मानसिक विकास में सहायता करते हैं जिससे वे अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों को उचित प्रकार से निभा सकें, पूर्ण कर सकें। तथ्य रूप में तो 'ह्यूमन' (Human) शब्द स्वयं ही संस्कृत का 'सु-मन' शब्द है जो विचारशील, विवेकी प्राणी का पर्यायवाची है।

अंगरेज़ी 'एड्यूकेशन' (Education) शब्द भी यदि 'सी' और 'टी' वर्णों को छोड़कर लिखा जाए तो 'एड्यूएअन' पढ़ा जाएगा जिसे संस्कृत भाषा के 'अध्ययन' शब्द के रूप में पहचाना जा सकेगा।

अब हम 'स्टूडैन्ट' (Student, विद्यार्थी) शब्द पर ध्यान दें। मात्र परिवर्तन के लिए हम इसकी वर्तनी 'स्टूअडैन्ट' कर लें और फिर इसको तीन संस्कृत-भागों में बाँट दें। पहला अक्षर 'एस' संस्कृत में 'स' या 'सा' बोला जाता है ('स' पुरुष-वाचक, 'सा' स्त्रीवाचक है), दूसरा संस्कृत अक्षर 'तु' है जो 'वास्तव में' का अर्थद्योतक है, तीसरा अक्षर 'अडैन्ट' संस्कृत का 'अध्यवन्त' शब्द है जिसका अर्थ 'अध्ययन में व्यस्त' है। अतः पूरा 'स्टूडैन्ट' शब्द संस्कृत-भाषा का ही शब्द है जिसका अर्थ है 'वह जो वास्तव में अध्ययन में व्यस्त है'।

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश 'टीच' (Teach) और 'टीचर' (Teacher) शब्दों के कुछ अस्पष्ट और अस्थिर, अनिश्चित व्युत्पत्ति-विषयक स्पष्टीकरण प्रस्तुत करता है।

मूल संस्कृत-शब्द 'नीति' है जो 'रहने-जाने, शुरू करने, काम करने, आचरण या व्यवहार करने के प्रकार' का द्योतक है जैसे 'युद्ध-नीति' अर्थात् युद्ध, समर, रण किस प्रकार किया जाए—इस बारे में विचार-कर्म आदि; 'धर्म-नीति' अर्थात् जीवन में व्यक्ति नैतिकता, कर्तव्यनिष्ठा-पूर्वक कैसे आचरण, व्यवहार आदि करे। इस प्रकार, 'नीति' शब्द के अन्तर्गत ही एक चिकित्सक, इंजीनियर, आर्किटैक्ट, पुरातत्त्वज्ञ, या विधि-वेत्ता का व्यावसायिक कार्यकलाप आएगा। ऐसे सम्बद्ध क्षेत्रों में निरीक्षकों को 'नीतिचर' कहा जाता था जहाँ 'चर' शब्द का अर्थ 'गति' था अर्थात् चारों ओर जाना अथवा अपने व्यावसायिक क्षेत्र में आगे बढ़ना। परिणामस्वरूप, ऐतिहासिक फेर-बदल, उतार-चढ़ाव में अंगरेज़ी शब्द 'टीचर' में प्रारंभ का संस्कृत-शब्द 'नी' गिर गया, विलग हो गया। 'टीच' शब्द अब संस्कृत के यौगिक शब्द 'नीतिचर' का एक क्षुद्र अंश ही रह गया है।

गुरु अपने शिष्य, छात्र को जो शिक्षण करता है वह संस्कृत भाषा में 'दीक्षा' है। उसकी संस्कृत में क्रिया 'दीक्षण' (Diction) है। वह शब्द अपने मूल उच्चारण और अर्थ में अंगरेज़ी भाषा में 'डिक्शन' के रूप में ज्यों का त्यों, अक्षुण्ण बना हुआ है।

इसी से हम स्वयं 'डिक्शनरी' (Disctionary) शब्द पर ही पहुँच जाते हैं जो इस पुस्तक की आत्मा ही है। संस्कृत-शब्द 'दीक्षान्तरी' अर्थात् डिक्शनरी का अर्थ होगा 'वह जो दी गई दीक्षा का भाग होता है'। इस प्रकार निहितार्थ है कि यदि छात्र को कोई शब्द समझ में न आए अथवा वह किसी शब्द का अर्थ भूल गया हो, तो उसे उस शब्द का अर्थ 'दीक्षान्तरी' नामक इस ग्रंथ में खोज लेना चाहिए। इससे यह तथ्य समझ में आ जाना चाहिए कि वर्तमान अंगरेजी शब्द 'डिक्शनरी' संस्कृत का 'दीक्षान्तरी' शब्द ही है जिससे 'त' (अंगरेज़ी 'ट' अक्षर) ढीला होकर बाहर निकल गया। इस प्रकार, वर्तमान प्रचलित अंगरेज़ी शब्द 'डिक्शनरी' संस्कृत का 'दीक्षान्तरी' शब्द ही है जो ऐसे ग्रंथ का द्योतक है जिसमें किसी व्यक्ति को खोजने पर उस शब्द का पूर्ण विवरण प्राप्त हो सकता है जो उसे शिक्षण अर्थात् दीक्षा में भली-भाँति समझ में न आया हो।

'एण्ड' (End, इ-एन-डी) शब्द एन्ट (ई-एन-टी) करके पुनः लिखा जाए तो इसे संस्कृत-शब्द के रूप में तुरन्त पहचान लिया जाएगा (जो 'अंत' के रूप में उच्चारण किया जाता है जैसे ग्रंट में)। प्रसंगवश यहाँ यह भी कह दिया जाए कि संस्कृत की 'त' ध्वनि प्रायः अंगरेज़ी में 'ड' ध्वनि में बदल जाती है और इसी के विपरीत संस्कृत का 'ड' अक्षर अंगरेज़ी में 'ट' उच्चारण हो जाता है।

संस्कृत-शब्द 'लग' जो 'संबंधित' का अर्थ-द्योतक है, अंगरेज़ी भाषा में 'लॉजी' उच्चारण किया जाता है जैसे बायोलोजी, एस्ट्रॉलॉजी, साइक्लॉजी आदि में। 'बायो' यूनानी उच्चारण है संस्कृत के शब्द 'जीव' का, जिसका अर्थ है जीवित-संरचना अर्थात् जीवन।

'जड़ी-बूटी' भारत में उपयोग में आनेवाला एक अतिप्रचलित शब्द है जिसका तब उल्लेख होता है जब वैदिक चिकित्सा-पद्धति में औषधीय पौधों, पत्तों-पत्तियों आदि की चर्चा होती है। उक्त शब्दाभिव्यक्ति में 'जड़ी' का अर्थ जड़, मूल से है जबकि 'बूटी' में बेल-बूटे, पर्णावली आते हैं। संस्कृत में यदि 'बूटम' शब्द को नपुंसकलिंग मान लें, तब 'बूटम' का अर्थ एक पौधा होगा, 'बूटे' का मतलब दो पौधे होगा और 'बूटानी' का अर्थ 'बहुत सारे पौधे' होगा। निष्कर्ष

यह है कि 'पौधों का अध्ययन' अर्थद्योतन करनेवाली 'बोटनी' शब्द संस्कृत का 'बूटानी' शब्द है। यह संभव है कि विद्यमान संस्कृत-शब्दकोशों में उक्त शब्द संग्रहीत न हो। यदि ऐसा है, तो उक्त शब्द को भी सम्मिलित किए जाने की आवश्यकता है क्योंकि 'बूटी' शब्द का भारत में अत्यधिक उपयोग होता है।

संस्कृत का 'जीवलग' शब्द यूनान के माध्यम से 'बीवलॉजी' होता हुआ 'बायोलॉजी' के रूप में लिखा जाकर अंगरेज़ी भाषा में प्रवेश पा गया है।

यहाँ संयोगवश, यह भी ध्यान में रख लिया जाए कि संस्कृत का 'जीव' शब्द यूनान में 'बीव' अर्थात् 'बायो' उच्चारण किया जाता था, फ्रांस में 'वाइव' और अंगरेज़ी भाषा में 'लिव' बोला जाता था।

अंगरेज़ी शब्द 'स्टार' (Star) संस्कृत के 'तारा' अर्थात् 'तारक' शब्द में उपसर्ग 'एस' (स) लगाकर बना है। अरब लोगों ने संस्कृत-शब्द 'तारा' के शुरू में 'अस' ध्वनि भी जोड़कर उसे उच्चारण किया, जैसे 'अस-थमा' में। अतः अंगरेज़ी शब्द 'एस्ट्रॉलॉजी' (Astrology) संस्कृत का 'तारा-लग' शब्द है।

'(प) साइकॉलॉजी' (Psychology) शब्द में प्रारंभिक अक्षर 'प' निर्ध्वनि होने के कारण हम इसे पुनः 'साइकॉलॉजी' के रूप में लिखें। यह हमें संस्कृत-मूल 'सोचोलग' दर्शा देता है जहाँ प्रथम 'सोच' अक्षर-विचारना अर्थात् विचार-प्रक्रिया का द्योतक है।

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि अध्ययन की सभी शाखाएँ हमारे ही युग में आज तक भी अपनी-अपनी संस्कृत-शब्दावली को सँजोकर रखे हुए हैं क्योंकि वे सभी विषय वैदिक संस्कृत के वनाश्रम-स्थित, गुरुकुलों में पढ़ाए जाते थे।

'स्टेटिस्टिक्स' (Statistics) शब्द अपने वर्तमान रूप में भी तकरीबन पूरी तरह संस्कृत-रूप ही है। इसके दो संस्कृत भाग हैं 'स्टेटिस' अर्थात् 'स्तिथिस' (स्थिति, हालत, अवस्था) और 'तक्ष' (अर्थात् टिक्स) है 'आकार के अनुसार अंदाज़ा लगाना' (किसी भी विषय से संबंधित सभी संख्याओं-आँकड़ों के विश्लेषणात्मक अध्ययन के साथ)।

आओ, हम अब 'अरिथमैटिक' (Arithmatic) शब्द को भी परख लें। संस्कृत में 'अर्थ', मुद्रा-द्रव्य या धन का द्योतक है। अंत्य शब्द 'मैटिक' से परिमाण, नाप-तोल करना, 'आकार के अनुसार अंदाज़ा लगाना' या 'हिसाब-किताब करना अथवा लगाना' अभिप्रेत है।

मैंने कई अग्रणी गणितज्ञों से 'मैथेमैटिक्स' (Mathematics) शब्द का मूलोद्गम पूछा। एक भी गणितज्ञ स्पष्टीकरण न दे सका। इससे भी अधिक आश्चर्यप्रद यह है कि गणितीय 'त्रिशाखाओं' की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में आनेवाले व्यक्ति को रेंगलर' (Wrangler)कहा जाता है जबकि 'रैंगल' का निहितार्थ 'झगड़ा, उपद्रव, ऊँचे स्वर में या अशिष्ट-अभद्र-गँवारू या भ्रमित तर्क, तू-तू-मैं-मैं या लड़ना' है। गणित में निपुण व्यक्ति को अनुचित, अनुपयुक्त शीर्षक 'रैंगलर' से सम्मानित, विभूषित क्यों किया जाए?

ऐसी संकट की परिस्थितियों में संस्कृत-भाषा समाधान प्रस्तुत करती है क्योंकि वह सभी भाषाओं की दैवी माता, जननी है। 'मैथेमैटिक्स' शब्द संस्कृत का 'मंथन/मथ-मस्तिष्क' है अर्थात् एक विषय जो मस्तिष्क का मंथन कर देता है—उसे मथ देता है क्योंकि इसमें आँकड़ों/संख्याओं को विपरीत करना, उलटना-पुलटना और जटिल गणनाओं का हिसाब, लेखा-जोखा करना पड़ता है। संख्याओं के साथ इस प्रकार झगड़ने, उलझने, निपटने में निपुण व्यक्ति के लिए सरलता से 'रैंगलर' शब्द की उपाधि सहज ही दे दी गई। इस प्रकार, 'मैथेमैटिक्स' और 'रैंगलर' शब्द दोनों ही एक-दूसरे का स्पष्टीकरण प्रस्तुत कर देते हैं। और फिर भी जब मैंने एक सुयोग्य 'रैंगलर' से ही 'मैथेमैटिक्स' और 'रैंगलर' शब्दों की व्युत्पत्तियों के बारे में पूछा और उनके पारस्परिक संबंधों के बारे में ज्ञात किया, तो उन्होंने तत्सम्बन्धी अज्ञान, अनभिज्ञता तुरन्त स्वीकार कर ली।

'डिसाइपल' (Disciple) शब्द में वर्ण-विपर्यय करके यदि 'एस' के बाद वाले 'सी' अक्षर को पहले लिख दें तो आसानी से संस्कृत शब्द 'दीक्षापाल' अर्थात् शिष्य, छात्र को पहचाना जा सकता है।

इसी 'डिसिपलिन' (Discipline) शब्द की वर्तनी यदि वर्ण-विपर्यय द्वारा 'सी' और 'एस' का स्थान बदल दें तो संस्कृत भाषा का 'दीक्षापालन' शब्द स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाता है जिसका अर्थ होता है 'अनुदेशों का पालन' अर्थात् अनु-शासन।

11
वैदिक विवाह-सम्बन्धी शब्दावली

वैदिक परम्परा के अनुसार मानवों के विवाह-सम्बन्धी पारस्परिक सम्बन्धों को अर्थात् नर-नारी के यौन संयोग को असंयम, विषयासक्ति या दैहिक तुष्टीकरण का साधन मानकर ग़लती न की जाए, अपितु इस सम्बन्ध को पुनः सर्जन और मानव-जाति के अनवरत जारी रखने की दैवी योजना को पूर्ण करने का कर्त्तव्य, प्राकृतिक धर्म समझना चाहिए।

उक्त विचार से दृष्टिपात करने पर पश्चिमी युवाओं की आधुनिक बढ़ती हुई व्यभिचारी, लम्पट प्रवृत्तियाँ, विशेषकर उनका बहुत बार दोहराया गया यह विचार कि उनके शरीर तो उनके अपने ही हैं और वे जैसा चाहें इन शरीरों का उपयोग करने के लिए स्वतंत्र हैं, दैवी योजना की समझ के अभाव के कारण ही जन्म पा रही हैं।

असंयमित स्वतंत्रता के प्रति यह रुझान ही विवाह-विच्छेदों, वैवाहिक अनबनों, टूटे परिवारों, स्त्री-समलिंग कामुकता, पुरुष-समलिंग कामुकता, रात्रि-क्लबों आदि में वृद्धि कर रहा है जिससे आत्महत्याएँ, हत्याएँ, रति-रोगों और आज के सर्वाधिक भयावह रोग 'एड्स' में निरन्तर बढ़ोत्तरी हो रही है। दैवी सीमाओं का अतिक्रमण, उल्लंघन करने के लिए और पुनःसर्जनकारी सुविधा अर्थात् आवश्यकता का ओछा, तुच्छ उपयोग करने के लिए दैवी दंडों का विधान है। इसीलिए, वैदिक संस्कृति विवाह को एक पवित्र बंधन समझती है जो मानव-प्राणी की निरन्तरता बनाए रखने की दैवी योजना को पूर्ण करने का साधन है। वैवाहिक सम्बन्धों से व्यक्ति को मिलनेवाला शारीरिक और मानसिक सुख मात्र प्रेरणा, प्रोत्साहन ही समझा जाना चाहिए, स्वयं में कोई लक्ष्य या उद्देश्य नहीं।

यही कारण है कि चाहे ईसाई हों या मुस्लिम, बौद्ध हिन्दू या अन्य कोई भी हों, धर्मनिष्ठ पंडितों-पादरियों-काज़ियों आदि द्वारा ही विवाह-सम्बन्धी सारी

कार्यवाही पूरी कराई जाती है, न कि किसी सेना के अथवा अन्य सांसारिक, लौकिक अधिकारी द्वारा।

धर्मों और मत-मतान्तरों की निरन्तर बढ़ती विविधता के बाद भी उन सभी में विवाहों का विहित, पवित्र, धार्मिक रूप उनके अपने-अपने पुरोहितों, पादरियों, पंडितों आदि द्वारा ही दिया जाता है। इसका कारण यह है कि मानव-प्राणियों की प्रथम सीढ़ी के प्रारंभ से ही वैदिक संस्कृति का सारे संसार में अनुसरण, तदनुसार आचरण किया जाता रहा है। अपने-आपको बौद्ध, ईसाई या मुस्लिम कहने वालों के पूर्वज भी, उनके बाप-दादे भी वे लोग थे जो वैदिक संस्कृति का ही अनुपालन करते थे। अतः मुस्लिमों, ईसाइयों, बौद्धों और अन्य लोगों में विवाहों को धार्मिकता प्रदान करने में पुरोहितों की भूमिका उनके वैदिक विगत काल को जारी रखने की प्रक्रिया ही है। यदि विवाहों को पवित्र, धार्मिक आजीवन-बंधन नहीं माना गया होता तो किन्हीं भी युगलों, जोड़ों को उनके अपने माता-पिता या सर्वाधिकारी या वरिष्ठ, उच्च अधिकारियों आदि द्वारा ही 'पुरुष और पत्नी' घोषित कर दिया जा सकता था।

वास्तव में कैथोलिक ईसाई भी विवाह-विच्छेद, तलाक पर भौंहें, तेवर चढ़ाते हैं, अप्रसन्नता प्रकट करते हैं। उनकी मूल रीति शादियों को शाश्वत बंधन समझने की थी। उपर्युक्त सम्पूर्ण चर्चा पाठक को यह स्पष्ट कर देने मात्र के लिए है कि वैदिक रीति-रिवाज के अनुसार वैवाहिक बंधन एक पवित्र, दैवी, शाश्वत, आजीवन सूत्र था।

चार विवाहित पत्नियाँ और असंख्य रखैलें किसी पुरुष द्वारा रखने की इस्लामी-पद्धति मुस्लिम विपथगमन, मतिभ्रंश है जिसकी अनुमति मुस्लिम-पूर्व अरब के वैदिक समाज में नहीं थी।

मस्तिष्क, मन में इस सारी पृष्ठभूमि को रखकर, आइए हम अब अंगरेज़ी भाषा में विवाह-सम्बन्धी शब्दावली का अध्ययन करें जिससे हमें ज्ञात हो जाए कि यह सारी शब्दावली वैदिक ही है।

वैदिक पद्धति के अनुसार विवाह के लिए संस्कृत-शब्द 'पाणि-ग्रहण' है जिसका शाब्दिक अर्थ 'हाथ पकड़ लेना' है। यही अभिव्यक्ति अंगरेज़ी भाषा के वाक्यांशों में अभी भी प्रचलित, मौजूद है जैसे 'विवाह में वधू का हाथ लेना', 'विवाह में वधू का हाथ प्रस्तुत करना','महिला का हाथ विवाह में माँगना', आदि।

यह आकस्मिक, घटनावश संयोग नहीं है। यह सिद्ध करता है कि विवाह

का वैदिक संस्कार ईसाइयत-पूर्व के पश्चिमी समाज में प्रचलन, व्यवहार में था। यदि वैसा न होता तो पश्चिमी अभिव्यंजना-उक्ति भिन्न हो सकती थी, जैसे 'विवाह में वधू को नाक द्वारा लेना' या 'उसे कान पकड़कर ले लेना' आदि।

इसलिए '(विवाह में) वधू का हाथ माँगना' आदि उक्ति की एकरूपता को एक महत्त्वपूर्ण सूत्र मानना चाहिए जिससे ईसाइयत-पूर्व के संसार में वैदिक विवाह-पद्धति के विश्व-व्यापी प्रचलन का मामला सिद्ध हो जाता है।

वैदिक विवाहों को वैदिक मंत्रोच्चारों-सहित सम्पन्न किया जाता था जिनमें मंत्रों से सम्बन्धित व्यक्तियों और दम्पती, युगल को भी यह स्मरण दिलाया जाता था कि विवाह आजीवन बंधन है जिसमें मानव-जाति की अनवरत सृष्टि की दैव-इच्छापूर्ति और शान्तिपूर्ण, सामूहिक जीवन चलाने के लिए विवाह करनेवाले व्यक्तियों से अनुशासन और निष्ठा की अपेक्षा की जाती है। अतः सही-सही कहा जाए तो, विशुद्ध दैवी-दृष्टिकोण से तो, जब संतान की इच्छा न हो, पति द्वारा स्वयं अपनी विवाहिता पत्नी से रति-कार्य में लिप्त होना पाप है। मानव-जीवन को शासित करनेवाले दैवी-नियम अतिक्रमण करनेवाले व्यक्तित्व के 'प्रारब्ध खाते' अर्थात् 'कर्म' में ऐसे कर्मों, कामों को स्वतः डाल देते हैं। क्योंकि, एक ओर तो यह कार्य दैवी-वीर्य का अप-व्यय और कदाचित् अनिच्छुक पत्नी पर दबाव, ज़बर्दस्ती है तथा दूसरी ओर असंयमित काम-लिप्सा में कंडोम, या अन्य निरोधक उपकरण, या मात्र व्यर्थ अप-व्यय करके दैवी जीवन-बीज का दम घोंटने के समान है।

एक दृष्टान्त से यह स्पष्ट हो जाएगा। यदि कोई गृहस्वामी आपात आत्म-सुरक्षा के लिए एक पिस्तौल खरीद ले, किन्तु उसका पुत्र या वह स्वयं ही अपने पड़ोसी के पालतू जानवरों या बच्चों को मारने, या फर्नीचर तोड़ने-फोड़ने में निजी तुष्टीकरण के लिए उक्त उपकरण का उपयोग करे, तो वह पाप है। इसी प्रकार विवाहित अवस्था में भी मात्र मन-मौज के लिए यौन को उपयोग में लाना ईश्वर की दृष्टि में तो पाप ही होना चाहिए।

इसीलिए, ईसाइयत-पूर्व और मुस्लिम-पूर्व के वैदिक विगत कालखण्डों में विवाहों को वैडिंग अर्थात् वेदिंग संक्षिप्त रूप में इसीलिए कहते थे कि विवाह सम्पन्न होते ही वैदिक मंत्रों के सान्निध्य में थे जिनमें हर किसी व्यक्ति पर इस बात का प्रभाव अमिट रूप से डालने का प्रयास रहता था कि वह समझ जाए कि स्त्री-पुरुष का संयोग मात्र इस सद्-उद्देश्य से प्रेरित था कि अभीष्ट समय पर

सन्तान की इच्छा हो और शान्तिपूर्ण, संतुलित सामाजिक, सामुदायिक जीवन चल सके, उपर्युक्त भावना की पूर्ति आश्वस्त हो सके। ऐसे विवाहों में युगल, दम्पती के दोनों सदस्यों को अन्य लोग सुन सकें ऐसे उच्चस्वर में शपथ, वचन का घोष करना पड़ता था जिसका भावार्थ था कि "मैं धन और यौन (दाम्पत्य) जीवन में कर्त्तव्य की सीमाओं का पालन, निर्वाह करूँगा/करूँगी।"

उपर्युक्त चर्चा पाठक को यह समझाने के लिए पर्याप्त होनी चाहिए कि मानव-जाति को बनाए रखने की दैवी-इच्छा ही वह वस्तु है जो अन्यथा, गंदे और खतरनाक सम्बन्ध को पवित्रता प्रदान करती है, क्योंकि इसका किसी भी प्रकार का अतिक्रमण या इसके साथ छेड़छाड़ का दुष्परिणाम हत्याओं, आत्मघातों, भीख माँगने, अनचाही-अत्यधिक सन्तानों या मृत्यु-कारक भयावह रोगों से हो सकता है।

इसलिए, ईसाई और मुस्लिम शादियाँ या सामान्य कानूनी शादियाँ मात्र विश्वास दिलानेवाली, येन-केन-प्रकारेण की गई रस्में ही हैं जो उन दैवी वैदिक विवाहों का कोई विकल्प नहीं है जो ईसाइयत-पूर्व के युगों में विश्व-व्यापी स्तर पर व्यवहार में, प्रचलन में थे।

उक्त पृष्ठभूमिगत जानकारी के साथ, आइए हम अब इस पर विचार करें कि विवाहों से सम्बन्धित पश्चिमी शब्द और रीति-रिवाज किस प्रकार वैदिक हैं।

वैदिक विवाह-संस्कार में वर वधू का दायाँ हाथ अपने हाथ में ले लेने के पश्चात् वैवाहिक-संयोजन और शपथ के प्रतीक-स्वरूप वर-वधू युगल, दोनों की ही कलाइयों के चारों ओर एक 'कंकण' बाँध दिया जाता है। इसका संस्कृत-नाम 'हस्त-बंध' अर्थात् 'हाथ बाँधना' है क्योंकि विवाह में वर वधू का हाथ पकड़ता, ग्रहण करता है। इससे यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि अंगरेज़ी शब्द 'हस-बैंड' (पति) संस्कृत का शब्द 'हस्त-बंध' के अतिरिक्त कुछ नहीं है जिसमें से 'टी' (त) और अंतिम 'एच' वर्ण विलग हो चुके हैं, जिनका निहितार्थ है कि पुरुष का एक हाथ एक महिला (अर्थात् उसकी पत्नी) के साथ बाँध दिया गया है, इसलिए अब, इस क्षण के बाद तो, उसे किसी भी अन्य महिला के पीछे कामवश भाग-दौड़ नहीं करनी चाहिए।

प्रसंगवश, यहाँ यह ध्यान में रखा जा सकता है कि संस्कृत-भाषा के 'बंध' और 'बन्धन' शब्द अंगरेज़ी भाषा में 'बॉण्ड' (Bond), 'बैन्डेज' (Bandage), 'बॉण्डेज' (Bondage), और अन्य ऐसे ही शब्दों के रूप में व्यापक-स्तर पर

प्रयोग में आ रहे हैं।

'वैडलॉक'(Wed-lock) शब्द का निहितार्थ भी वेदों द्वारा लगाया गया ताला है मानो दो व्यक्तियों के हाथ में इस प्रकार हथकड़ियाँ डाल दी जाएँ कि वे कभी एक-दूसरे से अलग न हों।

'मैट्रीमोनियल' (Matrimonial) शब्द पूरी तरह संस्कृत-भाषायी है। यह संस्कृत का 'मातृमनल' है जिसका निहितार्थ "मातृत्व उपलब्धि, प्राप्ति के लिए तैयार मन" के हेतु संस्कार-ग्रहण करने के वास्ते किया गया वचन है।

संस्कृत का 'वधू' शब्द 'ब्राइड' (Bride) का अर्थद्योतन करने हेतु 'ब्रधु' का उच्चारण किया जाने लगा । 'व' ध्वनि 'ब' में परिवर्तित हो गई, जैसा अति प्रचलित है जो अब 'ब्राइड' के रूप में अधिक सुगमता, सरलतापूर्वक इस्तेमाल में आ रहा है।

'मैट्रीमनी'(Matrimony) शब्द संस्कृत का शब्द ही है जो 'मातृत्व के इच्छुक मन' के लिए संस्कार, समारोह का द्योतक है।

'गिविंग अवे दि ब्राइड' (Giving away the bride) वाक्यांश संस्कृत भाषा के शब्द-द्वय 'कन्या-दान' का सटीक अंगरेज़ी रूपान्तरण है।

प्रचलित यूरोपीय रीति-रिवाज के अन्तर्गत वयस्क लड़की अपना अधिकार समझती है और इसे परमाधिकार भी मानती है कि वह जिस किसी पुरुष को चाहे, उससे विवाह कर सकती है। वह अपना वैवाहिक जीवन-साथी चुनने में किसी भी व्यक्ति की ओर से किसी हस्तक्षेप, व्यवधान को सहन, बर्दाश्त नहीं करती। फिर भी, यदि वह औपचारिक रूप से गिरजाघर (चर्च) द्वारा अपनी शादी करवाना चाहती है, तब ईसाई परम्परा का आग्रह रहता है कि उसका (उक्त कन्या का) स्वयं पिता या कोई अन्य बुजुर्ग पुरुष-सम्बन्धी विधिवत्, औपचारिक रूप से वधू का हाथ वर के हाथ में दे दे, सौंप दे। यह विचार भ्रामक है कि वयस्कों को यह स्वतंत्रता होनी चाहिए कि वे अपने शरीर के साथ जो करना चाहें, जैसा व्यवहार करने के इच्छुक हों निर्बाध कर सकें, क्योंकि प्रत्येक मानव-प्राणी एक लम्बी शृंखला का एक सूत्र, कड़ी है। किसी भी व्यक्ति द्वारा बिना विचार किए, असंयमित लगाव या खिंचाव सामाजिक ताने-बाने को हत्याओं, आत्म-हत्याओं, हृदयाघातों और रोगों को उत्पन्न कर, उनके माध्यम से तहस-नहस, ध्वस्त कर सकता है।

वैदिक पद्धति के अन्तर्गत परिवार के वयोवृद्ध-जन ही युवा-कन्या के लिए

उपयुक्त वर की तलाश करते हैं और विवाह-संस्कार में कन्यादान द्वारा वर को उक्त वधू सौंप देते हैं। एक बालिका के जीवन में अपने जननी-परिवार से वियुक्त होकर वर के परिवार—ससुरालवालों में जमना, रमना, अवश्यंभावी प्रक्रिया मानी गई है।

मनोविज्ञान की दृष्टि से (कुमारी या वयस्क कन्या का) जितना जल्दी दूसरे (ससुराल के) घर में रोपण हो जाए, उतने ही अधिक अवसर हैं कि वह नए परिवार में हिल-मिल जाएगी जैसे धान (चावल) के कोमल पौधे के रोपण के बाद नई भूमि, धरती में मूसलाधार वर्षा में भी पक्की तरह जमे, अटल रहते हैं।

नए परिवार में भेजते समय, वैदिक प्रथा थी कि वधू के साथ-साथ दो-तीन सहचरी, विश्वस्त सखियाँ भी उसकी ससुराल भेज दी जाती थीं जिससे वह नए, विचित्र, अपरिचित संगी-साथियों के मध्य रमने, घुलमिल जाने, परिचित हो जाने की प्रक्रिया के समय अपने मन की स्थिति, आशाओं, अपेक्षाओं और आशंकाओं को सहज, सरल रूप में बिना झिझक अपनी सखियों से हृदय की बात कह सके। वह वैदिक पद्धति औपचारिक चर्च-शादियों में कुछ 'वधू-सखियों' द्वारा वधू के निकट ही पंक्तिबद्ध खड़ी रहने की परम्परा में अभी भी विद्यमान, द्रष्टव्य है।

विधिवत् चर्च-शादी में ईसाई-वधू का मुखड़ा महीन मलमल के आवरण से ढकना आधुनिक ईसाई समाज में अनियमितता, असंगति व कालदोष-पुरावशेष, दोनों ही हैं जब (मुसलमानों से भिन्न) ईसाई लोग कभी भी अपनी महिलाओं को बुरका या परदा धारण करने को नहीं कहते। फिर, ईसाई वधू का परदा, आवरण किस प्रकार उचित, न्याय-संगत ठहराया जा सकता है? इसका उत्तर पश्चिम में ईसाइयत-पूर्व की वैदिक प्रथा के प्रचलित रहने में ही है।

आधुनिक ईसाई वधू के परदे का ईसाइयत-पूर्व का वैदिक मूलोद्गम है। महान् महाराजा मनु मानव-जाति के प्रथम नियामक थे। उनके नियमों में मानव के सामाजिक जीवन का नियमन करने के लिए दैवी धर्माज्ञाएँ, आदेश समाविष्ट हैं। मनु ने निर्धारित किया है कि, "वधू प्रदान करते समय उसे आवरण प्रदान करना चाहिए (अर्थात् उसका चेहरा ढक देना चाहिए क्योंकि उसके शरीर का शेष भाग तो किसी-न-किसी प्रकार प्रायः ढका ही रहता है) और लाड़ले, प्रिय वर की समुचित आवभगत और सम्मान होना चाहिए, मानव-प्राणियों के लिए यह दैवी-नियम है।"

उत्तरी भारत के (हिन्दू अर्थात् वैदिक) विवाहों में वधुएँ अनिवार्य रूप से

अपनी साड़ी के पल्लू (एक छोर) से अपने मुखड़े को ढके रहती हैं। यह छोर सिर के ऊपर से गालों को ढकता हुआ नाक की सीध तक तो आता ही है।

दक्षिण भारत में यद्यपि महिलाएँ (वधुएँ) उस सीमा तक मुख पर परदा नहीं करतीं, फिर भी वे साड़ी के छोर से अपने सिरों को ढकती ही हैं।

हम पहले ही बता चुके हैं कि आधुनिक यूरोपीय शब्द 'प्रीस्ट' संस्कृत भाषा के शब्द 'पुरोहित' का अशुद्ध, अपभ्रंश उच्चारण मात्र ही है।

इस प्रकार यह लक्षित किया जा सकता है कि वर्तमान तथाकथित ईसाई चर्चगत शादियाँ धीर-गंभीर, पवित्र वैदिक कर्मकाण्ड का मात्र उपहास, नकल और विडम्बना ही शेष रह गई हैं। इस्लामी शादियों के बारे में जितना कम कहा जाए, उतना ही बेहतर है। अतः, आध्यात्मिक मनवाले, कर्तव्यनिष्ठ, ईश्वर से डरनेवाले व्यक्तियों को चाहिए, चाहे वे मानव-निर्मित किसी भी धर्म या सम्प्रदाय या मत-मतान्तर से सम्बन्ध क्यों न रखते हों, कि अनजाने अचेतन रूप में हो जानेवाले पापों से बचने के लिए वापस लौट आएँ और वैदिक वैवाहिक प्रथाओं का निष्ठापूर्वक पालन करें। तथाकथित ईसाई या इस्लामी पादरी या काज़ी या शादियों के पंजीयन-कर्त्ता द्वारा की गई यह घोषणा कि, "मैं तुम्हें पति और पत्नी घोषित करता हूँ" एक अत्यन्त क्षुद्र, लौकिक काम-चलाऊ, प्रकट, निरर्थक विकल्प-मात्र है उस विपुल वैदिक वैवाहिक काण्ड का जो दैवी, वैदिक मंत्रोच्चार, और वैदिक शिक्षाओं द्वारा पवित्रीकृत होता है। युगल-द्वय को बता दिया जाता है कि विवाहित जीवन के शिष्टाचार और आजीवन पालन हेतु दैवी नियम क्या हैं।

'वैवाहिक गाँठ बाँधना' (Tying the nuptial knot) यूरोपीय वाक्यांश भी विवाह के समय, स्थायी मिलन के प्रतीक के रूप में, वर और वधू के पहने हुए वस्त्रों के दो छोरों, कोनों को आपस में गाँठ बाँधना भी प्राचीन वैदिक पद्धति का प्रमाणीकरण ही है। प्रिंस चार्ल्स के साथ लेडी डायना के लंदन में सन् 1979 में विवाह के समय एक दासी (Duchess) को वैवाहिक गाँठ बाँध देने का कर्तव्य-पालन, दायित्व सौंपा गया था।

वैदिक विवाहों में एक अवसर पर वैदिक मंत्रोच्चार के साथ-साथ नव-विवाहित वर-वधू, दोनों पर, अक्षत (चावल, धान) डाले जाते हैं। यह वैदिक प्रथा भी अभी तक पश्चिमी ईसाई कपटपूर्ण चर्च-शादियों में मौजूद है। सन् 1979 में जब विम्बलडन चैम्पियन (टैनिस) क्रिस एवर्ट और जोह्न लायड का फोर्ट लौडरडेल (यू० एस० ए०) में विवाह हुआ था, तब उनके ऊपर (पावन, पवित्रीकृत)

अक्षत-कणों की वर्षा की गई थी। कई स्थानों पर नव-विवाहितों पर पवित्र अक्षत-कणों के स्थान पर कागज़ के अतिलघु-कणों की वर्षा करना आधुनिक ईसाइयों द्वारा प्राचीन, प्रारंभिक वैदिक प्रथाओं की नकल मात्र ही है।

जब कोई नव-विवाहिता वधू अपनी ससुराल में प्रथम बार गृह-प्रवेश करती है तब अक्षत-(धान)-कणों से भरे पात्र को पैर-स्पर्श से गिरा देती है जो इस बात का प्रतीक है कि वर के घर में उस वधू के प्रवेश से परिवार के लालन-पालन-संवर्धन हेतु चारों ओर विकीर्ण खाद्यान्न का प्राचुर्य होगा। कुछ पश्चिमी ईसाई देशों में वधुएँ अभी भी उसी प्रथा को निभा रही हैं जहाँ वे (अक्षत-पात्र के स्थान पर) शैम्पेन (शराब) की बोतल को चरणस्पर्श द्वारा लुढ़का देती हैं।

इस प्रकार हमने देख लिया है कि हज़ार वर्ष से भी अधिक पहले ईसाई-धर्मावलम्बी हो जाने के बाद भी पश्चिमी देशवासी किस प्रकार अभी भी अनजाने ही वैदिक विवाह-पद्धति से सम्बद्ध हैं और वैदिक शिक्षा-सम्बन्धी शब्दावली को अंगीकार किए हुए हैं। उनको अब मात्र इतना ही करना है कि वास्तव में दैवी-भावनानुरूप विवाहों को वे अब वैदिक मंत्रोच्चारों द्वारा पवित्रीकरण करने की प्रक्रिया भी शुरू कर दें।

ईसाइयत में धर्म-परिवर्तित हो जाने और एक हज़ार वर्ष से भी अधिक का समय बीत जाने के बाद भी चूँकि पश्चिम-वासियों ने वैदिक-शब्दावली, परम्पराओं-प्रथाओं और रीति-रिवाजों को अभी तक प्रायः अक्षुण्ण बनाए रखा है, इसलिए अब उनको केवल इतना ही और करना चाहिए कि वैदिक कर्मकाण्डी पुरोहितों को बुलाकर वैदिक मंत्रोच्चार के बीच ही अपने वैवाहिक धर्म-कृत्यों को पूर्ण कराएँ। वैदिक शब्द-व्यवस्था अति पवित्र और दैवी है। यह किसी जोह्न, लूके, मार्क, मैथ्यू, टाम, डिक या हैरी (या ऐरे-गेरे नत्थू-खैरे) द्वारा शब्दायोजित नहीं है। विवाहित युगल और उनकी संतानों को एकता-सूत्र में पिरोए रखनेवाली, मातृमनी-पटरियों पर संतुलन रखनेवाली नैतिक आध्यात्मिक बंधनकारी शक्ति निरंतर बढ़ रहे मत-मतान्तरों, पंथ और संप्रदायों, धर्मों द्वारा इसकी मात्र लौकिक, मानव-निर्मित नकलों द्वारा कभी भी प्राप्त नहीं की जा सकती।

मुस्लिमों को भी इस्लाम-पूर्व की अरब-शादियों के अवसर पर वैदिक मंत्रोच्चार की प्रथा पर पुनः वापस लौट आना चाहिए।

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश की भौंडी, हास्यापद ग़लतियों में से एक, जिनका उल्लेख हम पहले भी कर चुके हैं, इसका यह स्पष्टीकरण है कि 'विडोवर' (विधुर

का अर्थ-द्योतक) शब्द अंगरेज़ी के 'विडो' (विधवा का अर्थ-द्योतक) शब्द में 'ई आर' (र/अर) प्रत्यय जोड़ने से बना है। हम पहले ही बता चुके हैं कि यह स्पष्टीकरण किस कारण, किस प्रकार पूरी तरह अयुक्तियुक्त, अनुचित और अग्राह्य है।

इन दोनों शब्दों में प्रारम्भिक संस्कृत उपसर्ग 'वि' का अर्थ 'विहीन', 'विलग', 'बिना' है। अतः संस्कृत शब्द 'विधवा' (और अंगरेज़ी शब्द 'विडो') उस महिला का अर्थ-द्योतन करते हैं जो अपनी चमक-दमक से ('धवा' से) विलग, विहीन हो चुकी है क्योंकि उसके पति की मृत्यु हो गई है।

इसी के अनुरूप संस्कृत-शब्द 'विधुर' (और अंगरेज़ी का 'विडोअर' शब्द) उस 'पतवारहीन' व्यक्ति का द्योतक है जिसकी पत्नी की मृत्यु हो जाने के कारण वह पत्नी-विहीन हो गया है।

12
विश्व-व्यापी वैदिक चिकित्सा-सम्बन्धी शब्दावली

वैदिक चिकित्सा-विज्ञान का नाम आयुर्वेद है जिसका अर्थ मानव-जीवन और शारीरिक योग्यता, क्षमता, स्वस्थता का विज्ञान है। धन्वन्तरि इसके दैवी आदि-प्रजनक और प्रचारक थे।

आयुर्वेद का महाभारत-युद्ध तक संपूर्ण विश्व पर पूर्ण प्रभुत्व, साम्राज्य था। उसके पश्चात् विश्व वैदिक साम्राज्य चकनाचूर हो जाने पर, आयुर्वेद भी क्षत-विक्षत अवस्था में अपंग-समान कार्यरत रहा क्योंकि प्रत्येक बीतनेवाले दिन के साथ-साथ संस्कृत और आयुर्वेद-प्रशिक्षण हेतु सुविधाएँ भी क्रमिक रूप से कम-से-कम होती गईं।

ध्वस्त वैदिक चिकित्सा-विज्ञान (अर्थात् आयुर्वेद) भी समय के साथ-साथ अनेक छोटे-मोटे खण्डों में, रूपों-प्रणालियों में विभाजित हो गया।

यूनानी चिकित्सा-प्रणाली पूरी तरह आयुर्वेद-प्रणाली ही थी। अपवाद केवल यह था कि क्रमिक रूप में, आहिस्ता-आहिस्ता, भ्रष्ट, अप-विकसित रह गई क्योंकि (सन् 5561 ईसवी पूर्व के) महाभारत-युद्ध के विनाशक प्रभाव के बाद संस्कृत-विज्ञानों का शिक्षण लगभग पूरी तरह रुक ही गया था।

अरब के लोगों ने उस क्षीणकाय आयुर्वेदिक प्रणाली को यूनानी अकादमियों में सीखा और उसे संस्कृत-शब्द 'यवन' और 'यवनीय' से 'इयोनिया' (Ionia) और फिर 'यूनानी' में परिवर्तित कर 'यूनानी' नाम दे दिया।

जब यूनानियों पर आतंक, यातनाओं या प्रलोभनों के माध्यम से ईसाइयत थोप दी गई तब उनकी परम्परागत वैदिक संस्कृति और वे जिस टूटी-फूटी, विकृत संस्कृत-भाषा को बोलते थे, उन दोनों का गला, दम घुट गया और वे नामशेष, समाप्त तथा विलुप्त हो गए। इस प्रकार, अरब लोगों ने यूनानियों से जिस तथाकथित यूनानी चिकित्सा-प्रणाली को सीखा, वह आयुर्वेद की एक दूरस्थ जीर्ण-शीर्ण आत्मजा प्रणाली ही थी।

बाद में, धमकियों और आतंक के माध्यम से वैदिक अरबों का इस्लाम में धर्म-परिवर्तन आयुर्वेद के उक्त यूनानी प्रेत के क्रमिक पतन का कारण बन गया, क्योंकि मुसलमानों के रूप में अरब-वासियों ने शिक्षा और संस्कृति से वंचित, विहीन होकर मात्र लूट-मार के दुष्कृत्य को ही अपना लिया।

आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली (एलोपैथी नाम से आजकल ज्ञात) के प्र-जनक विश्वास किए जा रहे यूनानी हिप्पोक्रेटस महोदय स्वयं ही आयुर्वेद-अभ्यासी थे। यह जानते हुए कि अंगरेज़ी भाषा में 'एस' और 'एच' परस्पर परिवर्तनीय अक्षर हैं, पाठक देख सकते हैं कि उसका नाम सिप्पोक्रेटस था (चाहे उच्चारण 'हिप्पोक्रेटस' होता था)। सिप्पोक्रेटस संस्कृत-शब्द 'सूप-कर्ता' अर्थात् औषधीय आसव, सत् निकालनेवाला, आसवक का अपभ्रंश, भ्रष्ट उच्चारण है। निष्कर्षतः हिप्पोक्रेटस अर्थात् सिप्पोक्रेटस उस व्यक्ति का व्यावसायिक नाम है जो औषध-निर्माण के लिए आसवन का कार्य किया करता था। उसका वास्तविक घरेलू नाम अवश्य ही भिन्न रहा होगा। उसने आसवन-प्रक्रिया में कुछ नए, अग्रिम उपाय या प्रयोग प्रारम्भ किए होंगे जिससे उसे आधुनिक चिकित्सा का अग्रदूत माना जाने लगा।

पर्याप्त समय बाद 'होम्योपैथी' (Homocopathy) चिकित्सा-पद्धति आई जो जर्मन हेह्नेमन्न (Hahnemann) द्वारा प्रारंभ की गई मानी जाती है। उक्त नाम स्पष्टतः हनुमान है जो रामायण-महाकाव्य में वर्णित राम की सेना के वीर योद्धा सेनापति थे। इस सूत्र से प्रेरणा लेनी चाहिए कि जर्मन लोग अपने साहित्य और परम्परा में रामायण की विद्यमानता को खोजें।

'होमो-इयो-पैथी' शब्द तथ्य-रूप में संस्कृत-भाषा का ही 'सम-इव-पथी' शब्द है अर्थात् 'जहाँ उपचार भी उसी पथ का अनुसरण करता है जिस पथ पर रोग चला था'। यही भावना 'सीमिलिया-सीमिलिबस-क्यूरैन्टर' (Similia-Similibus Curanter) शब्द-समूह में है।

इससे परम्परागत पद्धति के लिए एक नया नाम ढूँढने की ज़रूरत आ पड़ी जहाँ उपचार उस पद्धति का अनिवार्य रूप से अनुसरण नहीं करता था। जहाँ (अप्रभावित व्यक्तियों में) वैसे ही लक्षण उत्पन्न करके इलाज निर्धारित किया जाता है जैसे रोग में होते हैं।

परिवर्तनशील अवस्थाओं में नई स्थितियों के अनुसार नूतन शब्द घड़ने के काम संस्कृत-भाषा की सहायता से ही किया जाना था, जो मानवता की

आदिकालीन दैविक भाषा है। अतः घड़ ली गई नई शब्दावली 'अलगपंथी' थी जो बाद में 'एलोपैथी' (Allopathy) के रूप में वर्तनी को प्राप्त हुई किन्तु जिसका निहितार्थ (उपचार की वह पद्धति है जो) भिन्न पथी है। शब्द 'पथ' (अर्थात् रास्ता, मार्ग या सड़क) संस्कृत-भाषा का शब्द है जबकि 'अलग' अर्थात् 'एलो' का अर्थ ('होम्योपैथी' से) 'भिन्न' था।

व्यावसायिक चिकित्सा-विशेषज्ञों में 'ऐनेटामी' (Anatomy) शब्द का स्पष्टीकरण प्रायः 'ऐना' अर्थात् 'खींचना' और 'टामी' अर्थात् 'काटना' (जैसे वैसेक्टामी में या टूबकटामी में) कहकर किया जाता है। किन्तु यह व्युत्पत्ति-स्पष्टीकरण भ्रामक है। शब्द पूर्णतया संस्कृत-भाषा का ही 'अन्-आत्मी' अर्थात् 'आत्मा का नहीं' (बल्कि शरीर की संरचना मात्र का है)। व्यक्ति जीवधारी के रूप में वास्तव में सक्रिय, सचेतन आत्मा ही है, किन्तु शरीर-संरचना-विज्ञान अर्थात् ऐनाटामी में शरीर का अध्ययन, बिना आत्मा के, इसके संरचनात्मक रूप का ही किया जाता है।

अंगरेज़ी शब्द 'ग्लैंड' (Gland) संस्कृत-शब्द 'ग्रंथि' का अपभ्रंश उच्चारण है। यहाँ भावी संदर्भ के लिए भी ध्यान में रख लिया जाए कि संस्कृत के 'अंथ' और 'स्थान' अंत्य भाग अंगरेज़ी में प्रायः 'ऐंड' में बदल जाते हैं।

अंगरेज़ी शब्द 'प्रोस्टेट ग्लैंड (Prostate Gland) संस्कृत का 'ग्रंथि' शब्द है जहाँ 'प्रस्थित' का अर्थ 'के सामने रखा हुआ' है क्योंकि 'प्रोस्टेट ग्लैंड' वह ग्रन्थि है जो मूत्रीय-थैली के सामने रखी होती है।

'सेरिब्रम' (Cerebrum) शब्द संस्कृत का 'शिर-ब्रह्म' अर्थात् 'मस्तिष्क का विश्व' है।

'डॉक्टर' (Doctor) भी संस्कृत का 'दुःखतार' शब्द अर्थात् शारीरिक कष्ट से तारनेवाला, छुटकारा दिलानेवाला है।

'स्टेथोस्कोप' (Stethoscope) शब्द संस्कृत भाषा का यौगिक शब्द 'स्थिति-पश्यति' है जिसका निहितार्थ वह उपकरण है जो डॉक्टर को इस योग्य बना देता है कि वह रोगी के शरीर के भीतर की स्थिति, हालत को देखकर समझ सके।

अंगरेज़ी वर्णमाला का अक्षर 'सी' अपना वर्णमाला का उच्चारण-स्वर 'सी' त्यागकर अनेक बार 'क' के रूप में ग़लत ध्वनि प्रस्तुत करता है। अतः हम 'स्टेथोस्कोप' शब्द को 'स्टेथोस्सोप' के रूप में लिखें।

फिर हम दूसरा नियम उपयोग में लाएँ अर्थात् नियम यह है कि संस्कृत के

अक्षर प्रायः अंगरेज़ी भाषा में स्थान्तरण, क्रम-परिवर्तन कर लेते हैं। उपर्युक्त शब्द में संस्कृत अंत्य-अंश 'पश्य' अंगरेज़ी में 'स्सोप' बदल गया है।

अंगरेज़ी 'कार्डियोलॉजी' (Cardiology) शब्द का उच्चारण 'सार्डियोलॉजी' किया जा सकता है। अब हमें स्मरण होगा कि 'एस' (स) अक्षर का प्रायः 'एच' (ह) उच्चारण होता है। अतः हम उपर्युक्त शब्द को 'हार्डियोलॉजी' के रूप में लिखें। यह दर्शाता है कि इसमें संस्कृत के दो शब्दों का योग है। 'हृदय-लग' अर्थात् हृदय (के काम करने) से संबंधित ज्ञान की शाखा।

उपर्युक्त विश्लेषण से प्रत्यक्षतः यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि कार्डियोलॉजिस्ट, कार्डियोग्राम आदि जैसे सजात, समस्रोतीय सभी शब्द भी अपभ्रंश, भ्रष्ट उच्चारणवाले संस्कृत-शब्द ही हैं। 'कार्डियोग्राम' संस्कृत-शब्द 'हृदय-ग्रथ' है जिसका अर्थ 'हृदय-धड़कनों का अंकन' है।

संस्कृत में 'ग्रथ' का निहितार्थ 'अभिलेख करना' अर्थात् 'अंकित कर लेना' है। यही कारण है कि संस्कृत शब्द 'ग्रथ' का अर्थ एक पुस्तक या खण्ड है।

संस्कृत धातु 'हृत्' से 'हृदय' (अर्थात् हार्ट) और हार्दिक जैसे शब्द बनते हैं। इसके अंगरेज़ी समानक 'कार्डियल' अर्थात् 'सार्डियल' अर्थात हार्दियल है। अतः 'कार्डियलिटी' 'हार्दियलिटी' है जो पूरी तरह संस्कृत-भाषायी है। 'हार्दियल-इति' अर्थात् 'इस प्रकार हृदय से'।

संस्कृत-शब्द 'आम' से 'अमोइबा' और 'अमोइबाओसिस' जैसे एलोपैथिक शब्द बने हैं।

'थमा' के रूप में भ्रष्ट, अशुद्ध उच्चारण किए जाने पर संस्कृत 'यक्ष्मा' शब्द से एलोपैथिक शब्द 'अस्थमा' और उर्दू में 'दमा' प्रचलित हुआ है क्योंकि अरब के लोग विभिन्न अंगरेज़ी शब्दों में 'अब' या 'अस' उपसर्ग लगा देने के अभ्यासी हैं।

उदाहरण के लिए 'कोहोल' अर्थात् 'सोहोल' संस्कृत-शब्द है जिसका अर्थ 'चावल (धान) से बनी शराब है। इसमें अरबी उपसर्ग 'अल' जोड़ देने 'अलकोहोल' (अलकोहल) शब्द बन गया है।

हम अब 'पेशेंट' (Patient, रोगी) शब्द पर चर्चा करें। उसमें से प्रारंभिक अक्षर 'पी' विलग कर दें, छोड़ दें 'पी-न्यूमोनिया' और 'पी-साइकोलोजी' (P-neumonia and P-sychology) जैसे शब्दों में 'पी' (प) अक्षर फालतू निरर्थक व निर्ध्वनि है। इसलिए, आइए हम भी 'प' ध्वनि को छोड़ दें और शेष भाग

'शांत' को ही रख लें जिसका अर्थ है शांत बैठा व्यक्ति, चुप, ध्यानस्थ अथवा स्वस्थ आदमी, किसी भी प्रकार (जैसे वाणी से) विचलित न होनेवाला व्यक्ति 'पेशेंट' कहलाता है। आओ, हम अब 'पेशेंट' में से केवल 'प' अक्षर को निकाल दें और शेष शब्द 'एशेंट' को लिखें जिसका उच्चारण होगा 'अशांत' अर्थात् 'अस्वस्थ' (संस्कृत में)। इसलिए जब कोई व्यक्ति चिकित्सिक (डाक्टर = दु:खतार) के पास जाता है तो वह अ-स्वस्थ अर्थात् अशांत होता है। पाठक इस प्रकार देख सकते हैं कि संस्कृत-शब्द 'शांत' और 'अशांत' यद्यपि अर्थ-द्योतन में परस्पर-विरोधी, विपरीत हैं, फिर भी इनके साथ अंगरेज़ी की निरर्थक 'प' (पी) ध्वनि जुड़ जाने से इनकी एक ही सामान्य वर्तनी और ध्वनि हो गई है।

हम इस पर एक अन्य प्रकार से भी दृष्टिपात कर सकते हैं। संस्कृत-शब्द 'शांत' का निहितार्थ सुविधापूर्वक रहनेवाला चुप व्यक्ति है। संस्कृत उपसर्ग 'प्र' से बननेवाला 'प्रशान्त' शब्द किसी ऐसे व्यक्ति, वातावरण या दृश्य का अर्थ-द्योतक है जो मनमोहक या सुखोपभोग्य धीर-गंभीर होता है। यह वही संस्कृत-शब्द 'प्रशान्त' है जिसमें से 'र' गायब हो चुका है और अंगरेज़ी शब्द 'पेशेंट' बन गया है जो चुप और शांत, धीर-गंभीर व्यक्ति का सूचक है।

अथः इसका विलोम, विरुद्धार्थक शब्द 'इम्पेशेंट' अर्थात् (अ-प्रशान्त) वास्तव में उस व्यक्ति का अर्थ-द्योतक होना चाहिए जो अपने रोग से अस्वस्थ, असुविधाजनक स्थिति में होने के कारण उद्विग्न, व्यग्र, बेचैन होकर चिकित्सक (दु:खतार) के पास उपचार हेतु जाता है। परिणामस्वरूप, चिकित्सा हेतु चिकित्सक के पास जानेवाला बेचैन व्यक्ति का 'पेशेंट' कहलाना शाब्दिक असंगति, अनौचित्य है।

किसी भी स्पष्टरूपेण विचार करनेवाले व्यक्ति को अंगरेज़ी भाषा में प्रयुक्त एक ही पेशेंट (अर्थात् प्रशान्त) शब्द का दो परस्पर-विरोधी भावों में प्रयोग करने में असमानता प्रत्यक्षतः दिखाई पड़ जानी चाहिए। विशेषण के रूप में किसी जनसभा या व्यक्ति का वर्णन करते समय 'पेशेंट' शब्द का अर्थ शांत, इकट्ठे, सहिष्णु होता है जबकि किसी रोग से ग्रस्त, पीड़ित व्यक्ति के लिए भी वही 'पेशेंट' शब्द संज्ञा बन जाता है। यह तो संस्कृत के 'प्रशांत' शब्द का दुरुपयोग है। अतः संस्कृत-शब्द 'प्रशान्त' के स्थान पर छद्म-रूप में उपस्थित 'पेशेंट' अंगरेज़ी शब्द को 'स्वस्थ' व्यक्ति के द्योतक के रूप में संज्ञा व विशेषण दोनों ही प्रकार उपयोग में लाया जा सकता है। इसका विपरीतार्थक 'अ-प्रशान्त' अर्थात्

'इम्पेशेंट' शब्द ही वास्तव में प्रयोग में लाना चाहिए उस व्यक्ति के लिए जो उपचार हेतु चिकित्सक के पास जाए, क्योंकि उसकी शारीरिक अस्वस्थता उसे 'अ-प्रशान्त' (इम्पेशेंट) बना देती है। यह उस भाषायी बुद्धिभ्रंश और अनौचित्य का विशिष्ट उदाहरण है जो संस्कृत से टूट-टूटकर भाषाओं के अनेक समूहों के निर्माण के ज़िम्मेदार हैं। फिर भी, शब्दकोशों को तो संस्कृत-धातुओं को खोज निकालने के पावन कर्त्तव्य-पालन में अपनी से ओर कोई ग़लती नहीं करनी चाहिए।

'मनन-ज-शोथस' संस्कृत का यौगिक शब्द है जिसका अर्थ मस्तिष्क-आधारित सूजन है और जो 'मेनिनजाइटिस' (Meningitis) के रूप में अंगरेज़ी शब्द बना हुआ है।

आधुनिक रोग-सम्बन्धी शब्दावली में अंत्य 'इटिस' सूजन का अर्थ द्योतन करती है जैसे 'अपेन्डिसाइटिस'। इसका स्रोत संस्कृत का 'शोथस' शब्द ही है जो कुछ अंश में अशुद्ध उच्चारण के कारण 'साइटिस' या 'इटिस' बोला जाता है।

हम अब शरीर के विभिन्न अवयवों, भागों का विवेचन करेंगे। संस्कृत का 'हस्त' शब्द 'हैंड' (हैन्ड) की वर्तनी धारण कर चुका है, क्योंकि अन्तिम दो अक्षरों 'न्ड' ने संस्कृत के 'स्त' का स्थान ले लिया है।

'माउथ' (मुँह द्योतक) शब्द यदि 'मुख' उच्चारण किया जाए तो वह तुरन्त संस्कृत-शब्द 'मुख' के रूप में स्वयं को प्रकट कर देता है।

संस्कृत-शब्द 'कर्ण'(Karna) को अंगरेज़ी शब्द 'हार्ट' (हिअर्ट) के समान 'किअर्न' (Kearn) के रूप में भी वर्तनी-गत लिखा जा सकता है। उसमें से प्रारंभिक 'क' और अंतिम 'न' अक्षर लुप्त हो जाने पर अंगरेज़ी में केवल 'इअर' (कान) शेष रह गया है।

हम अब अध्ययन करें कि किस प्रकार संस्कृत-शब्द 'पाद' से अंगरेज़ी शब्द 'फुट' की व्युत्पत्ति हुई है। संस्कृत का 'प' अक्षर अंगरेज़ी में 'एफ' (फ) उच्चारण किया जाता है। इसी कारण संस्कृत का 'पितर' शब्द अंगरेज़ी में 'फादर' उच्चारण होता है। अतः संस्कृत शब्द 'पाद' में 'प' के स्थान पर 'फ' अक्षर ले आएँ, तब 'फाद' शब्द बनेगा। अब ध्यान रखें उस तथ्य को कि संस्कृत की 'आ' ध्वनि को अंगरेज़ी में 'ऊ, ओ' ध्वनि में मोड़ देते हैं। इसलिए 'आ' ध्वनि के स्थान पर 'उ' ध्वनि से 'फु' बन गया।

हम अब यह भी स्मरण रखें कि संस्कृत का 'दन्त' शब्द 'टुथ' भी वर्तनी

किया जाता है (जैसे डेन्टल और डेन्टिस्ट में)। इसलिए 'फाद' शब्द में 'द' की जगह पर 'ट' ले आइए। इस प्रकार, संस्कृत 'पाद' शब्द अंगरेज़ी का 'फुट' बन गया है।

अंगरेज़ी का 'नोज़' (नोस, Nose) शब्द 'ओ'-कार ध्वनि के कारण ही संस्कृत के नास शब्द का अंगरेज़ी उच्चारण है।

'आई' (आँख) संस्कृत-शब्द 'अक्ष' अर्थात् 'इयक्षि'(अक्षि) से बना है।

'एन्केफेलाइटिस' (Encephalitis) के नाम से ज्ञात रोग को प्रारंभिक 'एन्' अक्षरों के बिना भी उच्चारण करने पर संस्कृत-शब्द 'कपाल-इटिस' दिख जाएगा जो कपाल अर्थात् सिर का अग्रभाग अर्थात् मस्तिष्क में शोथ (सूजन) का द्योतक रोग है।

अंगरेज़ी शब्द 'पैन्क्रियास' (Pancreas) में 'च' जोड़कर 'पाचनक्रियास' के रूप में भी लिखा जा सकता है जिससे संस्कृत-शब्द प्रकट हो जाएगा जिसका अर्थ है पाचन (खाद्यान्न पचाने की) क्रिया या पाचन-अंग, अवयव।

'अनस्थीसिआ' (Anasthesia) शब्द पूर्णतः संस्कृत-शब्द है जिसमें प्रारंभिक 'अन' अक्षरों का अर्थ 'अभाव' है। दूसरा अक्षर-भाग 'स्थ' सामान्य स्वस्थता और गति का द्योतक है। तीसरा 'सिया' ध्वनि-भाग 'शायी' अर्थात् लेटे हुए अर्थात् सोते हुए का अर्थ-संकेतक है। इस प्रकार 'अनस्थीसिआ' शब्द संस्कृत का है जिसका अर्थ 'अवचेतन अवस्था में लेटा हुआ' है।

'सर्जन' (Surgeon) शब्द संस्कृत का 'शल्यजन' है जो तेज़ धारवाला उपकरण हाथ में धारण करनेवाले व्यक्ति का द्योतक है। संस्कृत की 'र' और 'ल' ध्वनियाँ अंगरेज़ी भाषा में प्रायः एक-दूसरे का स्थान ले लेती हैं।

'फ़िज़िशियन' (Physician) शब्द संस्कृत के 'भिषग्' और 'भैषज्यम्' शब्दों का अशुद्ध उच्चारण है। इनका संस्कृत-भाषा में अर्थ होता है आरोग्य की पद्धति या व्यवसाय या उपचार। यहाँ यह बात ध्यान रखने की है कि 'ब' और 'प' परस्पर परिवर्तनीय हैं। अर्थ यह है कि संस्कृत की 'प' ध्वनि 'ब' ध्वनि में बदल जाती है, या फिर संस्कृत की 'ब' ध्वनि अंगरेजी भाषा में 'पी' (प) ध्वनि में परिवर्तित हो जाती है।

'डर्म' (Derm, अर्थात् चमड़ी) संस्कृत के 'चर्म' शब्द का अपभ्रंश उच्चारण है। फलस्वरूप 'डर्मटोलॉजी' शब्द संस्कृत-भाषा का 'चर्म-तो-लग' शब्द है जिसका अर्थ चर्म से सम्बन्धित चिकित्सा-विज्ञान की शाखा है।

'आस्टिओ-मलेसिआ' (Osteomalacia) शब्द संस्कृत के दो शब्दों 'अस्थि' (अर्थ है हड्डी या हड्डियाँ) और 'मल' (अर्थ है प्रभावित, दूषित या रोग-ग्रस्त) का यौगिक शब्द है। परिणामतः 'आस्टियो' से प्रारंभ होने वाले सभी शब्द (जैसे आस्टिओ-पैथी) संस्कृत-भाषा के हैं।

संस्कृत-भाषा से परिचित चिकित्सा-व्यवसायी कर्मचारियों को इसी प्रकार काल्पनिक यूरोपीय (या अंगरेज़ी) शब्दों के संस्कृत-मूल को खोजना, देखना चाहिए।

गर्भाशय का द्योतक 'मैट्रिक्स' (Matrix) शब्द भी संस्कृत 'मातरिक्ष' अर्थात् माता के रिक्त, खाली स्थान हैं जैसे 'अंतरिक्ष' है जो रिक्त स्थान अर्थात् आकाश, आसमान का द्योतक है।

अंगरेज़ी शब्द 'फीवर' (बुखार) 'ज्वर' के रूप में उच्चारण किए जानेवाले 'जीवर' संस्कृत-शब्द का थोड़ा-सा पृथक्, भिन्न रूप है।

अंगरेज़ी 'कफ' शब्द का ज्यों का त्यों उच्चारण 'कफ' संस्कृत में है यद्यपि इसके स्वगुणार्थ में थोड़ा-सा अन्तर है। संस्कृत में 'कफ' शब्द वैदिक आरोग्य-विज्ञान आयुर्वेद में 'फ्लेग्म' (Phlegm) का द्योतक है। किन्तु शरीर में बलग़म के स्तर में उसकी मात्रा में असंतुलन हो जाने से 'कफ' हो जाता है। वास्तव में अंगरेज़ी शब्द 'फ्लेग्म' संस्कृत-शब्द 'श्लेष्म' का अशुद्ध अपभ्रंश उच्चारण है। यह प्रदर्शित करता है कि जिस प्रकार संस्कृत-भाषा अन्य सभी भाषाओं की जननी है, उसी प्रकार आयुर्वेद भी सभी आधुनिक चिकित्सा-प्रणालियों, पद्धतियों का मूल, उनका जनक है।

अनेकों अंगरेज़ी शब्दों तथा हाइड्रो-इलैक्ट्रिसिटि, हाइड्रॉलिक्स, हाइड्रॉफालस आदि में प्रयुक्त हाइड्रो अंगरेज़ी-उपसर्ग संस्कृत-शब्द 'आर्द्र' है जो गीली, जलीय या नमी वाली किसी भी वस्तु का अर्थ-द्योतक है। चिकित्सा-शब्द 'हाइड्रोकेफालस' पूरी तरह संस्कृत (आर्द्र-कपालस) है जो सिर में पानी इकट्ठा हो जानेवाले रोग का अर्थ-द्योतक है।

'डेन्टिस्ट्री' संस्कृत-शब्द 'दन्त-शास्त्र' है जिसका अर्थ दाँतों के अध्ययन की शाखा, या दाँतों का विज्ञान है।

संस्कृत-शब्द 'शास्त्र' अंगरेज़ी भाषा में व्यापक स्तर पर प्रयुक्त हुआ है किन्तु इसका उच्चारण 'स्ट्री' किया जाता है जैसे कैज़ुइस्ट्री और कैमिस्ट्री में।

13
विज्ञान-सम्बन्धी शब्दावली

आधुनिक शब्दावली-सम्बन्धी विश्वासों में यह धारणा सम्मिलित है कि चूँकि 20वीं शताब्दी की वैज्ञानिक प्रगति अद्वितीय और अभूतपूर्व है, इसलिए इसकी सभी तकनीकी शब्दावलियाँ भी आधुनिक पश्चिमी मूल की ही होंगी, होनी चाहिएँ।

यह विश्वास युक्तियुक्त नहीं है, निराधार है। 'इतिहास स्वयं को दोहराता है' एक अतिप्रसिद्ध कहावत है। ऐसा होने का कारण यह है कि सौरप्रणाली, बिना विराम, चक्कर पर चक्कर लगाती ही रहती है।

डाकतार से लेकर अन्तरिक्षयानों तक की जिन वैज्ञानिक उपलब्धियों की हम शेखी बघारते हैं, वे सब पिछले 150 वर्षों में ही प्राप्त हुई थीं। यह 150-वर्षीय कालखण्ड मानवता के अरबों-खरबों वर्ष के इतिहास में क्षण के भी हज़ारवें भाग से कम अवधि का है। अतः समझने योग्य बात यह है कि सागर में होनेवाला ज्वार-भाटा, उतार-चढ़ाव के समान और व्यक्तियों के भाग्यों में उदय और पतन के समान ही पूर्ण रूप में सारी मानवता या विशिष्ट मानव-समुदाय कुछ कालखण्डों में प्रगति-पथ पर अग्रसर हुए होंगे और अन्य अवसरों पर पतन के गर्भ में भी गए होंगे। उदाहरण के लिए, माया और इंका सभ्यताओं का अस्तित्व ही समाप्त हो गया, नामोनिशान ही मिट गया है जबकि उत्तरी अमरीकी द्वीप के रैड इंडियन लोग और आस्ट्रेलिया के माओरी लोग अन्तर्राष्ट्रीय नौका-सेवाओं के भंग हो जाने के कारण अन्य द्वीपों के प्रगति-प्राप्त समुदायों से अटलांटिक और प्रशान्त के विशाल प्रसार-क्षेत्रों के पार से दूर तक फैले हुए प्रदेशों में अलग-अलग होकर निरक्षरता और पिछड़ेपन की ओर आहिस्ता-आहिस्ता झुकते गए।

किन्तु आदिकाल की प्रथम पीढ़ी से प्रारंभ होकर वैदिक संस्कृति की उद्घोषणा करनेवाली मानवता कृत, त्रेता और द्वापर नामक तीन युगों तक

विश्वव्यापी वैदिक संप्रभुता के अधीन समृद्धि और प्रगति को प्राप्त होती गई।

उन संप्रभुता-सम्पन्न साम्राज्यों के अधीन 'भारतवर्ष' शब्द संपूर्ण भू-मण्डल का द्योतक था जो एक अति प्राचीन वैदिक सम्राट् भरत के राज्य-शासन में सम्पन्न हुआ था।

यहाँ यह तथ्य भी ध्यान में रखना चाहिए कि शब्द 'यूनिवर्स' का निहितार्थ भी एक राजनैतिक पहचान के रूप में सम्पूर्ण भू-मण्डल ही है, जहाँ 'यूनि' का अर्थ 'एक अकेला' और 'वर्स' सम्पूर्ण भू-मण्डल है। 'यूनिवर्स' शब्द में उक्त बाद का 'वर्स'-अक्षर वही संस्कृत अंत्य अक्षर है जो भारतवर्ष शब्द में मिलता है।

परिणामतः 'महाभारत-युद्ध' का अर्थ वह 'महा-विश्व-युद्ध' है जो ईसा-पूर्व 5561 में लड़ा गया युद्ध विश्वास किया जाता है।

यह युद्ध 15 नवम्बर से केवल 18 दिन तक ही चल सका था क्योंकि इसमें हमारे ही दिनों के अणु-बमों, उद्जन-बमों, और रासायनिक शस्त्रास्त्रों जैसे आणविक और जैविक उपकरणों का दोनों ही पक्षों द्वारा उपयोग किया गया था जिनकी महाविनाशकारी शक्ति थी। आधुनिक शब्द 'मिसाइल' अपने मूसल जैसे आकार के कारण संस्कृत-शब्द 'मूसल' का ही रूपान्तर है।

'महाभारत' महाग्रंथ के अंतिम भाग में 'मौसल-पर्व' नामक अध्याय में उल्लेख है कि यादव-कुल के बच्चों ने कुछ अ-प्रयुक्त मूसल (मिसाइल) के साथ छेड़खानी, मज़ाक करते हुए इसके कुछ छोटे-छोटे कण सागर में प्रवाहित कर दिए थे। उक्त मूसल-कणों के चूर्ण से उग आए सरकंडों के कारण, जो अत्यधिक रेडियोधर्मी थे अर्थात् बहुत संवेदनशील थे, यादव-कुल में अनेक मौतें हो गईं जिनसे यदु (आधुनिक यहूदी) लोगों को विवश होकर वह विषमय, दूषित क्षेत्र त्याग देना पड़ा। अपने मूल, पैतृक द्वारका-साम्राज्य से यदु लोगों ने, समूहों में उत्तर और पश्चिम दिशा में जो निष्क्रमण किया था, वह वियोग-विलाप परम्परा 'वियोग-क्षण' के रूप में मनाई जाती है जो ईसा-पूर्व 3760 से प्रारम्भ है। वे समूह 22 थे। किन्तु उनमें से 10 गायब, लुप्त, समाप्त हो गए। शेष 12 इस्रायल-वासियों अर्थात् यहूदियों (ज़्यू) ज़ियोन-वादियों की जातियों के नाम से जाने जाते हैं।

'इस्रायल' शब्द संस्कृत यौगिक शब्द ईश्वर+ आलय की उलट-पुलट वर्तनी है। इसका अर्थ 'ईश्वर का घर' है जहाँ 'इस्र' ईश्वर का संक्षेप और

आलय (संक्षेप) 'अलय'-अयल) घर, निवास-स्थान है।

एक समर्थक प्रमाण यह है कि उनके सामी (सेमाइट) सहोदर—अरब लोग अपने धर्म को 'इस्लाम' नाम से पुकारते हैं जो 'ईश्वर के घर, निवास-स्थान' के द्योतक संस्कृत-शब्दों का उलटा-पुलटा उच्चारण है। 'इस्' (उच्चारण में ईश) ईश्वर का संक्षेप है और आलयम् अर्थात् 'लाम' घर, निवास-स्थान है। इस प्रकार यहूदियों का देश अर्थात् क्षेत्र भी उसी नाम का है जो अरबों के धर्म का नाम है।

तल (टेल)

'लम्बी दूरी' का अर्थ-द्योतक उपसर्ग 'तल' शब्द आधुनिक शब्दावली में खूब प्रयोग में आ रहा है। जैसे टेलिविजन, टेलीग्राफ, टेलिकम्यूनिकेशन और टेलिस्कोप आदि में।

यह संस्कृत शब्द 'तल' से व्युत्पन्न हैं। 'तल' का अर्थ दूरस्थ सीमा पर तला, तह, अधोभाग, पैंदा, निचला भाग।

टेलि-विज़न

'टेलि-विजन' शब्द में विज़न शब्द (उपसर्ग) संस्कृत का 'वीक्षण' अर्थात् 'निहारना, देखना या अवलोकन' करना है। अतः संस्कृत का 'तल-वीक्षण' शब्द अंगरेज़ी में 'टेलिविज़न' के रूप में विद्यमान है।

टेलिस्कोप, स्टेथोस्कोप, बाइस्कोप जैसे शब्दों में 'स्कोप' शब्द तथ्यतः 'स्सोप' है (क्योंकि अंगरेज़ी वर्णमाला के 'सी' अक्षर का उचारण 'स' है, 'क' नहीं)। उक्त शब्द 'स्सोप' में दोनों अक्षरों ने परस्पर स्थान-विपर्यय कर लिया है। संस्कृत का शब्द 'पश्य' (देखना) अंगरेज़ी भाषा में 'स्कोप' के रूप में प्रचलित है।

रेडियो

'रेडियो' शब्द दो संस्कृत-शब्दों 'रव' (ध्वनि, आवाज़, वाणी) और आकाश के अर्थद्योतक 'ड्यू' (द्यु) शब्द से बना है जो तारों की सहायता, सम्बल के बिना ही वायुमण्डल के माध्यम से ध्वनि के संप्रेषण का बतानेवाला, परिचायक है।

इसकी महत्त्वपूर्ण पुष्टि, भारत की 'राष्ट्रीय प्रसारण सेवा' द्वारा प्रयुक्त पर्यायवाची शब्द 'आकाश-वाणी' से होती है। वहाँ भी 'आकाश' का अर्थ

रिक्तस्थान, वायुमंडल और वाणी का मतलब 'ध्वनि, बोली, आवाज़, स्वर' है।

एटम

वैज्ञानिक कण 'एटम' (अणु), जो पिछले 50 वर्षों में तकनीकी भाषा में महत्ता को प्राप्त हो गया है, संस्कृत-शब्द 'आत्मा' का अशुद्ध, अपभ्रंश उच्चारण है क्योंकि पदार्थ का मूल प्राण, जीव 'एटम' (आत्मा) ही है।

किन्तु वैदिक बोलचाल, भाषा-शैली में चूँकि 'आत्मा' शब्द का विशिष्ट प्रयोग मात्र जीवधारियों, प्राणवंत सचेतन प्राणियों के लिए ही होता था, इसलिए पदार्थ के मूल कण का द्योतन करनेवाला शब्द था 'अणु'। वैदिक आणविक भौतिकी में प्रयुक्त लघु-आणविक कणों के लिए संस्कृत-शब्द रेणु था।

कणाद ही संभवतः एकमात्र नाम है जो उस अतिप्राचीन वैदिक अणु-भौतिकीशास्त्री का है जो हमें इस युग तक अक्षुण्ण प्राप्त है। कनाडा कणाद के नाम पर ही रखा गया है। अमरीकी महाद्वीप भी संस्कृत नाम 'अमर-ईसा'/अमर-ईका/ अमर-ईशा अर्थात् अमर्त्य दैव या ईश्वर धारण किए है।

'फ़िज़िक्स' (भौतिकी अर्थद्योतक) शब्द स्वयं ही संस्कृत के 'पश्य' शब्द से निर्मित है जिसका अर्थ है स्पर्शनीय, मूर्त, सुनिश्चित वस्तुएँ जिनको देखा या अनुभव किया जा सके जैसे ऊष्मा और वायु में।

'मेटाफ़िज़िक्स' (Meta-physics) शब्द भी संस्कृत-शब्दावली 'नेतु-फ़िज़िक्स' का अपभ्रंश, अशुद्ध उच्चारण है जहाँ 'ने-तु' उपसर्ग अर्थ-द्योतक है 'प्रत्यक्ष, ठोस, स्पर्शनीय नहीं' है अर्थात् 'यह मानव-अस्तित्व के आध्यात्मिक-पक्ष पर विचार करता है'।

अंगरेज़ी भाषा में अनेक बार 'एन' (न ध्वनि) अंगरेज़ी के 'एम' (म) अक्षर का छद्म रूप भी धारण किए रहता है। जैसा 'सिनोनिम' (Synonym, समान) शब्द से द्रष्टव्य है जो तथ्य रूप में 'समानम' अर्थात् विकल्प या समान, बराबर ही लिखा जाना चाहिए।

कैमिस्ट्री (Chemsitry, रसायन-शास्त्र)

'कैमिस्ट्री' शब्द संस्कृत-शब्द 'किमया शास्त्रम्' का उलट-पुलट, अड़बड़-गड़बड़ उच्चारण है जिसका अर्थ 'रासायनिक रूपान्तर, रूप-परिवर्तन' है।

'अलकैमी' (Alchemy) शब्द भी संस्कृत के उसी 'किमया' से व्युत्पन्न है।

पहले दो अक्षर 'अल' इस शब्द में जोड़ देने की प्रथा के प्रमाण, साक्ष्य हैं। यह प्रथा अरब में प्रचलित थी/ है।

इसी का अन्य उदाहरण आधुनिक शब्द 'अलकोहल' है। 'कोहल' शब्द चावल से बनी शराब का द्योतक संस्कृत-शब्द है। अरबी भाषा का उपसर्ग 'अल' इस शब्द में जुड़ गया जैसे 'अलजब्रा' में।

अरबी भाषा के उपसर्ग क्यों?

ऐसे अरबी उपसर्ग और अन्य लक्षण, जो यूरोपीय शब्द-समूहों में मिलते हैं, दर्शाते हैं कि अरबी-वंश के घोड़ों का देश अर्वस्थान (अर्थात् अर्व स्थान या अरेबिया) बहुत लम्बे समय तक वह भू-प्रदेश बना रहा जहाँ ईसाइयत की बहुतायत के कारण यूरोप से समाप्त हो जाने के बाद भी संस्कृत-भाषा की अकादमियाँ अक्षुण्ण, संरक्षित प्रचलित रहीं। (संस्कृत में 'अर्व' शब्द का अर्थ 'घोड़ा' होता है।) नव-ईसाई उग्रवादियों और कट्टरपंथियों द्वारा आतंक, यातनाओं और अत्याचारों के माध्यम से यूरोप से संस्कृत-गुरुकुलों का नामोनिशान मिटा दिया गया था। इसी कारण 312 ईसवी पश्चात् से आगे यूरोप में 'अंधकार युग' का प्रारंभ हुआ।

इस्लामी कट्टरवाद ने भी इस प्रकार 622 ईसवी पश्चात् से शुरू कर पश्चिम एशियाई देशों में स्थित संस्कृत-शिक्षा की सभी संस्थापनाओं को गुल कर दिया, समाप्त कर दिया।

किन्तु 300 वर्षों के उक्त अराजकता-काल में भी यूरोपीय लोग पश्चिम एशियाई क्षेत्र के उन संस्कृत-गुरुकुलों में शिक्षा के लिए भाग-दौड़ करते रहते थे जहाँ अभी तक इस्लाम ने उन शिक्षा-सदनों को नष्ट करना प्रारम्भ नहीं किया था।

पुलस्तिन एक प्रसिद्ध वैदिक ऋषि था। पैलस्टाइन (Palestine, फिलस्तीन) और पैलस्टीनियन (फिलस्तीनी) शब्द भी पुलस्तिन के नाम से ही व्युत्पन्न हैं। पश्चिम एशिया में शिक्षा-व्यवस्था उसी के शिक्षण-दीक्षण में बहुत लम्बी अवधि तक चिर-अतीत काल में चलती रही। चूँकि ईसाइयत के उग्रवादियों ने यूरोप में वैदिक शिक्षा-संस्थापनाओं को समूल नष्ट कर दिया था, इसलिए यहाँ (यूरोप) के निवासियों ने मजबूर होकर शैक्षिक-क्षुधा शान्त करने के

लिए पश्चिम एशियाई देशों में जाना शुरू कर दिया, यद्यपि बहुत थोड़े लोग ही उक्त सुविधा का भार झेल पाए, क्योंकि वैसा करने का अर्थ अपने घरों से दूर वातावरण में जीवन-यापन करना था। किन्तु वैदिक, संस्कृत-शिक्षा-अर्जन का आकर्षण ऐसा था कि जो भी यूरोपवासी वहाँ जाकर रहने, शिक्षा-ग्रहण करने का कष्ट व भार वहन कर सकते थे, वे सभी पश्चिम एशियाई देशों में स्थित संस्कृत-अकादमियों में कम-से-कम शिक्षा की कुछ ऊपरी जानकारी के लिए तो प्रविष्ट हो ही गए।

सन् 622 ईसवी से आगे जब इस्लामी कट्टरवाद ने भी अपना सिर उठाया और आतंक, यातनाओं व अत्याचारों, तथा लालच के माध्यम से इसने बची-खुची वैदिक संस्कृत-शिक्षा-सुविधा को भी शून्य कर दिया, तब यूरोप में अंधकार-युग और भी अधिक अंधकारपूर्ण हो गया, क्योंकि ज्ञान के सभी प्रकाश-स्तम्भ सिन्धु नदी के पश्चिम की ओर के सभी क्षेत्रों से ईसाइयत और इस्लाम द्वारा क्रमिक रूप से बुझा दिए गए, समाप्त-ध्वस्त-नष्ट कर दिए गए थे।

संज्ञाओं के साथ 'अल' को उपसर्ग के रूप में शब्द के आगे देने का अरबी-ढंग यूरोपीय भाषा, बोल-चाल में भी प्रवेश पा गया है जैसे 'अल-इटालिया' नामवाली इटालवी वायुसेवा से और 'इल' (अल) डि फ्रांस' नामक फ्रांसीसी समुद्री पोत से देखा जा सकता है। महाभारत-युद्ध (सन् 5561 ईसा पूर्व) के पश्चात् शुद्ध, वैदिक शिक्षण के क्षेत्रीय अरबी-पद्धति के साथ क्रमिक रूप से घुल-मिल जाने, मिलावट का ही उपर्युक्त परिणाम था।

यदि संयोग से ईसाइयत द्वारा बर्बरता, कलाकृति-विध्वंस से पहले ही इस्लामी कट्टरवाद का पदार्पण हो गया होता, तो पश्चिम एशियाई क्षेत्रों में रहनेवाले शिक्षा के इच्छुक अरबों और ईरानियों ने यूरोप में बची-खुची वैदिक शिक्षा की संस्कृत-अकादमियों (विद्यापीठों) में शरण, शिक्षा-दीक्षा ली होती। उस अवस्था में हमने पश्चिम एशियाई (अरबी) भाषा-शैली में यूरोपीय चिह्न खोजे होते। किन्तु जैसा भाग्य-वशात् होना था, तीन सौ वर्ष बाद वैसी ही इस्लामी विनाश-लीला से पूर्व ही ईसाइयत के नाम पर पश्चिम में शिक्षा-व्यवस्था का विध्वंस कर दिया गया। अतः अपने-अपने प्रभाव-क्षेत्रों से वैदिक शैक्षिक-संस्थापनाओं का नाम तक समाप्त, धूमिल कर देने के लिए ईसाइयत और इस्लाम, दोनों ही ज़िम्मेदार थे।

14
अंगरेज़ी भाषा में दृष्टिगोचर संस्कृत विशेषक

अनेक विशिष्ट संस्कृत विशेषक हैं जो अंगरेज़ी भाषा में सभी स्थानों पर परिलक्षित होते हैं।

ऐसी ही एक विशेषता शब्द का अंत्य भाग 'बल'(Ble, बी एल ई) जिसका अर्थ बल, सामर्थ्य, शक्ति, ऊर्जा, क्षमता, योग्यता है। उदाहरण के लिए 'एबल' (Able), 'गुलिबल' (Gullible), 'एडवाइज़ेबल' (Advisable), 'एक्सैप्टेबल' (Acceptable), 'वलनरेबल' (Vulnerable), 'कैपेबल' (Capable), 'ऑनरेबल' (Honourable), 'लायबल' (Liable), 'कलरेबल' (Colourable), आदि ऐसे ही शब्द हैं।

अन्य लक्षण 'फाई' (Fy) है। जैसे 'सैटिस्फाई' (Satisfy), 'सॉलिडिफाई' (Solidify), 'पेट्रीफाई' (Petrify) आदि में। यह संस्कृत-शब्दों का अन्त्य भाग 'प्राय' है। जैसे 'जलप्राय' अर्थात् बाढ़ में जलमग्न, और 'मृतप्राय' अर्थात् लगभग मरे-समान, मरा-जैसा।

संस्कृत-भाषा में तुलनात्मक अभिव्यक्तियों को 'तर' प्रत्यय द्वारा दर्शाते हैं जबकि सर्वश्रेष्ठता को अन्त्य 'अम' द्वारा प्रकट किया जाता है। संस्कृत-व्याकरण का यह नियम 'तर-तम भाव' अर्थात् 'तर-तम' अभिव्यक्ति, नियम, पद्धति कहलाता है। इस प्रकार अधिकतर ही 'ग्रेटर' (Greater) है, बृहत्तर 'बिगर' (Bigger), है, वृद्धन्तर 'ओल्डर' (Older) है। यह नियम अंगरेज़ी में पूरी तरह पालन किया जाता है, जैसे 'बैटर' (Better), 'लैस्सर' (Lesser), 'टाल्लर' (Taller), 'ब्रॉडर' (Broader), आदि शब्दों में।

इसी प्रकार सर्वश्रेष्ठता-सूचक उत्तमावस्था-उक्ति में संस्कृत में 'अम' अन्त्य होता है जैसे अधिकतम, अर्थात् मैक्सिमम (Maximum), अन्तिमम्, (अल्टीमम, Ulimum) या अल्टीमेटम (Ultimatum) है अंगरेज़ी भाषा में।

'बी प्लीज़्ड' (Be Pleased, प्रसन्न हों) या 'प्लीज़्ड बी दाऊ' (आप

प्रसन्न हों) अतिप्रसिद्ध, प्रचलित उक्ति अंगरेज़ी भाषा में विद्यमान है। उक्त 'प्लीज़्ड' शब्द संस्कृत के 'प्रसीद' शब्द का अपभ्रंश, अशुद्ध उच्चारण है।

संस्कृत-भाषा की कहानियों में लम्बे-लम्बे समय, वर्षों तक तपस्या करने वाले ऋषिगण देवताओं की अनुनय-विनय करते बताए जाते हैं, 'प्रसीदो भव' अर्थात् 'मुझसे प्रसन्न हों' या 'भगवन्, प्रसीद····प्रसीद !'

भाग्यवश 'प्रेज़िडैन्ट' (President) शब्द में मूल संस्कृत-शब्द की 'र' (आर) ध्वनि अभी भी बची हुई है। अन्यथा, 'प्लीज़्ड' शब्द को देखने पर तो 'प्रेज़ीडैन्ट' पदवी की वर्तनी 'प्लेज़िडैन्ट' (Plesident) होनी चाहिए थी।

उक्त 'प्रेज़ीडैन्ट' शब्द संस्कृत-भाषा के शब्द 'प्रसीदवन्तः' का थोड़ा-सा अशुद्ध उच्चारण है, अर्थात् 'वह जो सदैव प्रसन्न, खुश रहता है।' उसकी इसी पदवी के कारण प्रेज़िडैन्ट की ओर से जारी होनेवाले प्रत्येक निर्देश में ये शब्द अंकित कर देने की प्रथा, रीति बन गई है कि 'प्रैज़िडैन्ट घोषणा या आदेश या बर्खास्तगी····प्रसन्नतापूर्व करते हैं।' आदि-आदि।

अंगरेज़ी भाषा में बहुत बड़ी संख्या में शब्दों का अन्त 'इटि' में होता है, जैसे पॉसिबिलिटी (Possibility), एबिलिटी (Ablity), यूटिलिटी (Utility), गुलिबिलिटी, एडविज़िबिलिटी आदि। ऐसे मामलों में उक्त 'इटि' अन्त्य पद निश्चित रूप में संस्कृत का 'इति' पद ही है जिसका अर्थ है 'इस प्रकार'।

संस्कृत का 'दुस्' (दुष्) अर्थात् 'दु' उपसर्ग 'सु' का उल्टा, विलोम, विपरीतार्थक है। उपसर्ग 'दु' किसी बुरी बात का द्योतक हैं जबकि 'सु' अच्छी बात का परिचायक है। अंगरेज़ी भाषा में वह 'दुस्, दुष्, या दुर्' उपसर्ग 'मिस' में बदल गया है। इस प्रकार संस्कृत का दुष्कृत्य अंगरेज़ी में 'मिस-डीड' बन गया है। अन्य ऐसे ही शब्द हैं—मिसकैरिज, मिसनौमर, मिसजज, मिस-एप्रोप्रिएट, मिसोगैमी, मिसोजिनिष्ट, मिसप्रिन्ट, मिसप्रोनाउन्स, मिस-रीड, मिस-रिप्रेजैन्ट, मिस-रूल, आदि। संस्कृत में उपसर्ग 'दु' भी इसी भावना का परिचायक है जैसा दुर्योधन, दुश्शासन, दुर्भावना, दुर्धर, दुर्वास, दुर्व्यवहार, आदि शब्दों में देखा जा सकता है।

संस्कृत-भाषा में 'मन्त' और 'वन्त' अन्त्य पद के साथ शब्दों का होना सामान्य बात है। उदाहरण के लिए 'श्रीमन्त' (धन से सम्पन्न) और 'बुद्धिवन्त' (विरली बुद्धि, प्रज्ञा से सम्पन्न) शब्द हैं। इसी के अनुसार ऐसे ही अन्त्य पदोंवाले अंगरेज़ी शब्द भी संस्कृत-मूलक ही समझे जाने चाहिएँ जैसे एडवैन्ट, एडामेन्ट,

सेक्रामेन्ट, सप्लीमेन्ट, प्रीडिकामेन्ट, आदि। 'सर्वेन्ट' शब्द संस्कृत का है जिसका अर्थ वह व्यक्ति है जो विभिन्न (सौंपे गए) कार्यों, उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हर समय चलायमान रहता है। प्रारंभिक भाग 'सर' संस्कृत-भाषा में गति, चाल, आदि का द्योतक है। हम इसी पुस्तक में कहीं अन्यत्र कह आए हैं कि अंगरेज़ी शब्द 'कार' (car, कर) को यदि 'सर' उच्चारण करें तो यह शब्द स्वयं ही दर्शा देगा कि उस वाहन का द्योतक है जो सरकता चलता है।

'ग्राफ़' अर्थात् 'ग्राम' और 'ग्राफ़ी' अन्त्य पदों का रूप भी संस्कृत के 'ग्रथ' शब्द का, जो पदार्थ या सामग्री के क्रमशः 'ध्यानांकित किए, सूचीबद्ध किए, या लिखित'—इसी क्रमानुसार भाव का द्योतक है, अशुद्ध-अनुचित उच्चारण के कारण प्राप्त हुआ है। अतः टेलिग्राम, टेलिग्राफ़ी, कार्डियोग्राम, कार्डियोग्राफ़ी, ज्योग्राफ़ी, स्पैक्ट्रोग्राफ़ी, जैसे सभी अंगरेज़ी-शब्द संस्कृत-भाषा के शब्द ही हैं।

'आर्ट' (Art) संस्कृत में कला अर्थात्, अंगरेज़ी वर्तनी में भी कला (या सत्ता है जो 'सी ए एल ए') लिखा जाएगा। अतः अंगरेज़ी शब्द 'कैलीग्राफ़ी' कलात्मक लेखन, 'कलाग्रथ' का सूचक है।

कम्यूनिज़्म, बुधिज़्म, हिन्दू-इज़्म, जैसे शब्दों में 'इज़्म' अन्त्य पद संस्कृत का 'स्म' है।

कल्चर, एग्रीकल्चर, सेरिकल्चर, जैसे शब्दों में अन्त्य पद 'चर' संस्कृत के 'आचार' अर्थात् व्यवहार अर्थात् व्यक्ति किस-किससे मिलता-जुलता या उस वस्तु का लेन-देन या निपटाव करता है—का द्योतक है। उदाहरणार्थ, 'सदाचार' का संस्कृत भाषा में अर्थ 'अच्छा व्यवहार' होता है, जबकि 'दुराचार' का मतलब 'बुरा व्यवहार' है।

अंगरेज़ी भाषा-शास्त्र या किसी भी यूरोपीय शैली के अनुसार 'क्रिश्चियनिटी' शब्द भ्रामक, ग़लत है। यदि क्रिश्चियनिटी जीसस क्राइस्ट द्वारा संस्थापित या उससे ही प्रारंभ किए गए धर्म का द्योतक है तो इसका नाम क्राइस्ट-इज़्म या जीसस-इज़्म होना चाहिए था। इसकी वर्तनी क्राइस्ट-नीति (अर्थात् क्रिश्चियनिटी) दर्शाती है कि यह तथ्य रूप में संस्कृत-शब्द कृष्ण-नीति का अशुद्ध, अपभ्रंश उच्चारण है। चूँकि नीति अर्थात् भगवान् कृष्ण का प्रवचन, उपदेश भगवद्गीता में उद्धृत है, इसलिए कृष्णनीति (क्रिश्चियनिटी) मूल रूप में शुरू से ही कृष्ण-भक्तों का वैसा ही एक संप्रदाय थी जैसा आज 'इसकोन' है। किन्तु पीटर और पाल ने कृष्ण के उक्त सम्प्रदाय की एक शाखा का अपहरण कर

लिया और नव-धर्म-परिवर्तित रोमन सम्राटों ने अपनी सेनाओं के बल पर उस धर्म को निहत्थे यूरोप के लोगों पर थोप दिया, इसलिए चिर-अविस्मरणीय समय से यूरोप में कार्यरत वैदिक पुरोहित-वर्ग अचानक दृश्य-परिवर्तन की घड़ी में क्रिश्चियन पुरोहित-वर्ग के रूप में, छद्मवेश में भी काम करता रहा। यही कारण है कि प्रतीक-रूप में पवित्रीकरण करने हेतु पुण्यजल सभी दिशाओं में छिड़कना और भक्तों के विशाल एकत्र जन-समुदाय को पुण्य जल का आचमन (आजकल शराब) और ईश्वर के अनुग्रहरूप प्रसाद बाँटना, वैदिक प्रणाली का निर्लज्ज, अविचलित अनुक्रम ही चालू रखना है।

15
विश्व-व्यापी सम्मान-सूचक शब्दावली

प्राचीन काल में संस्कृत-भाषा की विश्व-व्यापकता का प्रमाण सभी स्थानों पर आज भी विद्यमान तथा प्रचलित वैदिक आदरसूचक शब्दों से उपलब्ध हो जाता है।

संस्कृत का सर्वाधिक, सर्वलोकप्रिय आदरार्थक शब्द है श्री जिसे स्री, श्री, आदि के अनेक रूपों में लिखा जा सकता है।

'श्री' धन, सत्ता-शक्ति और शान-शौकत, गौरवावस्था की द्योतक है, तथा इसीलिए सम्मानित अवस्था के एक उद्योगी तथा साधन-सम्पन्न व्यक्ति का परिचायक भी है।

इसके संस्कृत भाषा में अन्य रूप हैं श्रीयुत, श्रीमद्, महिलाओं के लिए श्रीमती और पुरुषों के लिए श्रीमान एवं श्रीमन्। अंगरेज़ी भाषा में यही शब्द 'सर' (Sir) और 'साअर' (Sire) के रूप में अभी भी विद्यमान हैं।

लैटिन भाषा में यही शब्द 'सेर' था जैसा प्राचीन यात्री मार्कोपोलो को 'सेर मार्कोपोलो' के रूप में सम्बोधित किए जाने से मालूम पड़ता है जो संस्कृत में 'श्री मार्कोपोलो' के समान है।

प्रसंगवश बता दिया जाए कि मार्कोपोलो नाम स्वयं ही पूरी तरह संस्कृत का है यद्यपि इसका उच्चारण पर्याप्त मात्रा में विकृत हो चुका है। 'मार्को' शब्द 'एक महान्' ऋषि के अर्थ-द्योतक संस्कृत के 'महर्षि' शब्द का मिश्रित उच्चारण है, 'पोलो' पालित, पाला-पोसा गया का अर्थ-द्योतक संस्कृत-शब्द 'पाल' का 'ओ'-कार उच्चारण है। इस प्रकार महर्षि पाल अर्थात् मार्कोपोलो उस व्यक्ति का द्योतक है जो किसी महान् ऋषि द्वारा पाला-पोसा गया हो।

इससे पश्चिमवासियों को आर्नोल्ड या एने/एनी जैसे अपने व्यक्तिवाचक नामों और मैक्डोनल्ड या हार्वे जैसे कुलनामों का विश्लेषण करने की आवश्यकता अवश्य समझ आ गई होगी।

पश्चिम देशवासियों से जब उनके व्यक्तिगत नामों का अर्थ पूछें तो वे प्रायः कह देते हैं कि उनके नामों के कोई विशेष अर्थ नहीं हैं। यह ग़लत धारणा है। मानव-कंठ से निकलनेवाली प्रत्येक ध्वनि का एक विशेष अर्थ, प्रयोजन होता है, जैसे दबी मंद हँसी से हर्ष प्रकट होना तथा पिनपिनाना से ठिठकना आदि। अतः यह तो सोचा ही नहीं जा सकता कि लाड़-प्यार करनेवाले माता-पिता अपनी सन्तानों को निरर्थक नामों का बोझ और पट्टी से लाद दें। सभी पश्चिमी नामों का एक निश्चित अर्थ होना चाहिए जिसकी खोज-पड़ताल व अध्ययन होना चाहिए।

सम्मानसूचक शब्दों पर पुनः वापस विचार करें तो हम पाते हैं कि भारत में, जहाँ संस्कृत-भाषा अभी भी सक्रिय और भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं का चेतन स्रोत है, महिलाओं के लिए 'श्रीमती' और पुरुषों के लिए 'श्री/श्रीमान' अत्यन्त लोकप्रिय सम्मानसूचक शब्द हैं जो प्रचलन में हैं।

ये दोनों थोड़ी-सी भिन्नता के साथ इटली में भी उपयोग, व्यवहार में आ रहे हैं और वहाँ साइनर (सिगनर), साइनोरिटा (सिगनोरिटा), साइनोरा (सिगनोरा) और साइनोरिना (सिगनोरिना) कहलाते हैं।

भारत में सामान्यतः प्रयोग में आनेवाले अन्य आदरसूचक शब्द हैं 'महाशय' और 'महोदय'। अंगरेज़ी-प्रयोग में उनका विभिन्न रूप 'मिस्टर' शब्द है जो संक्षेप में 'एम आर' (Mr.) लिखा जाता है। यह 'मिस्टर' शब्द भी 'मास्टर' शब्द का भिन्न रूप है जो स्वयं संस्कृत-शब्द 'महास्तर' है जिसका भावार्थ उच्च-स्तरवाला व्यक्ति है। विज्ञान या कला में मास्टर की उपाधि (एम॰ एस-सी॰ या एम॰ ए॰) का भी यही अर्थ है—वह व्यक्ति जो किसी विशेष विषय में प्रवीणता का उच्च-स्तर प्राप्त कर चुका है।

फ्रांस में सामान्य, सम्मानसूचक शब्द 'मोनसिइयर' है जो मनमौजी तौर पर 'मोसिय' उच्चारण किया जाता है। उक्त 'मोसिय' उच्चारण पहले बताए गए संस्कृत-शब्द 'महाशय' का अपभ्रंश-उच्चारण है, जबकि लिखित 'मोनसियर' संस्कृत-शब्द 'मान्यश्री' अर्थात् 'सम्मान्य, मान्य श्री' है।

'हर' एक अन्य सम्मानवाचक शब्द है जो दिव्य आभायुक्त व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रकार जब गंगा जैसी पुण्य-सलिला नदी का पवित्र आकाशीय नामोच्चार किया जाता है, तब उसके नाम का आह्वान 'हर गंगे' के स्वर से किया जाता है।

इसी प्रकार जब राम और कृष्ण जैसे देवताओं की स्मृति कर उन्हें आहूत किया जाता है तब उनका आह्वान 'हरे राम, हरे कृष्ण' के रूप में किया जाता है। चूँकि भगवान् शिव को 'महादेव' अर्थात् 'महान् देवता' के रूप में सम्बोधित किया जाता है, इसलिए उनकी उच्चतर प्रतिष्ठा दो सम्मानसूचक उपसर्गों, शब्दों के रूप में प्रदर्शित की जाती है जैसे 'हर हर महादेव'।

अंगरेज़ी शब्द 'मिस' और 'मिसेज़' संस्कृत-भाषा के शब्द 'महिषी' के अशुद्ध, अपभ्रंश उच्चारण हैं। 'महिषी' शब्द उच्च श्रेणी की महिला का और पट-रानी का भी द्योतक है।

'श्री' शब्द का अरबी-भाषा में रूप 'यासर' है जैसे 'यासर अराफ़ात' में।

'मैडम' (मदाम) संस्कृत-भाषा का 'माताम्' अर्थात् माता अर्थात् माँ शब्द है।

फ्रैंच भाषा में 'पाइड' (उच्चारण में पियये) शब्द वास्तव में संस्कृत का 'पाद' शब्द है जो 'पद, पैर' का अर्थ-द्योतक है और फ्रांसीसी लोग जिस शब्द के अंतिम अक्षर 'ड' (द) को निर्ध्वनि मानकर ही व्यवहार, उच्चारण करते हैं।

फ्रांस के 'नोट्रे डेम' मंदिरों में श्रद्धेय, पूज्य, गण्यमान्य व्यक्तियों के समारोहपूर्वक चरण-प्रक्षालन की रीति, प्रथा अभी भी विद्यमान, प्रचलित वैदिक औपचारिकता ही है।

16
राजा-संबंधित शब्दावली

'मोनार्क' (Monarch) शब्द संस्कृत का यौगिक शब्द 'मानव-अर्क' है जिसका अर्थ 'मनुष्यों के मध्य सूर्य' है। साहस और गौरव जैसे राजा-योग्य गुणों के लिए सादृश्य के रूप में सूर्य का वर्णन वैदिक संस्कृति में सामान्य है। प्रतापादित्य और विक्रमादित्य जैसी उपाधियाँ या नाम 'साहस का मूर्तिमन्त सूर्य' अर्थात् 'सूर्य की चमक जैसा चकाचौंध करनेवाला पराक्रम' का अर्थ-द्योतन करते हैं।

फ्रांस के शासक-राजवंशों में से एक राजवंश था 'बोरबोन्स' (Bourbons)। वह संस्कृत-शब्द 'वीरभानु' का अपभ्रंश था जिसका अर्थ होता है 'सूर्य-समान देदीप्यमान वीरता का साकार रूप'।

फ्रांस में 'सोरबोन' (Sorbonne) विश्वविद्यालय संस्कृत-शब्द 'सुर-भानु' है जिसका अर्थ है (ज्ञान के) 'देवताओं का सूर्य या देवता-समान सूर्य'। ज्ञान के केन्द्र का उक्त नाम संस्कृत वैदिक परम्परा में उपयुक्त, संगत समझा जाता है क्योंकि ऐसा केन्द्र ही अज्ञानता के अन्धकार को दूर करता है।

संस्कृत-भाषा में 'सूर्य' के अर्थ-द्योतक पर्यायवाची सैकड़ों शब्दों में से कुछ नाम हैं भानु, सूर्य, आदित्य, मरीचि, खग, रवि, भास्कर, दिनकर, आदि।

ईरान और नेपाल में राजाओं द्वारा 'शाह' की उपाधि धारण करने का कारण संस्कृत-शब्द 'शाहतये' अर्थात् 'चमकता है, आलोकित होता है' से स्पष्ट हो जाता है। एक महाराजा अपनी शक्ति, अपने संगी-साथियों, अपने परिधानों और शरीर पर धारण किए गए रत्नों, स्वर्णाभूषणों आदि से अलग ही निराली शान में दर्शनीय होता है। ऐसी सभी साज-सजावटों से महाराजा, राजा चमकता है। अतः उसे मानवार्क अर्थात् मोनार्क की उपाधि से अलंकृत किया जाता है—वह मानवों के मध्य सूर्य माना, समझा जाता है।

हिन्दुओं में बहुत सारे परिवारों में कुल-नाम भी 'शाह' प्रचलित है।

सम्राट् के द्योतक संस्कृत-नामों में से कुछ अन्य हैं महाराजा, राजा, राया। ये सभी नाम पश्चिम में भी प्रचलन में थे।

अंगरेज़ी विशेषण रीगल (अर्थात् राजल) और 'रॉयल' (अर्थात् रायल) संस्कृत के पर्यायवाची शब्दों 'राजा' और 'राया' से ही क्रमशः व्युत्पन्न शब्द हैं।

अंगरेज़ी 'किंग' (King) शब्द प्राचीन अंगरेज़ी भाषा में 'सिंग' (Cing, अक्षर 'सी' से) लिखा जाता है। परिणामतः इसका पूर्व-उच्चारण 'सिंह' अर्थात् 'सिंघ' था। इसका कारण यह था कि वैदिक संस्कृति में अपने राजा से अपेक्षा की जाती थी कि वह सिंह के समान वीर, बहादुर होगा। इसलिए सभी योद्धाओं और विशेषकर शासकों के नामों के साथ 'सिंह' अर्थात् 'सिंघ' शब्द जुड़ा होता था। ऐसे नाम जगतसिंह, मानसिंह, उदयसिंह, आदि थे। चूँकि 'सिंह' शब्द सभी शासकों के नामों के साथ जुड़नेवाला सामान्य प्रत्यय था, इसलिए वह सार्वभौम सत्ता के सम्राट्, राजा, महाराजा का द्योतक होकर अंगरेज़ी भाषा में सामान्य संज्ञा बन गया। उक्त शब्द सिंघ अर्थात् सिंह ही आगे चलकर 'किंग' के रूप में बोला जाने लगा।

अतः शब्द 'नेपोलियन' (Napolean) जिसका अंतिम भाग 'लॉयन' (सिंह) प्रत्यय में है, वैदिक परम्परा का है। फ्रैंच भाषा के विद्यार्थियों को पता करने का यत्न करना चाहिए कि इस शब्द के पूर्व-भाग 'नेपो' का अर्थ क्या है?

एक अधिपति, सम्राट्, राजा के लिए निर्धारित वैदिक आदर्श था कि उसका राजप्रासाद, राजमहल, 'धवल गृह' होना चाहिए अर्थात् एक सफेद घर जो एक सरल, सीधा, दोष-रहित, आडम्बर-रहित, निर्दोष-प्रशासन प्रदान करने के अपने पावन कर्त्तव्यपालन के लिए राजा को नियमित, निरन्तर, स्थायी रूप से स्मरण दिलाता रहे, यह उसके लिए मनोवैज्ञानिक अनुस्मारक का काम करता रहे। यही वह परम्परा है जो लंदन-स्थित शाही-सचिवालय को 'व्हाइट हाल' (White Hall) और संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति के आवास-व-सचिवालय को 'व्हाइट हाउस' (White House) पुकारने से प्रतिबिम्बित होती है। दिल्ली और आगरा-स्थित लाल किलों में, जो प्राचीन हिन्दू सम्राटों ने बनवाए थे, शाही निवास-गृह पूरे सफ़ेद संगमरमर में ही हैं।

(चाँदी या स्वर्ण की) गदा जो आधुनिक राजसी अधिकार का प्रतीक है, गदा-चिह्न के रूप में उस गदा का स्मरण दिलाती है जिसे रामायण में वर्णन के अनुसार भगवान् राम के आगे हनुमान जी लेकर चलते थे।

वैदिक परम्परा में राजा को ईश्वर अर्थात् 'महान् प्रभु, स्वामी, भगवान्' भी कहते हैं। यही वह शब्द है जो अपभ्रंश रूप धारण कर जर्मनी में कैसर, रोम में सीज़र, और रूस में कज़ार की वर्तनी में आ गया। मिश्र देश में यह 'अल अज़र' के रूप में विद्यमान है।

'ईश्वर' का संक्षिप्त रूप ईश है, जबकि देवता का निवास 'अलयम्' अर्थात् एक 'मन्दिर' है। अतः इस्लाम शब्द संस्कृत 'ईशालयम्' अर्थात् 'ईश्वर का निवास-स्थान' है। वह घर मक्का में काबा ही है।

'सौवरेन' (Sovereign) शब्द में 'जी' की ध्वनि शून्य है। किन्तु यदि इसे ('जनरल' और 'जेनेरेटर' के समान) 'ज' ध्वनि मानकर बोलें तो यह संस्कृत का शब्द 'स्वराजन' दृष्टिगोचर होगा जिसका अर्थ 'स्वयं राजा अर्थात् अपने परमाधिकार में सम्राट्' होगा।

इसका दूसरा पर्याय 'सुज़रेन' (Suzerain) भी संस्कृत का वही 'स्वराजन' शब्द है। इससे व्युत्पन्न 'सुज़रेनिटी' में संस्कृत का 'इति' प्रत्यय है जिसका अर्थ होता है 'इस प्रकार' अर्थात् 'वो जो है'।

'किंगडम' (Kingdom) शब्द संस्कृत का सिंह-धाम है जो शासक के अपने 'धाम' अर्थात् घर, क्षेत्र, या प्रदेश का द्योतक है।

अंगरेज़ी शब्द 'होम' संस्कृत-शब्द 'धाम' है। अतः शब्द 'मैटरनिटि होम' शब्द संस्कृत का 'मातृनीति-धाम' शब्द है जिसका अर्थ वह स्थान है जहाँ महिला को एक माता के रूप में रहना पड़ता है। इसके मैटरनल (Maternal), मैट्रीमोनियल जैसे विविध रूप भी मूल संस्कृत-शब्द मातर अर्थात् 'मदर' (माँ) से व्युत्पन्न हैं।

फ्रेंच शब्द 'रोई, रेने' संस्कृत-शब्दों राया अर्थात् राजा और 'रजनी' से व्युत्पन्न हैं।

फ्रेंच शब्द 'रीजेन्ट' स्पष्टतः 'राजा' शब्द से व्युत्पन्न, बना है।

'पैरामाउन्ट' संस्कृत का 'परम-अंत' शब्द है जिसका अर्थ 'सर्वश्रेष्ठ' है।

17
बैंकिंग व वाणिज्य से सम्बंधित शब्दावली

महाभारत-युद्ध की संभावित तिथि लगभग 5561 ईसवी पूर्व के आसपास विश्व-व्यापी वैदिक सभ्यता उक्त संघर्ष में प्रयुक्त उच्चकोटि की विनाशक युद्ध-सामग्री के कारण नष्ट-भ्रष्ट हो गई।

इससे पूर्वकाल में और बाद में भी ईसाइयत और इस्लाम के आतंक और अत्याचारों के माध्यम से इन दोनों के फैलाव से पूर्व तक वैदिक मंदिरों और अन्य देवालयों से सभी क्षेत्र सुशोभित थे, भरे पड़े थे।

मुस्लिमों और ईसाइयों के सभी वर्तमान तीर्थस्थल जैसे काबा, शिखर पर गुम्बज (डोम ऑन दि रॉक) और जरुस्लम में अलअक्सा, रोम में वैटिकन, इंग्लैंड में कैन्टरबरी तथा अन्य बहुत सारे स्थान, सभी क्षेत्रों से वैदिक तीर्थयात्रियों को अपनी ओर आकर्षित किया करते थे।

वैदिक तीर्थयात्रियों द्वारा भिन्न-भिन्न देवालयों में पूजा में चढ़ाई गई भेंट, दान-दक्षिणा पृथक्-पृथक् मुद्राओं में होती थी। सहज, स्वाभाविक तौर पर ही यात्रियों की मुद्राओं को विभिन्न देव-स्थानों में बदल देने की व्यवस्था करने की भी आवश्यकता समक्ष आ गई जहाँ वे अपने क्षेत्र से लाई गई मुद्रा को उस क्षेत्र की मुद्रा में परिवर्तित कराना चाहते थे जहाँ-जहाँ वे आगे तीर्थाटन व भ्रमणार्थ जाने के इच्छुक होते थे। ऐसे स्थानों पर मुद्रा बदल देनेवाले वर्ग का उदय हुआ।

ऐसा मुद्राएँ परिवर्तित करनेवाला, लेन-देन करनेवाला, साहूकार नाम से प्रचलित व प्रसिद्ध वर्ग मंदिरों के बाहर या उनके विशाल प्रांगणों के भीतर लकड़ी के बड़े-बड़े फंटों पर बैठा करता था। इन क़ाष्ठ-फलकों को संस्कृत भाषा में मंच कहते हैं।

यही वह संस्कृत शब्द 'मंच' है जो कालान्तर में 'बैंच' और बाद में 'बैंक' उच्चारण किया जाने लगा। 'बैंच ऑफ़ जजेज़' उक्ति भी उसी अभ्यास की ओर संकेत करती है जिसमें न्यायालय की सुनवाई के समय न्यायाधीश इकट्ठे एक

'बैंच' अर्थात् मंच पर बैठते हैं।

कॉमर्स भी एक संस्कृत-शब्द है। मूल संस्कृत-शब्द 'सहमर्ष' है जिसका आधुनिक प्रचलित उच्चारण 'कॉमर्स' है। संस्कृत का 'सह' शब्द 'सह' बोला जाकर भी अंगरेज़ी में 'सी' से प्रारंभ हो लिखा जाने लगा (सी ए एच ए)। समय बीतने के साथ ही, अन्त्य 'ह' ध्वनि पर ज़ोर देना बंद हो गया और उसका उच्चारण भी समाप्त कर दिया गया। शेष संस्कृत-अक्षर 'स' को 'ओ'-कार उच्चारण प्राप्त हो गया और वह 'सो' (सी ओ) लिखा जाने लगा। इसी बीच 'सी' अक्षर को 'क' का वैकल्पिक उच्चारण भी प्राप्त हो गया। इस प्रकार 'सह' को 'को' लिखना और उच्चारण करना शुरू हो गया।

अन्य अक्षर-समूह 'मर्स' समाचारों के आदान-प्रदान और विचारों-दृष्टिकोणों के आदान-प्रदान के लिए 'वार्ता विमर्श' और 'परामर्श', 'विचार विमर्श' आदि शब्दों में प्रायः उपयोग में आता है। फलस्वरूप, शब्द 'कामर्स' संस्कृत भाषा का 'सह-मर्श' शब्द है जिसका निहितार्थ खरीदना और बेचना अर्थात् लेन-देन करना है।

'एन्ट्रेप्रेनियोर' शब्द विशुद्ध संस्कृत का शब्द 'अन्तर्-प्रेरित-नर' है। पहला अर्थ है 'वह व्यक्ति जो आन्तरिक प्रेरणा से आगे बढ़ता है'। पहला शब्द 'अन्तर्' अन्तःकरण अर्थात् अन्दर का द्योतक है। दूसरा शब्द-खंड 'प्रेरित', 'उकसाया गया' का द्योतक है। तीसरा खंड 'नियोर' आदमी या व्यक्ति का अर्थ-द्योतक है। अतः 'एन्ट्रेप्रेनियोर' शब्द का अर्थ एक ऐसा व्यक्ति है जो आंतरिक प्रेरणावश व्यापारिक साहसिक कार्य करना चाहता है।

'मैरिनर' शब्द संस्कृत का 'वारिनर' शब्द है जहाँ 'वारि' का अर्थ पानी, जल है और 'नर' का अर्थ है मानव अर्थात् व्यक्ति। अतः मैरिनर अर्थात् वारिनर का निहितार्थ एक नाविक है।

इस पृष्ठभूमि के साथ, विद्वान् लोग मानव-कार्यकलाप के इस कार्यक्षेत्र से सम्बन्धित अन्य शब्दों के संस्कृत-मूल को खोजने का प्रयास आगे भी करें।

18
समय-सम्बन्धी शब्दावली

ईसाइयत-पूर्व के युगों में वैदिक संस्कृति और संस्कृत-भाषा का विश्व-भर में सर्वत्र प्रचलन समय-गणना की शब्दावली में भी प्रतिबिम्बित होता है।

संस्कृत-भाषा में अनेक शब्दों के पर्यायों का बहुत विशाल भंडार है। इसमें 'वक्त' के लिए 'काल' और 'समय' दो शब्द उन्हीं में से हैं।

'समय' शब्द अंगरेज़ी भाषा में 'टमय' अर्थात् 'टाइम' (Time) के रूप में विद्यमान है।

इसका पर्यायवाची 'काल' शब्द 'कैलेण्डर' (Calender) शब्द में से खोजा जा सकता है। इसके अंतिम खण्ड 'एन्डर' का स्वरूप भी संस्कृत-शब्द 'अन्तर' में दिखाई दे रहा है जिसका अर्थ दिन, सप्ताह, मास और वर्ष जैसे समय-विभाजन से है। अतः कैलेण्डर संस्कृत-शब्द 'कालान्तर' है जिसका निहितार्थ एक ऐसा मानचित्र है जिसमें समय की प्रगति को अंकित, अभिलिखित किया गया है।

सप्ताह के दिनों यथा संडे, मंडे आदि में प्रयुक्त 'डे' शब्द संस्कृत का 'दिवस' अर्थात् 'दिन' शब्द है।

'मंडे' तथ्यतः वैदिक संस्कृत-परम्परा के अनुसार सोम या चन्द्रवार (मून-डे) है। सप्ताह के सभी दिन चिर-अविस्मरणीय समय में वैदिक संस्कृति द्वारा निर्धारित व्यवस्था-क्रम के अनुसार ही चल रहे हैं। 'वैडनसडे' का नाम 'बुध' (अर्थात् मरकरी, पारद ग्रह) के नाम पर रखा गया है क्योंकि 'बुध' का उच्चारण 'वुध' व बाद में यूरोप में 'वेड' होने लगा। 'सैटर-डे' नाम मलिन, पाप, दुष्ट ग्रह सैटर्न अर्थात् शैतान अर्थात् शनिवार के नाम पर है। सन्-डे (संडे) सूर्य से व्युत्पन्न है।

'मंथ' (Month) शब्द संस्कृत के शब्द 'मास' का भ्रष्ट उच्चारण है जैसे संस्कृत-शब्द 'हस्त' अंगरेज़ी में 'हैन्ड' और 'मन' शब्द 'माइन्ड' बोला, लिखा

जाता है।

बारह मास की अवधि के लिए अंगरेज़ी शब्द (वाई-ई-ए-आर-एस) यिअर्स है जबकि इसका संस्कृत-पर्याय 'वर्ष' है। हम अंगरेज़ी 'वाई' अक्षर की दुम—निचला भाग—हटा दें और इसे वर्ष (वीईएआरएस Vears) लिखें तो तुरन्त स्पष्ट दिखाई दे जाएगा कि अंगरेज़ी का 'यिअर्स' शब्द संस्कृत का 'वर्ष' शब्द ही बन गया है। शब्द 'यिअर' एकवचन में स्पष्टतः 'वर्ष' का विकृत भाग ही है।

समय अर्थात् काल की लम्बी-लम्बी अवधियाँ संस्कृत में 'युग' (Yuga) कहलाती हैं। अंगरेज़ी भाषा का प्रारंभिक अक्षर 'वाई' इस 'वाई यू जी ए' (युग) शब्द से हटा दें जिससे स्पष्ट अनुभव हो जाए कि शेष 'यूजीए' (युग) शब्द अंगरेज़ी शब्द 'एज' है जैसे आइस-एज (हिम-युग), प्लीइस्टोसीन-एज (अभिनूतन-युग) में।

नए चन्द्रमा से प्रारंभ कर पूर्ण चन्द्र (पूर्णिमा) तक चन्द्र-पक्ष (शुक्ल-पक्ष, पखवाड़े) के विभिन्न दिनों की द्योतक 'तिथि' संस्कृत-शब्दावली से ही अंगरेज़ी की 'डिथि' अर्थात् 'डाटी' अर्थात् 'डेट' हमें प्राप्त हुई है क्योंकि 'टी' (त/ट) और 'डी' (ड/द) अक्षर परस्पर परिवर्तनीय हैं जैसा हम 'डैन्ट' (दन्त) और 'टूथ' (दाँतसूचक शब्द) में देख सकते हैं।

'मिनट' (Minute) संस्कृत का 'मित' शब्द है जो (समय के) अत्यन्त छोटे माप का सूचक है।

'सैकन्ड' (Second) शब्द 'पल' के द्योतक संस्कृत-शब्द 'क्षण' का उलट-पुलट उच्चारण है।

'हवर' (Hour, अवर उच्चारण करते हैं) संस्कृत का 'होरा' शब्द है। 'हवर' (अवर) संस्कृत के 'होरा' शब्द का अशुद्ध, अपभ्रंश उच्चारण है।

'मंथ' संस्कृत भाषा का 'मास' शब्द है क्योंकि 'मासिक' शब्द को अंगरेज़ी भाषा-वर्तनी में 'मैनसिस' (Menses) लिखते हैं।

19

गणना से सम्बन्धित शब्दावली

संस्कृत-शब्द 'उन' से अंगरेज़ी शब्द 'वन' (एक) बना है।

संस्कृत-भाषा में 'उन्नीस' संख्या के लिए 'उन-विंशति' शब्द है अर्थात् 'बीस से एक कम'। इसी प्रकार इस क्रम में 'उन' शब्द 'एक कम' का द्योतक करने हेतु प्रयोग में लाया जाता है। इस प्रकार, संस्कृत में 29 का उल्लेख 30 से एक कम, और 39 का उल्लेख 40 से एक कम के रूप में किया जाता है।

अंगरेज़ी शब्द 'टू' (Two, टी डब्ल्यू ओ) संस्कृत का 'द्वौ' है। चूँकि अंगरेज़ी और संस्कृत, दोनों भाषाओं में 'टी' (ट/त) और 'डी' (ड/द) परस्पर परिवर्तनीय हैं, इसलिए संस्कृत-भाषा के 'द्वौ' की अंगरेज़ी वर्तनी 'टू' (टी डब्ल्यू ओ) है।

अंगरेज़ी शब्द 'थ्री' (Three) संस्कृत का 'त्रि' (तृ) शब्द है। तथ्य रूप में तो इसने 'ट्रिपॉड' (Tripod, संस्कृत में त्रिपाद), 'ट्रिडैन्ट' (Trident), ट्रि-एन्गल (Triangle), ट्रिनिटी (Trinity), आदि अंगरेज़ी शब्दों में अपना शुद्ध संस्कृत उच्चारण ज्यों का त्यों बनाए रखा है।

'चार' के लिए संस्कृत के 'चत्वार' शब्द से ही 'क्वाट्र' (Quatr) शब्द बना है जैसे क्वाड्रिलेटरल (Quadrilateral), क्वैट्राइन (Quatrine), आदि।

'पाँच' का द्योतक संस्कृत 'पंच' शब्द अंगरेज़ी भाषा के अनेक शब्दों में विशुद्ध संस्कृत उच्चारण बनाए हुए है जैसे 'बॉक्सिग' (मुक्केबाजी) में मुष्टि-प्रहार का द्योतक 'पंच' शब्द निहितार्थ में बताता है कि इसमें पाँचों उँगलियों को इकट्ठा कर, भींचकर प्रहार किया जाता है। पाँचों पेयों का 'कॉकटेल' मिश्रण भी 'पंच' के नाम से जाना जाता है।

'पेन्टागोन' (Pentagon) अंगरेज़ी-शब्द संस्कृत का 'पंचकोण' शब्द है जो 'पाँच कोने वाले भवन' या आकृति का द्योतक है।

'षड्' संस्कृत-शब्द संख्या 6 के लिए है। चूँकि 'एस' (स, ष) और 'एच'

(ह) एक-दूसरे का स्थान ग्रहण कर लेते हैं, इसलिए संस्कृत का 'षट्कोण' अर्थात् छः कोनों वाली आकृति अंगरेज़ी में 'हक्सागोन' (Hexagon) कहलाती है।

संख्या सात के लिए संस्कृत का 'सप्त' शब्द अंगरेज़ी में व्यापक रूप में प्रयोग में आता है जैसे सैप्टेम्बर (September) और सैप्टुआजेनेरियन (Septuagenarian) शब्दों में।

संस्कृत-शब्द 'अष्ट' से ही अंगरेज़ी का 'एट' (Eight) अर्थात् आठ शब्द बन गया है। 'ऑक्टागन' संस्कृत '**अष्टकोण**' है अर्थात् आठकोण वाली आकृति या योजना।

संस्कृत का 'नव' शब्द नौ संख्या का अर्थद्योतक बनकर अंगरेज़ी में 'नाइन' (Nine) शब्द है जो नॉन-एजीनेरियन (Non-agenarian) आदि शब्दों में प्रयुक्त हुआ है।

संस्कृत भाषा का 'दश' (दस) शब्द यद्यपि अपने उच्चारण-सम्बन्धी मूल रूप में डेसिन्नियल (Decennial), डेसेम्बर (December), डेसिमल (Decimal) आदि शब्दों में विद्यमान है, तथापि संख्या के लिए इसका उच्चारण 'टैन' (दस) किया जाता है क्योंकि अंगरेज़ी और संस्कृत-भाषा में 'डी' (ड/द) और 'टी' (ट/त) परस्पर स्थान बदल सकते हैं।

'मिल्लेनियम' (Millenium) शब्द संस्कृत 'मूल-लयनम्' है जिसका अर्थ मूल वर्ग 1000x1000 = 1000000 है। इसके पश्चात् अन्य संस्कृत-संख्याएँ आती हैं जैसा बिल्लियन (Billion), ट्रिल्लियन (Trillion) आदि संख्याओं के उदाहरणों से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

20
संगीत-सम्बन्धी शब्दावली

संस्कृत-भाषा में किसी पद्य या कविता को 'गीत' कहते हैं और उपसर्ग 'सं' का अर्थ 'साथ' है। अतः 'संगीत' संस्कृत-शब्द गाने का अर्थद्योतक है जिसका निहितार्थ किसी गीत या पद्य के साथ संगीत-उपकरणों, वाद्य-यन्त्रों के माध्यम से एक धुन, लय का होना, बजना है।

अब हम अंगरेज़ी भाषा के सिंग (Sing), सिंगर (Singer), सिंगिंग (Singing) व साँग (Song) शब्दों का ध्यान करें। ये सभी संस्कृत-शब्द 'संगीत' से ही स्पष्टतः व्युत्पन्न हैं।

वीणा मूल वैदिक संगीत से सम्बन्धित तार-युक्त उपकरण है। देवी सरस्वती प्रायः वीणा-वादन करती दिखाई जाती है। उक्त उपकरण, वाद्य-यन्त्र को कुछ भारतीय भाषाओं में 'बीना' नाम से उच्चारण किया जाने लगा। अंगरेज़ी भाषा में इसे 'बिआनो' व बाद में 'पिआनो' (Piano) बोला गया। उच्चारण में इस परिवर्तन के साथ ही इसके रूप-आकार में भी क्रमिक परिवर्तन होता गया।

'हारमोनियम' (Harmonium) शब्द लें। इसका अन्त्य 'यम/अम' इसके संस्कृत-मूलक होने का द्योतक है। वैदिक संगीत के मूलस्वर सात हैं अर्थात् सा-रे-गा-मा-पा-धा-नी। इन स्वरों, ध्वनियों को उत्पन्न करनेवाला, वाद्य-यन्त्र, उपकरण संस्कृत-भाषा में 'सारेगामापाधानीयम्' ही कहा जाएगा। किन्तु पर्याप्त लम्बा होने के कारण 'गा-पा-धा' स्वरों को छोड़ दिया गया था और 'वाद्य-उपकरण' 'सारमनीयम्' कहलाने लगा। बाद में 'एस' (स) को 'एच' (ह) उच्चारण किया गया (जैसे सेमी-स्फीयर को हेमी-स्फीयर कहा गया) और वह उपकरण, जिसे हम आज जैसा जानते हैं, हारमोनियम कहा जाता है, जो एक संस्कृत-शब्द है।

पूर्वोक्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि 'हार्मोनी' (Harmony) शब्द तथ्य-रूप में 'सारेमोनी' संस्कृत-शब्द हैं जो आरोही क्रम में सा-रे-मा-नी चार

संगीत-स्वरों की संगीत-बद्ध लय का द्योतक है।

'वायलिन' (Violin) संस्कृत-शब्द 'जीव-लीन' है अर्थात् वह उपकरण जिसके बजाए जाने पर व्यक्ति का 'जीव' अर्थात् सुध-बुध उधर झुक जाती है या वह उसमें निमग्न हो जाता है।

'सितार' संस्कृत यौगिक शब्द 'सप्त-तार' है अर्थात् वह उपकरण जिसमें सात कसे हुए तार लगे रहते हैं। 'तार' संस्कृत का शब्द है।

'गिटार' (Guitar) संस्कृत का यौगिक शब्द 'गीत-तार' है अर्थात् एक गीत—पद्य, गान या कविता के साथ बजनेवाले कसे हुए तार।

'ड्रम' (Drum) संस्कृत शब्द 'डमरू' का उलट-पुलट उच्चारण है।

एक कवि या संगीतकार, रचयिता के लिए संस्कृत का शब्द 'भाट' है। उक्त यही शब्द आजकल अंगरेज़ी भाषा में 'पोइट' (Poet) उच्चारण किया जाता है क्योंकि 'बी' (ब) और 'पी' (प) परस्पर स्थान-विपर्यय कर लेते हैं। ऐसे भाट या कवि-श्रेष्ठगण वैदिक सम्राटों के दरबारों में नियुक्त, विद्यमान रहते थे।

'बार्ड' (Bard) का अर्थ कवि भी है। दिल्ली के अंतिम हिन्दू सम्राट् पृथ्वीराज के दरबार में राजकवि का नाम 'चन्द बरदाई' था। उक्त बरदाई शब्द (संस्कृत में वरदाई) अंगरेज़ी शब्द 'बार्ड' का संस्कृत-मूल द्योतन कर देता है।

अंगरेज़ी-पद्य का विश्लेषण करते समय प्रत्येक पंक्ति को 'फुट' कहते हैं जो समानक संस्कृत-शब्द 'चरण' का यथार्थ अंगरेज़ी अनुवाद, रूपान्तरण है।

आठ पंक्तियों का समूह या बन्द संस्कृत-शब्द 'अष्ट' से व्युत्पन्न होने के कारण ऑक्टेव (अष्टेव) कहलाता है।

आठ पृष्ठ बनाने के लिए बड़े आकार का कागज़ जब तीन तहों में मोड़ा जाता है तब उस आकार के कागज़ को 'ऑक्टेवो' (अष्टेवो) आकारवाला कहा जाता है।

अंगरेज़ी भाषा में चौदह पंक्तियों की कविता को 'सॉनेट' (Sonnet) संज्ञा दी गई है। वह संस्कृत-शब्द 'सुनीत' है। 'बैलाड' (Ballad) कविता का वह रूप है जो महान् पराक्रम, शौर्य या राष्ट्र-भक्ति के महान् कार्यों का वर्णन करके साहस की प्रेरणा करता है। वह संस्कृत-शब्द (बल-दा) है जो कविता का वह प्रकार है जिसमें लय और शैली द्वारा श्रोताओं में 'सामर्थ्य और भावना' का संचार किया जाता है।

21
वाहन-सम्बन्धी शब्दावली

संस्कृत-भाषा में 'वह' शब्द वहन करने, सहने, ले-जाने अर्थात् ढोने के लिए प्रयोग में आता है। प्रत्यय 'किल' का अर्थ है सत्यतः, वास्तव में, सचमुच····।' 'वह किल' शब्द का अन्वय इस प्रकार है।

परिणामस्वरूप 'वहकिल'(vehicle)शब्द संस्कृत-भाषा का है जिसका अर्थ है वह जो सचमुच (व्यक्तियों या वस्तुओं को) यहाँ से वहाँ ले-जाता या ढोता है।

जर्मन कार 'फोक्स वैगन' (Folks Wagon) भी संस्कृत-शब्द है जहाँ 'वैगन' शब्द 'वाहन' का अर्थ-द्योतक होकर संस्कृत-शब्द 'वाहन' का अपभ्रंश, अशुद्ध उच्चारण है। अन्य शब्द 'फोक' संस्कृत-भाषा का 'लोक' शब्द है जिसका अर्थ 'जन' होता है। निष्कर्ष यह है कि 'फोक्स वैगन' का शाब्दिक अर्थ है 'लोक वाहक' अर्थात् 'जन-जन को ले-जानेवाला'।

'स्कूटर' (Scooter) शब्द भी पूरी तरह संस्कृत-भाषा का है। इस बात को समझने के लिए पाठक को स्मरण रखना चाहिए कि 'सी' अंगरेज़ी अक्षर का वर्ण-उच्चारण 'सी' अर्थात् 'एस' (स) है। इसके फलस्वरूप 'स्कूटर' शब्द की वर्तनी हमें 'स्सूटर' लिखनी होगी। तब यह संस्कृत-शब्द (सूतर) समझ में आ जाएगा जिसमें उसका अर्थ होगा वह जो सुविधापूर्वक यहाँ से वहाँ ले-जाने या ढोने में सहायक है क्योंकि 'सु' का अर्थ 'सरल', 'सुविधापूर्वक' है जबकि 'तर' का अर्थ 'तरना' या 'पार' करना/कराना है।

'कार' (Car) भी संस्कृत का 'सर' शब्द समझा जा सकता है क्योंकि अंगरेज़ी अक्षर 'सी' का वर्णोच्चारण 'एस' अर्थात् 'स' है। संस्कृत में 'सर' का अर्थ 'गति' होता है। इसी कारण एक जल-प्रपात या नदी-धारा को 'सरिता' कहा जाता है।

'आटोमोबाइल' (Automobile) शब्द पूर्णतया संस्कृत है क्योंकि 'आटमो बल' का निहितार्थ एक ऐसा वाहन है जो अपनी ऊर्जा या शक्ति, ताक़त

से गतिशील रहता है—अपने ही 'आत्म-बल' से गति प्राप्त करता है।

'करेन्ट' (Current) शब्द, चाहे विद्युत्-धारा के संदर्भ में हो या वर्तमान कार्यों के, संस्कृत-शब्द 'सरेन्ट' है (क्योंकि 'सी' अक्षर का वर्णोच्चारण 'एस' अर्थात् 'स' है) जिसका अर्थ है वह जो गति में गतिमान रहता है, गतिशील भी रखता है।

यदि अंगरेज़ी 'साइकल' शब्द में 'वाई' अक्षर के स्थान पर 'एच' अक्षर (ह) लिखा जाए तो अंगरेज़ी शब्द बनेगा 'चकल' अर्थात् 'चक्र' जो चक्के के लिए संस्कृत-शब्द है। इसी के फलस्वरूप, बाइ-सिकल 'द्वि-चक्र' अर्थात् दो पहियों, चक्रों, चक्कोंवाला वाहन है। क्योंकि बाइ (बि) शब्द संस्कृत-शब्द 'द्वि' का अपभ्रंश है। जीवन की साइकल तथ्य-रूप में जीवन का चक्र (अर्थात् एक पहिया या चक्का, मण्डलक या चक्रिका) है।

22

स्थान-वर्णन सम्बन्धी शब्दावली

चूँकि वैदिक संस्कृति और संस्कृत-भाषा का मूलोद्गम मानवता की प्रथम पीढ़ी के अभ्युदय के साथ ही हुआ था, इसलिए यह सहज स्वाभाविक ही है कि भिन्न-भिन्न समुदायों, क्षेत्रों, पर्वतों, सागरों, नदियों और नगर-उपनगरों के नाम संस्कृत-भाषा के नाम ही हैं।

फ़ीनीसियन (Phoenicians) लोगों का नाम प्राचीन फणी अर्थात् पणि-समुदाय के नाम से गृहीत है जिसका नामोल्लेख वैदिक साहित्य में है।

बेबिलोनियन (Babylonians) बाहुबलि साम्राज्य के निवासी लोग थे।

बाहुबलि एक प्राचीन वैदिक सम्राट् था।

सुमेरु (Sumeru) पर्वत का अनेक बार, बारम्बार उल्लेख वैदिक दन्तकथाओं में होता है। सुमेरियन लोग इस क्षेत्र के निवासी थे। उपसर्ग 'सु' 'अच्छा' का द्योतक है।

'स्थान' अर्थात् 'स्तान' अन्त्य पदवाले सभी क्षेत्र संस्कृत-मूलक हैं तथा हिन्दुस्तान, अफ़ग़ानिस्तान, ब्लूचिस्तान, तुर्कस्तान (तुर्की), अर्वस्थान (अरेबिया), कज़ाकस्तान, कुर्दिस्तान, उजबेकिस्तान, किरगिज़तान आदि।

'विया' (via) उर्फ 'इया' (ia) अन्त्य-पद भी संस्कृत-सूचक है जैसे रशिया (ऋषियों का देश), साइबेरिया (शिविरों अर्थात् अस्थायी छोलदारियों का देश), स्लावों का स्लोवेकिया और चेकोस्लोवाकिया।

'रान' शब्द से अन्त होनेवाले नगर-उपनगर जैसे तेहरान और दहरान आदि उक्त स्थान पर पूर्वकाल में मौजूद वनों, जंगलों (अरण्यों) के द्योतक हैं।

सलोनिका (Salonica), वेरोनिका (Veronica) और टेसालानिका (Thessalanica) जैसे नामों में 'अणिका' अन्त्य-पद नगरों के संस्कृत-मूल का सूचक है। संस्कृत भाषा में 'अणिक' शब्द का अर्थ सेना, फ़ौज है। उक्त शब्द के साथ समाप्त नामवाले सभी स्थान लगभग 5561 ईसवी पूर्व तक कौरवों और

पाण्डवों की सैनिक छावनियाँ थीं।

'तेल' उपसर्ग, जैसे तेल अवीव, तेल अमरना और इटली में, सागर-तलीय नगर-उपनगर या क्षेत्र का द्योतक है क्योंकि संस्कृत में 'तल' शब्द समुद्र-तल या धरातल का संकेतक है।

विश्व-भर में काफी संख्या में नगरों के नाम राम के नाम पर रखे गए हैं, जैसे इंग्लैंड में राम्सगेट (Ramsgate), जोर्डन नदी के पश्चिम तट पर रामल्लाह (अर्थात् भगवान् ईश्वर राम Ramallah), इटली में रोम (Rome), जर्मनी में राम्स्टीन (Ramstein) और बेल्जियम में राम का मंदिर (Rame's Temple)। जोर्डन (Jordon) संस्कृत-नाम जनार्दन अर्थात् नागरिक कार्यों के नियंत्रक देवता का अपभ्रंश रूप है।

एजिप्ट (AEgypt) अजपति अर्थात् राम का नाम है। उनका पुत्र कुश था। वह नाम अफ्रीका में बचा हुआ है। इजिप्ट के प्राचीन शासक रामेशिस I, II, III के नाम राम-ईश अर्थात् राम, ईश रखे थे।

विभिन्न क्षेत्रों, नगरों, नदियों, सागरों और पर्वतों के संस्कृत-नामों की खोज करने में इच्छुक भूगोलशास्त्रियों के लिए बहुत विस्तृत क्षेत्र सम्मुख है, उपलब्ध है। प्राचीन भू-चित्रावली पूर्णरूपेण संस्कृत की ही थी।

चूँकि हिमाच्छादित हिमालय एक सुविस्तृत विशाल पर्वत-शृंखला है इसलिए यूरोप में उससे छोटी शृंखला को अल्प (हिमालय) अर्थात् ऐल्प्स अर्थात् 'छोटी वाली' शृंखला नाम से पुकारा जाने लगा।

'मेडिटेरेनियन' (Mediterranean) संस्कृत का यौगिक शब्द 'मध्यधरणीयम्' है जिसका अर्थ वह सागर है जो विशाल दो भूखण्डों (यूरोप और अफ्रीका) के मध्य, बीच में ठुँसा, सिकुड़ा, भिंचा हुआ है।

'एटलान्टिक' (Atlantic) संस्कृत का यौगिक शब्द 'अ-तल-अन्तिका' है जो इस तथ्य का द्योतक है कि प्राचीन सर्वेक्षणों में 'एटलान्टिक' अवश्य ही बहुत अधिक गहरा (अथाह, अतल) पाया गया होगा।

अमरीकी महाद्वीपों के नाम अमर-ईश (Amar-isa) अर्थात् अमर-ईका (Amer-ica, श, स' के स्थान पर अंगरेज़ी वर्णमाला का 'सी' लिखने से उच्चारण भी 'के' जैसा 'का' करने लगे) अर्थात् 'अमर्त्य देवत्व' है।

'ब्यूनोस एइरेस' (Buenos Aires) भुवनेश्वर शब्द है अर्थात् भवन, संसार, विश्व का स्वामी ईश है। भारत के उड़ीसा प्रान्त (प्रदेश) की राजधानी

भुवनेश्वर ही है।

'उरुग्वे' (Uruguay) भगवान् विष्णु के वैदिक देवता उरुग्वः का नाम है।

'ग्वाटेमाला' (Guatemala) गौतमालय है जो एक प्राचीन ऋषि गौतम के नाम पर रखा गया है। यह गौतम ऋषि 'गौतम बुद्ध' होना ज़रूरी नहीं है।

'पेलेस्टाइन' (Palestine, फ़िलस्तीन) वह क्षेत्र है जहाँ सुविख्यात ऋषि पुलस्तिन शैक्षिक और सामाजिक संस्थाओं का पर्यवेक्षण, प्रबन्ध आदि किया करते थे।

'रशिया' (Russia, रूस) ऋषियों अर्थात् वैदिक ऋषियों का क्षेत्र है। वैदिक ऋषियों का प्रजनक कश्यप ऋषि उपनाम कैश्यप था। कैश्पियन (कश्यप) सागर का नामकरण इसी ऋषि के नाम पर है।

'साइबेरिया' तूफानी, आँधी-पानीवाले मौसम का प्रदेश होने के कारण वहाँ पर लोग अस्थायी आवासों अर्थात् शिविरों में रहते हैं। अतः 'साइबेरिया' (Siberia) संस्कृत का नाम है जो उस प्रदेश का द्योतक है जो 'शिबिरों' अर्थात् शिविरों का क्षेत्र है। इसकी राजधानी नोवोसिबिर्स्क (Novosibirsk) नए शिबिर का अर्थ-द्योतक संस्कृत का नाम 'नव-शिबिर' है।

वैदिक साहित्य में उल्लेख किए गए दैत्य-वंश का यूरोप और अफ्रीका पर साम्राज्य, प्रभुत्व था। इसलिए जर्मनी के लिए मूल, पैतृक 'डौशलैंड' (Deutschland) नाम संस्कृत-शब्द 'दैत्यस्थान' का उत्तरकालीन उच्चारण है।

जर्मनी के विस्तारवादी नेता हिटलर (1933 से 1945) ने 'सुडेटनलैंड' (Sudetenland) के रूप में चेकोस्लोवाकिया, पोलैंड आदि के समीपस्थ, संयुक्त क्षेत्रों पर भी अपना दावा किया था। उक्त 'सुडेटनलैंड' शब्द भी संस्कृत का 'सु-दैत्य-स्थान' शब्द है जिसका अर्थ 'अच्छा दैत्य क्षेत्र' है।

'डेन्मार्क' (Denmark) नाम दो दैत्य नेताओं दनु और मार्क के नामों पर है। आज प्रचलित यूरोपीय नाम 'मार्क' वही प्राचीन दैत्य का नाम है।

'डच' (Dutch) शब्द भी संस्कृत-शब्द 'दैत्य' का अपभ्रंश है। उनका क्षेत्र 'नेदरलैंड' (Netherland) समुद्रतल से नीचे होने के कारण संस्कृत-नाम 'अन्तर्-स्थान' (अर्थात् सागर से नीचे का क्षेत्र) धारण किए है। यदि 'नेदरलैंड' शब्द के पूर्व 'ए' (अ) अक्षर जोड़ दिया जाए तो यह संस्कृत का शब्द 'अन्तर्-लैंड' अर्थात् अन्तर्स्थान या अधो-क्षेत्र स्पष्ट दिख जाएगा। और आश्चर्य

है कि उनकी राजधानी 'एम्स्टरडम' (Amsterdam) भी 'अधो-लोक' की द्योतक है क्योंकि 'एम्स्टरडम' शब्द भी संस्कृत के शब्द 'अन्तर्धाम' का अशुद्ध उच्चारण, अपभ्रंश है।

'स्वीडन' (Sweden) को स्थानीय रूप में 'स्वर्ग' (Swerge) कहा जाता है जो वैदिक शब्द 'स्वर्ग' है अर्थात् देवताओं का निवास-स्थान।

'नोर्वे' (Norway) की वर्तनी स्थानीय रूप में 'नोर्गे/नोर्जे, होती है जो वैदिक शब्द 'नर्क' (नरक) है अर्थात् 'अन्तर्-विश्व' (आकाश का भाग या विपरीत—पाताल, तथा 'स्वर्ग' का विलोम 'नरक')।

(स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम के निकटवर्ती) उपनगर 'उपसाला' एक संस्कृत-नाम है जो किसी अधीनस्थ पाठशाला का द्योतक है। इसका नाम बताता है कि यह किसी बड़ी बृहत्तर शिक्षा-संस्थापना से, संभवतः राजधानी स्टामहोम में ही, जुड़ी हुई थी, उससे सम्बद्ध थी।

'रोमानिया' (Romania) चित्ताकर्षक, विहार-योग्य क्षेत्र का द्योतक 'रमणीय' शब्द है जो संस्कृत-भाषा का है।

हंगरी (हंगेरी, Hungary) संस्कृत-शब्द 'शृंगेरी' अर्थात् 'सुन्दर दृश्यावली प्रदेश या पर्वतीय-क्षेत्र' का अशुद्ध उच्चारण है, क्योंकि अंगरेज़ी भाषा में 'एस' और 'एच' (स और ह) परस्पर स्थान-विपर्यय कर लेते हैं।

'बुलगारिया' (बलगारिया, Bulgaria) एक संस्कृत यौगिक शब्द है क्योंकि 'बुल' अर्थात् 'बल' उच्चकोटि—गरीयता-प्राप्त सामर्थ्य या शक्ति का द्योतक है।

बलूचिस्तान के बलूचों का भी इसी प्रकार का नाम है क्योंकि 'बल-उच्च-स्थान' उच्च कोटि के पुष्ट व्यक्तियों के क्षेत्र का द्योतक है।

इटली प्राचीन वैदिक रोमका साम्राज्य का भाग था। इसका प्रमाण, अभास इसकी राजधानी रोम के नाम में है।

स्पेन (Spain) प्राचीन मद्र साम्राज्य का भाग था जिसका उल्लेख महाभारत महाकाव्य में किया गया है। इसकी राजधानी मेड्रिड (Madrid, माद्रिद) इसके वैदिक भूतकाल की स्मृति दिलाती है। सम्राट् पाण्डु की पत्नी माद्रि मद्र प्रदेश से सम्बन्धित थी।

फ्रांस में नगरों के सभी नाम संस्कृत-भाषी हैं। इसकी सेल्टिक (Celtic) अर्थात् केल्टिक सभ्यता वैदिक सभ्यता थी। मार्सेलिस (Marseilles) संस्कृत

मारीचालय है अर्थात् वह नगरी जो सूर्य देवता मारीच के मन्दिर के चारों ओर स्थापित की गई थी।

'वरसेलिस' (Verseilles) संस्कृत यौगिक शब्द वर-ईश-आलयस् है जिसका अर्थ महाभगवान् का निवास-स्थान है (जो टिकाना लगाए हुए, लेटे हुए-से भगवान् विष्णु का मंदिर था)।

'केनीस' (Cannes) को यदि 'सनीस' उच्चारण किया जाए तो समझ में आ जाएगा कि शनि अर्थात् सैटर्न के मंदिर के चारों ओर स्थापित की गई नगरी है।

'सेबले' (Sable) संस्कृत-शब्दावली 'शिवालय' अर्थात् शिवमंदिर का गड्ड-मड्ड उच्चारण है। सेबले एक फ्रांसीसी नगर है जो पेरिस के पश्चिम में है।

यूरोपीय उच्चारणों में 'सी' अक्षर को प्रायः भ्रामक तौर पर 'के' (क) और 'एस' (स) के रूप में बोला गया है। अतः यदि 'केसीनो (Casino) शब्द को 'सेकीनो' लिखा और बोला जाए तो यह 'शकुनि' नाम का अपभ्रंश उच्चारण स्पष्टतः प्रतीत होने लगता है। शकुनि ने ही कौरव-शासकों के द्यूत-संस्थापन की सम्पूर्ण व्यवस्था, निरीक्षण आदि का आयोजन किया था, अतः 'सेकीनो' अर्थात् 'केसीनो' नाम 'जुए के केन्द्र' के लिए फ्रेंच शब्द है।

'टौलूस' (Toulouse, तुलुस, टुलुज) का नाम वैदिक देवी तुलजा (भवानी) से लिया गया है। भगवान् शिव की यह देवी अर्धांगिनी ईसाइयत-पूर्व के वैदिक फ्रांस की राष्ट्रीय देवी, पूज्या थी। परिणामस्वरूप, फ्रांस में लगभग प्रत्येक नगर में 'नोट्रा डेम' (अर्थात् हमारी देवी) उपासनालय है, यद्यपि सबसे ऊँचा और विशाल 'नोट्रेडेम' मंदिर पेरिस में 'सिन' नदी के तट पर बना हुआ है। उक्त नाम 'सिन' मूल रूप में सिन्धु शब्द है किन्तु फ्रैंचभाषी लोग अंतिम व्यंजन को बोलते ही नहीं हैं, छोड़ जाते हैं, उसे निर्ध्वनि मान लेते हैं।

उक्त देवी वैदिक मातृ देवी थी जो मरिअम्मा के नाम से विख्यात थी। यही 'माँ मेरी' है जो ईसाइयत की जनश्रुति, विद्या, कथाओं में बाद में जीसस की कुँआरी (?) माता के रूप में प्रविष्ट कर दी गई।

फिर भी अनेक ईसाई महिला-मठों और अन्य ईसाई संस्थापनाओं में उसका ईसाइयत-पूर्व का वैदिक संस्कृत नाम 'मातर देई (Mater Dei) अर्थात् मातृ देवी अर्थात् 'माता देवी' श्रद्धापूर्वक चला आ रहा है।

फ्रांस में 'अगिन कोर्ट' (Agin Court) स्थान अग्निकोट है जो प्राचीन

पवित्र अग्नि-पूजाकेन्द्र के चारों ओर विकसित नगरी का द्योतक है।

'जोन ऑफ आर्क' सूर्य मन्दिर की नगरी से सम्बन्ध रखती थी क्योंकि 'अर्क' संस्कृत-शब्द सूर्य के लिए प्रयुक्त होता है।

लेमन्स (ले-मन) नगरी का नाम विधि-स्रष्टा मनु के नाम पर है।

आइए, हम अब ब्रिटेन और आयरलैंड के सम्बन्ध में विचार करें।

'आयरलैंड' (Ireland) संस्कृत-शब्द 'आर्यस्थान' का अशुद्ध, अपभ्रंश उच्चारण है। 'स्कॉटलैंड' (Scotland) क्षात्र-स्थान अर्थात् वैदिक योद्धा-जाति अर्थात् क्षत्रियों का क्षेत्र था।

इंग्लैंड (England) संस्कृत-शब्द अंगुल-स्थान का अपभ्रंश, अशुद्ध उच्चारण है। अंगुल 'उँगली' के लिए संस्कृत-शब्द है। यदि व्यक्ति यूरोपीय महाद्वीप को एक हथेली की भाँति दृश्य-चित्र में अंकित कर ले, तब ब्रिटेन उँगली-आकार, उँगली-लम्बाई का देश अर्थात् अंगुल-स्थान दीख पड़ता है।

अंगुल वैदिक माप में आड़ा व सीधा मापने का एक प्राचीन मानक भी है। उस दृष्टि से यूरोप के विभिन्न भागों को नापने के लिए वैदिक भूगोल-मापशास्त्री एक इकाई के रूप में इंग्लैंड की लम्बाई का उपयोग किया करते थे।

सैक्सन (Saxon) संस्कृत शब्द सूनुः है अर्थात् शक-कुल के वंशज।

महाभारत-काल के बाद की अवधि में शक एक महत्त्वपूर्ण योद्धा-जाति के रूप में उदय हुए थे जिनका विश्व के लम्बे-चौड़े भागों पर प्रभुत्व था। इसकी एक शाखा को, जिसका अंगुल-क्षेत्र पर प्रभाव रहा, बाद में एंग्लो-सैक्सन नाम से पुकारा जाने लगा।

यूरोपीय महाद्वीप के शेष भाग के पृथक् होने के कारण ब्रिटिश द्वीपों का उपयोग अटलांटिक सागर को पार करके किसी भी दिशा में जानेवाले वैदिक योद्धा-वंशों द्वारा प्रस्थान-केन्द्र के रूप में किया जाता था।

एंग्लो-सैक्सनों के अतिरिक्त वैदिक लोगों की अन्य शाखाएँ रोमनों, नॉरमनों, और वाइकिंगों की थीं। वे सभी वैदिक लोग थे जो महाभारत-युद्ध के बाद इधर-उधर बिखर गए थे। मूलरूप में वे सभी संस्कृत-भाषी थे। बाद में, नियमित संस्कृत-शिक्षा के अभाव में वे सभी अपनी-अपनी टूटी-फूटी संस्कृत-भाषा बोलते रहे। इसी कारणवश आधुनिक अंगरेज़ी भाषा टूटी-फूटी संस्कृत-भाषा की उन सभी विभिन्नताओं का मिश्रण है जो ऊपर उल्लेख किए गए पृथक्-पृथक् समूह बोलते रहे।

उक्त तथ्य का साक्ष्य ब्रिटिश द्वीपों के बहुसंख्यक स्थान-वाचक संस्कृत-नामों में उपलब्ध होता है।

'कोट' में समाप्त होने वाले नाम जैसे चार्लकोट, हैल्थकोट, नॉर्थकोट, किंग्सकोट, भारत में अक्कलकोट, बगलकोट, अमरकोट, राजकोट आदि के समान ही हैं। वहाँ संलग्न 'कोट' प्रत्यय एक नगर के चारों ओर की प्राचीर का द्योतक है। परिणामस्वरूप किसी के परिधान का भाग 'कोट' भी वही संस्कृत-शब्द 'कोट' ही है, चाहे अंगरेज़ी भाषा में इसकी दो भिन्न-भिन्न वर्तनी ही क्यों न हों। इसका कारण यह है कि मानव-शरीर के चारों ओर यह रक्षात्मक दीवार-जैसा लपेटा प्रदान करता है।

ब्रिटेन में किंग्सकोट नगर का नाम भारत में राजकोट का यथार्थ नाम-अनुवाद है। दोनों का एक ही अर्थ है क्योंकि राज अर्थात् राजा एक सम्राट्, 'किंग' है।

भारत में सुप्रसिद्ध प्राचीन विजयनगर शहर का स्थान हम्पीपट्टन ब्रिटेन में भी अपना आधा-भाग सुरक्षित रखे हैं। परिणामतः ब्रिटेन में हम्पटनकोर्ट संस्कृत-शब्द हम्पी-स्थान-कोट का अपभ्रंश उच्चारण है। जैसा ऊपर स्पष्ट कर दिया गया है, अंगरेज़ी 'कोर्ट' शब्द संस्कृत के 'कोट' शब्द का शुद्ध उच्चारण ही है (चाहे अंगरेज़ी वर्तनी कोई भी क्यों न हो)।

अपनी ऐतिहासिक सुप्रसिद्ध घुड़-दौड़ों के लिए प्रख्यात 'एस्कोट' (अस्कोट) नगर तथ्यरूप में 'अश्वकोट' संस्कृत-नाम है जो अपने तेज़-तर्रार जाति के घोड़ों के लिए विख्यात एक नगर का द्योतक है।

वारविकशायर, पेमब्रोकशायर, हैम्पशायर, और देवनशायर में 'शायर' अन्त्य-पद के प्रतिरूप भारत में रामेश्वर, त्र्यम्बकेश्वर, महाबलेश्वर आदि में मिलते हैं। परमात्मा का अर्थ-द्योतक 'ईश्वर' आम तौर पर भगवान् शिव का संकेतक है (अथवा अन्य देवों के लिए भी या सामान्य रूप से पूर्ण/एकाकी देवत्व के लिए भी प्रयुक्त होता है)। इंग्लैंड में यही अंत्य-पद 'शायर' उच्चारण किया जाता है। अतः 'शायर' अंत्य-पदों वाले सभी क्षेत्र अथवा नगर सामान्यतः एक शिवमंदिर के अस्तित्व को प्रमाणित करते हैं जिसके चहुँ ओर उक्त नगर स्थापित हुआ था। 'देवनशायर' शब्द संस्कृत का 'देवनेश्वर' शब्द है जो 'देवताओं के ईश्वर' अर्थात् देवताओं के प्रभु, स्वामी, परमात्मा का प्रतीक, द्योतक है।

अंत्य 'बुरी/बरी' नगर के द्योतक संस्कृत-शब्द 'परी' या 'पुरी' का मृदु-तर

उच्चारण है। इस प्रकार, जबकि ब्रिटेन में ऐन्सबरी, श्रीयूसबरी और वाटरबरी हैं, उसी प्रकार भारत में भी कृष्णपुरी, सुदामापुरी और जलपुरी हैं। तथ्य रूप में तो वाटरबरी संस्कृत-शब्द 'जलपुरी' का यथार्थ अनुवाद है।

बोरो/बोरा शब्द संस्कृत-शब्द 'पुरा' का मृदु-तर अल्प-प्राण उच्चारण है। पुरी अर्थात् बुरी/बरी लघुताप्राप्त रूप है। जिस प्रकार 'सिंहपुर' प्राचीन संस्कृत-शब्द 'सिंगापुर' व बाद में 'सिंगापोर' उच्चारण किया जा रहा है, उसी प्रकार संस्कृत नगर-सूचक अंत्य-पद 'पुरी' से अंगरेज़ी उच्चारण 'पोर' बन गया और फिर 'बोर' अर्थात् 'बोरो/बोरा' बन गया।

इंग्लैंड में एक नगर है जो 'प्रिन्सेज़ रिसबोरो' नाम से जाना जाता है। मैं नहीं जानता कि इस नाम की अंगरेज़ी भाषा में क्या सार्थकता है, किन्तु वैदिक परम्परा में 'राज' शब्द युवराज/राजकुमार का तथा अंगरेज़ी में 'प्रिंस' का समानार्थक है, और 'रिसबोरो' संस्कृत-शब्द रिशीपुर (ऋषिपुर) है। दोनों को मिलाने पर, संस्कृत-शब्दावली 'राजर्षिपुर' बनती है जिसका अर्थ ऋषि-जैसा राजा, सम्राट् है। 'राजर्षि' संस्कृत-परम्परा में अतिलोकप्रिय शब्द है।

'लंदन' शब्द 'लंदनीयम्' नाम का आधुनिक संक्षिप्त रूप है। इसका नपुंसकलिंग अंत्य-पद 'यम्/अम्' वही है जो होना ही चाहिए, क्योंकि संस्कृत में 'नगरम्' (शहर/उपनगर) नपुंसकलिंग शब्द ही है। ऐसे अंत्य-पद वाले नगर भारत में कांचिपुरम्, विजयनगरम्, रामेश्वरम् आदि हैं। इन्हीं के समान लंदन भी लंदनीयम् था।

रूसी साम्यवादी तानाशाह स्टालिन की पुत्री स्वेतलाना है। यह संस्कृत का 'श्वेतानना' अर्थात् स्वेत, गौर-वर्ण मुखाकृति है। इसी प्रकार 'लंदनीयम्' मूलरूप में नन्दनीयम् अर्थात् एक सुखकारी अर्थात् आकर्षक, मनमोहक नगर था।

इंग्लैंड में लंकाशायर, लंकास्टर, और राम्सगेट नामक शब्द रामायणी साहचर्य के संकेतक, द्योतक हैं। राम्सगेट अर्थात् राम के नाम में स्थापित सागर-तटीय-द्वारवाली नगरी संभवतया राम घाट अर्थात् भगवान् राम को समर्पित सागर-तट पर स्नान-स्थान रहा हो।

राम का विरोधी रावण लंका का राजा था। इटली में रावन्ना (RAVENNA, रावेन्ना) रावण के नाम पर ही स्थापित स्थान है। इटली में सबसे बड़ी प्रकाशन-संस्था का नाम मन्दोदरी है, जो रावण की पटरानी, प्रधान साम्राज्ञी थी।

ब्रिटेन में लंकाशायर संस्कृत-शब्द लंकेश्वर है जो लंका-साम्राज्य के मुख्य देवता भगवान् शिव और/या लंका के स्वामी स्वयं रावण, दोनों के लिए ही प्रयुक्त हो सकता है। भारत में इसी का प्रतिरूप नगर रामेश्वर है।

लंकास्टर संस्कृत-शब्द 'लंकास्त्र' अर्थात् 'लंका के अस्त्र (प्रक्षेपणास्त्र)' का अपभ्रंश, अशुद्ध उच्चारण है।

'ब्रिज' संस्कृत-शब्द 'व्रज' है जो एक स्थान से दूसरे स्थान के लिए प्रस्थान करने का द्योतक है। चूँकि एक 'ब्रिज' (पुल) अलग-थलग रह गए लोगों को एक जलधारा या नदी-प्रवाह के दूसरी ओर पहुँचने में सक्षम बना देता है, इसीलिए इस सुविधा-तंत्र का नाम संस्कृत-शब्द 'व्रज' ही रखा हुआ है जो अंगरेज़ी में अशुद्ध उच्चारण द्वारा 'ब्रिज' बोला जाता है।

'कैम्ब्रिज' नगर का नाम भी संस्कृत-शब्द पर रखा गया है। संस्कृत का शब्द 'संव्रज' है जो 'टेम्स' नदी को बहुल जनसंख्या द्वारा किसी स्थान से पार करने के स्थान के रूप का द्योतक है।

इसी प्रकार 'ऑक्सफोर्ड' तथा 'कैम्ब्रिज' नाम के दो प्रसिद्ध विश्वविद्यालय आंग्ल-द्वीपों में हैं। वे भिन्न नाम-से लगते हैं किन्तु दोनों का अर्थ लगभग एक समान ही है। ऑक्सफोर्ड यानि वह स्थान जहाँ बैल (ऑक्स) नदी पार कर सकता है। 'ऑक्स' यह संस्कृत के 'उक्षस्' शब्द का उच्चारण है। कैम्ब्रिज का उच्चारण 'केम्' करने के बजाय मूल संस्कृत 'सं' (यानि सारे एक साथ) व्रज यानी नदी पार कर सकते हैं ऐसा स्थान। अतः कैम्ब्रिज यह संस्कृत 'संव्रज' शब्द है। 'व्रज' यानि जाना (अर्थात् नदी पार करना)। उसी व्रज शब्द का आंग्लभाषा में व्रज उर्फ ब्रिज ऐसा अपभ्रंश रूढ़ है।

ठेम्स (Thames, उच्चारण-रूप 'टेम्स' है) संस्कृत-शब्द 'तमस्' (तमसा) अर्थात् अँधेरा है जो मेघश्याम, गँदली जलधारा का द्योतक है। तमसा नदी का नाम रामायण के प्रस्तावना-भाग में आता है।

एक अन्य नदी 'अम्बर' (स्कॉटलैंड में) पानी, जल के द्योतक 'अम्भस्' से व्युत्पन्न है।

स्कॉटलैंड में एक अन्य नगर 'चोलोमोन्डेले' (Cholomondeley) संस्कृत यौगिक शब्द 'चोल-मंडलालय' है जो एक प्राचीन वैदिक राजवंश 'चोल' द्वारा संस्थापित नगर का द्योतक है।

भारत का दक्षिण-पूर्वी तट 'कोरो मोन्डेल' अर्थात् 'चोल-मंडल' कहलाता

है। इसी प्रकार मलयेशिया की राजधानी 'क्वालालम्पुर' भी 'चोलानमपुरम्' अर्थात् चोलों की नगरी है।

बेलफास्ट (Belfast) संस्कृत-शब्द बल-प्रस्थ है जिसका अर्थ 'दृढ़ स्थान' है।

स्टोनहेन्ज (Stone-Henge) संस्कृत-शब्द 'स्तवन-कुंज' अर्थात् 'ध्यान-मनन' का लता-मण्डप, निकुंज है।

'वुड हेन्ज' (Woodhenge) संस्कृत-शब्द 'वन-कुंज' अर्थात् 'जंगल-निकुंज' है।

साउथम्पटन (Southampton) और नॉर्थम्पटन (Northampton) नाम एक विचित्र मिश्रण, तालमेल के परिचायक हैं। आखिरी भाग में 'पटन' अंत्य-पद संस्कृत का 'पट्टनम्' प्रत्यय है जो नगर का द्योतक है। अतः जो कुछ पहले संस्कृत में 'दक्षिण-पट्टनम्' अर्थात् दक्षिणी नगर कहलाता था, वह अब साउथम्पटन और दूसरा भाग जो उत्तर-पट्टनम् था वह अब नॉर्थम्पटन है। कहने का भाव यह है कि संस्कृत भाषा के दिशासूचक उपसर्ग दक्षिण और उत्तर उनके आधुनिक अंगरेज़ी समानकों 'साउथ' और 'नॉर्थ' द्वारा क्रमशः बदल दिए गए हैं जबकि संस्कृत-उपसर्ग 'पट्टनम्' अर्थात् 'पटन' को ज्यों-का-त्यों रहने दिया गया है।

किन्तु उन नामों को साउथ-हैम्पटन और नॉर्थ-हैम्पटन समझना तभी न्यायोचित हो सकेगा जब स्वयं हैम्पटन का अर्थ हम्पी-पट्टन समझा जा सके। उस स्थिति में, ब्रिटेन में तीन हम्पी-पट्टन होंगे—एक दक्षिण में जो साउथम्पटन कहा जाएगा, दूसरा उत्तर में जो नॉर्थम्पटन पुकारा जाएगा और एक केन्द्रीय होगा जो मात्र हम्पटन नाम का होगा।

यूरोप में ईसाइयत थोप दिए जाने पर ज्यों-ज्यों बढ़ती गई, त्यों-त्यों जन-मानस से वैदिक संस्कृति की स्मृतियाँ धूमिल और ओझल होती गईं। संक्रमणकाल की उक्त अवधि में 'वेद' शब्द का अशुद्ध उच्चारण 'एद्दा' (Edda) किया जाने लगा। स्कैंडिनेविया वालों के पास अभी भी इस नाम का धार्मिक ग्रंथ है किन्तु उसकी अन्तर्वस्तु कुछ परवर्ती-काल की निरर्थक पूजा-मात्र रह गई है। यह ऐसा ही है जैसे किसी आधुनिक बैठक-कक्ष में शिकार किए गए जंगली पशु के कंकाल में भूसा आदि निरर्थक सामग्री भरकर उसे सजा-सँवारकर सुशोभित कर दिया गया हो। स्कॉटलैंड की राजधानी एडिनबरा (Edinborough) मूलरूप में

अशुद्ध उच्चारित संस्कृत नाम 'वेदनामपुरम्' है जिसका अर्थ 'वेदों का नगर' है। चूँकि 'वेद' शब्द का बाद में उच्चारण 'एड्‌ा' किया जाने लगा और 'पुरा' को 'बरा/बोरो' कहा जाने लगा, इसलिए 'वेदनामपुरम्' नाम बदलकर, क्षीण-काय होकर 'एडिनबरा' रह गया है।

तथापि उक्त नाम दर्शाता है कि कभी समय था जब प्राचीन ब्रिटेनवासी वेदों का गान किया करते थे। 'मार्गेट केव' (गुफा) में दीवारों पर सूर्य और चन्द्र के भित्ति-चित्र उत्कीर्ण हैं। यह गुफा एक प्राचीन वैदिक पाठशाला-स्थल थी।

'यॉर्क' (York) सूर्य का अर्थ-द्योतक शब्द 'अर्क' है। ईसाइयत-पूर्व काल में उक्त नगर एक 'सूर्य-मंदिर' के चारों ओर निर्मित किया गया था। 'सूर्य-मंदिर' अब ईसाई धर्मपीठ में बदला जा चुका है।

'यॉर्कशायर' (Yorkshire, यार्कशायर) मूलरूप में संस्कृत-नाम 'अर्केश्वर' है जो सूर्य के स्वामी के रूप में एक शिव मंदिर का द्योतक है।

'ब्रिटेन' (Britain) संस्कृत-शब्द 'बृहत्-स्थान' का अपभ्रंश है, जो पर्याप्त बड़े आकारवाले द्वीप-देश का द्योतक है।

प्रचालित अंगरेज़ी शब्दों का संस्कृत-मूल खोजने के लिए अभ्यास-पाठ के रूप में आजकल कैन्टर-बुरी (Canterbury, कैन्टर-बरी) के नाम से पुकारे जानेवाली नगरी-नाम का वास्तविक संस्कृत-नाम शंकरपुरी (भगवान् शिव अर्थात् शंकर की नगरी) दर्शानेवाला विश्लेषण सहायक होगा।

सर्वप्रथम 'सेन्टर' शब्द लें। यदि इसमें 'सी' अक्षर का वैकल्पिक उच्चारण 'के' (क) अनुमत्य हो, तो 'सेन्टर' (सेन्ट्र) के स्थान पर शब्द 'केन्तर' (Kantar) लगभग संस्कृत-शब्द 'केन्द्र' ही बन गया है, क्योंकि यह स्मरण रखने की बात है कि अंगरेज़ी और संस्कृत-भाषाओं में 'ड/द' और 'ट/त' ध्वनियाँ परस्पर में परिवर्तनीय हैं।

हम अब स्थान-वाचक शब्द 'कैन्टर-बुरी' को देखें। वहाँ 'सी' अक्षर को अपनी मूल ध्वनि 'सी' (स) ही रखने दें। उस स्थिति में 'कैन्टरबुरी' शब्द का उच्चारण 'सैन्टरबुरी' किया जाएगा।

अब ध्यान रखने की बात यह है कि संस्कृत की 'क' ध्वनि अंगरेज़ी की 'टी' (ट) ध्वनि में बदल जाती है। जैसे, संस्कृत का शब्द 'नौकिक' अंगरेज़ी में 'नौटिक' बन गया है जैसे 'एयरोनौटिक्स' (Aeronautics) और 'नौटिकल' (Nautical) शब्दों में द्रष्टव्य है। संस्कृत का 'क' अंगरेज़ी के 'टी' (ट) में बदल

जाने का अन्य उदाहरण है संस्कृत का 'नायक' शब्द जो अंगरेज़ी में '(क) नायट' (Knight) बोला जाता है। अतः 'कैन्टरबुरी' शब्द में 'टी' (ट) का स्थान संस्कृत के 'क' शब्द को ग्रहण करना चाहिए। उस स्थिति में 'कैन्टरबुरी' का मूल संस्कृत-नाम 'संकरपुरी' अर्थात् भगवान् शंकर की नगरी स्पष्ट रूप में दिख जाता है। प्रत्यय 'बुरी/बरी' नगरी/नगर के अर्थ-द्योतक संस्कृत-प्रत्यय 'पुरी' का अंगरेज़ी अपभ्रंश उच्चारण है।

जब उपर्युक्त भाषायी विश्लेषण से हम यह जान पाते हैं कि 'कैन्टरबुरी' तथ्य रूप में 'शंकरपुरी' है, तब हम स्वतः इस अतिमहत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक निष्कर्ष पर भी पहुँच जाते हैं कि (597 ईसवी सन् से पूर्व) कल्पित 'कैन्टरबुरी' का ईसाई धर्माधिकारी वास्तव में शंकरपुरी का वैदिक शंकराचार्य धर्माधिकारी था।

एक अतिमहत्त्वपूर्ण पुरातत्त्वीय-सूत्र भी उक्त विश्लेषण से उपलब्ध होता है अर्थात् यदि कैन्टरबुरी में विस्तारपूर्वक पुरातात्त्विक उत्खनन-कार्य किए जाएँ तो उन खुदाइयों से निश्चित है कि ईसाइमत के उग्रवादी धर्म-प्रचारकों के उक्त प्राचीन पवित्र वैदिक केन्द्र में राक्षसी विध्वंसक-कुकृत्यों के महत्त्वपूर्ण स्मृति-अवशेष अभी भी मिल जाएँगे। इससे विज्ञ पाठक जान सकता है कि किस प्रकार भाषायी और ऐतिहासिक अन्वेषण परस्पर सहायक और पूरक हैं।

कल्पित ईसाई नाम 'ज़ेवियर' (Xavier) संस्कृत-शब्द 'क्षत्रिय वीर' का संक्षिप्त उच्चारण है। प्रारंभिक अक्षर 'क्ष' (एक्स-ए) 'क्षत्रिय' का संक्षिप्त, लघुरूप है। प्रत्यय 'वियर' संस्कृत-शब्द 'वीर' है जो बहादुर, साहसी व्यक्ति का अर्थ-द्योतक है।

ऑक्सफोर्ड, ऑक्सब्रिज और अक्सब्रिज जैसे स्थानवाचक असंख्य अंगरेज़ी शब्दों में 'ऑक्स' शब्द संस्कृत का उक्सस अर्थात् 'ऊक्षस्' शब्द है जो वृषभ, बैल, नन्दी का अर्थ-द्योतक है। 'ब्रिज' संस्कृत-शब्द 'व्रज' है जिसका अर्थ 'गति में रहना', 'चलना', 'आगे बढ़ना' या 'पार जाना' है।

'बल्लिओल कॉलेज' (Balliol College, ऑक्सफोर्ड) गजानन भगवान् गणेश—'बल्लाल' के नाम पर है। ईसाई-विश्वास कि बल्लाल कोई 'संत' था इस तथ्य से उद्भूत है कि वैदिक संस्कृति को विनष्ट, धूलि-धूसरित करनेवाले प्रारंभिक ईसाई-आक्रांता लोगों ने उक्त संस्कृति के सभी देवों को संतों के नाम से पुकारकर अपने में आत्मसात् कर लिया। इस प्रकार, उदाहरण के लिए, वैदिक देवता इन्द्र को 'सेंट एन्ड्रूज' के रूप में अंगीकार कर लिया गया। (स्वयं 'सेंट'

शब्द भी संस्कृत का 'संत' शब्द है) एक वैकल्पिक स्पष्टीकरण यह होगा कि ज़बरदस्त-मारकाट, आक्रमण के समय जो वैदिक नाम अस्तित्व में थे, उन्हीं को ईसाई-नामों के रूप में प्रस्तुत कर दिया गया था। इस प्रकार, बल्लाल और इन्द्र यद्यपि मूल रूप में वैदिक देवगण थे, तथापि उनको 'बल्लिओल' और 'एन्ड्रूज' के ईसाई नामों में अंगीकार व प्रदर्शित कर दिया गया है। समुचित अन्वेषण, खोज-बीन करने पर अन्य कल्पित ईसाई नाम भी वैदिक मूल के ही पाए जाएँगे।

यह कभी न समाप्त होनेवाला विषय है जो किसी भी सीमा तक अनवरत बढ़ाया जा सकता है। हम इस पर चर्चा यह आशा करते हुए यहीं रोक देते हैं कि हमने ऊपर जिस प्रणाली की रूपरेखा प्रस्तुत की है, वह भाषायी अन्वेषण में रुचि रखनेवालों को अवश्य रुचिकर तथा लाभप्रद, सहायक सिद्ध होगी।

23
प्रतिदिन की शब्दावली

सत्य या मूल वास्तविकता और इसकी सभी शाखाओं-प्रशाखाओं का पता लगाने के लिए अधिकाधिक ज्ञान की आकांक्षा, उसकी खोजबीन करना वैदिक संस्कृति की प्रथम वास्तविकताओं, उद्देश्यों में से एक है। उक्त उद्देश्य का नाम ज्ञान है। इसकी मूल धातु 'ज्ञ' है। संस्कृत भाषा में एक कहावत है जिसका भावार्थ यह है कि इस लौकिक जीवन में ज्ञान अर्थात् जानकारी प्राप्ति करने से अधिक पवित्र, पुण्य अन्य कोई कार्य नहीं है।

लंदन-स्थित वरिष्ठ बालकों के सेंट जेम्स इंडिपैन्डेन्ट स्कूल के मुख्य अध्यापक के साथ हुए मेरे पत्राचार में श्री निकोलस डेबेनहम ने, इस पुस्तक को लिखने-सम्बन्धी मेरी परियोजना के बारे में अक्तूबर 15, 1991 के अपने पत्र में अत्यन्त कृपापूर्वक यह जानकारी स्वेच्छा से प्रदान की कि संस्कृत के संयुक्त व्यंजन 'ज्ञ' (अर्थ है 'जानना') से लगभग सभी भाषाओं में बहुत संख्या में इससे व्युत्पन्न शब्दों को स्थान मिला है। उनने मेरे लिए जो जानकारी भेजी वह उनके मूल अंगरेज़ी पत्र में निम्न प्रकार है :

"In Lithuanian the word is Zynauti.

The Slavonic word is Znati, Russian is Znat.

The Celtic equivalent is 'know'.

In Greek it is jnw and jnwokw.

In Italian it is gnosco (also in Latin).

In French it is Connaitre.

In Tentantic, it is Cnaan, Cnwan (old English), Kna (in old Norse). In German it is kennen, konnen.

In English the words know, known, knowledge etc. have that initial Sanskrit Joint Consonant 'jn' written as 'kn."

"लिथुआनी भाषा में यह 'ज़ानौटी' (Zynauti) है। स्लेवोन का शब्द है 'ज़्नाति' (Znati), रूस का शब्द है 'ज़्नट' (Znat)। सेल्टिक समानक '(क्) नो' है। यूनानी भाषा में यह 'ज्ञव' और 'ज्ञवकोव' है। इतालवी और लैटिन भाषाओं में यह 'ज्ञोस्को' है। फ्रैंच में यह 'कन्नत्रे' है। ट्यूटान्टिक में यह 'ज्ञान', 'ज्ञवन' (पुरानी अंगरेज़ी में), 'क्न' (पुरानी नोरसे में)। जर्मन भाषा में यह 'केन्नन', 'कोन्नन' है। अंगरेज़ी में 'नो' (जानना), 'नोन' (ज्ञात), 'नॉलिज' (ज्ञान) शब्दों में उक्त प्रारंभिक संस्कृत व्यंजन 'ज्ञ' (ज्न) 'क्न' के रूप में लिखा जाता है।"

श्री डेबेनहम ने यह भी लिखा कि 'जानना' अर्थवाले अन्य संस्कृत-शब्द 'विद्' ने भी सारे संसार की अनेक भाषाओं में अनेक शब्दों को जन्म दिया है।

अंगरेज़ी भाषा में जब कोई व्यक्ति अपने वक्तव्य/कथन के समर्थन में किसी आधिकारिकता का उल्लेख करता है, तब वह कहता/लिखता है 'वाइड सच एंड सच' (के अनुसार)। वहाँ 'वाइड' शब्द संस्कृत-धातु 'विद्' (जानना) है।

अंगरेज़ी का 'वर्ड' (शब्द-द्योतक) शब्द 'बोलना' के संस्कृत-शब्द का मिश्रित उच्चारण है। इसमें 'आर' (र) अतिरिक्त अक्षर प्रविष्ट हो गया है। इसके अभाव में शब्द 'वद' संस्कृत का होगा जो 'बोलना' का द्योतक होता है।

अंगरेज़ी शब्दों 'राइट' (right, सही, अधिकार, दायाँ आदि का अर्थ-द्योतक) और 'राइट' (write, लिखना) की ध्वनियाँ समान हैं, उच्चारण एक-जैसे हैं, किन्तु उनके अर्थों में पर्याप्त अन्तर है। किन्तु अन्य भावना से हम कह सकते हैं कि कोई व्यक्ति लिखने (राइट—डब्ल्यू आर आई टी ई) के लिए तभी तैयार होता है जब वह लिखनेवाली बात सही या सत्य (आर आई जी एच टी) हो। यदि उक्त बात झूठी या ग़लत हो, तो व्यक्ति उसे लिखने से संकोच करता है। इस दृष्टि से दोनों ही अंगरेज़ी शब्दों में एक तत्त्व समान है। वह तत्त्व संस्कृत का शब्द 'ऋत' है जो 'सत्य' का द्योतक, पर्याय है। इसी कारण अर्थों में भिन्न होते हुए भी अंगरेज़ी के दोनों शब्द 'राइट' (सही-द्योतक) व 'राइट' (लिखना) निकट समस्रोतीय हैं। वास्तव में 'राइट' (लिखना) शब्द का प्रारंभिक अक्षर 'डब्ल्यू' यदि हम हटा दें तो शेष 'राइट' दूसरे 'राइट' (सही) अर्थात् संस्कृत 'ऋत' जैसा ही है।

अंगरेज़ी शब्द 'वायस' (voice, आवाज़/बोली) संस्कृत का 'वाचा' शब्द है। इस प्रकार 'वाइवा वोसी' (viva voci, वीवा वोसी) शब्दावली संस्कृत की 'जीव वाचा' है अर्थात् 'जीवित आवाज़' अर्थात् किसी उम्मीदवार की वास्तविक आवाज़ जो निजी साक्षात्कार में सुनी जाती है।

इससे हमें संस्कृत-शब्द 'जीव' अर्थात् जीवन अर्थात् जीवित प्राणी तक पहुँचने में सहायता प्राप्त होती है।

यूनानी भाषा में इसका उच्चारण 'बीव' अर्थात् 'बायो' होता था। फ्रेंच भाषा में यह 'वाइव' के रूप में तथा अंगरेज़ी में 'लाइव' के रूप में विद्यमान है।

अतः 'बायोलॉजी' (Biology) और 'ज़ूलॉजी' (Zoology) दोनों ही शब्द संस्कृत-भाषा के 'जीव' शब्द से उत्पन्न हैं। फिर भी 'बायोलॉजी' 'भौतिकी-विज्ञान' की द्योतक और 'ज़ूलॉजी' जीवन की संरचना के अध्ययन से सम्बंधित है।

पुस्तक के रूप में लिखित ऐसा ज्ञान संस्कृत में ग्रंथ कहलाता है। मात्र थोड़े-से उच्चारण में अन्तर के साथ यह वही शब्द है (ग्रंथ के स्थान पर 'ग्राफ़') जो 'ग्राफ़', 'ग्राफ़-पेपर' (कागज़), 'ज्योग्राफ़ी' (भूगोल-शास्त्र), 'बायोग्राफ़ी' (जीवन-चरित), हिस्टोरियोग्राफ़ी (इतिहास-लेखन) आदि शब्दों को जन्म दे सका।

'स्व' के लिए अंगरेज़ी शब्द 'आत्म' है। यह अंगरेज़ी में 'आटो' उच्चारण किया जाता है जैसे 'आटो-बायोग्राफ़ी' में। संस्कृत भाषा में यही शब्द होगा 'आत्म (स्व)— जीव (जीवन)—ग्रंथ (लिखना)। इस प्रकार, 'आटो-बायोग्राफ़ी' शब्द संस्कृत के शब्द 'आत्म-जीव-ग्रथ' का अपभ्रंश, अशुद्ध उच्चारण देखा जा सकता है।

अंगरेज़ी भाषा में संस्कृत-शब्द 'आत्म', आत्मा और स्व के अर्थ-संदर्भ में अधिकांश मामलों में 'म' का परित्याग कर चुका है और 'आट्' अर्थात् 'आटो' के रूप में प्रयोग में आ चुका है जैसे 'आटोबायोग्राफ़ी' शब्द में ऊपर स्पष्ट है।

किन्तु 'आटोमोबाइल' शब्द में पूरा संस्कृत-शब्द 'आटोमो' अर्थात् 'आत्म' विचित्र ढंग से वर्तनी में विद्यमान है, और फिर भी 'मो' (अर्थात् म) अक्षर के बाद के शब्द-भाग के साथ ग़लत प्रकार से जोड़ दिया गया है, जिससे अशुद्ध रूप में 'मोबाइल' शब्द बन गया है जो 'गतिवान' या 'गति के योग्य' (चलने-फिरनेवाला या चल-फिर सकने योग्य) का अर्थ-द्योतक हो गया है।

मूल संस्कृत-शब्द 'आत्म-बल' है अर्थात् किसी का स्वयं का बल या शक्ति, सामर्थ्य। संस्कृत भाषा का विद्यालय-स्तर का छात्र भी उक्त शब्द के दो यौगिकों को 'आत्म-बल' के भागों में सही प्रकार से विभाजित कर देगा—आशा की जा सकती है; फिर भी अंगरेज़ी में 'आटोमो' पूर्ण शब्द अपनी पूर्णता में विद्यमान होने के उपरान्त भी 'आटोमोबाइल' शब्द का स्पष्टीकरण

'आटो + मोबाइल' कहकर प्रस्तुत किया जा रहा है जो एक स्थायी हास्यापद भूल, ग़लती है। और फिर एक टूटी हुई हड्डी के समान यह टेढ़े-मेढ़े ढंग से अंगरेज़ी भाषा में समा गया है, स्थायी बन गया है।

शब्द 'एबल' (Able) और 'एबिलिटी' (Ability) अन्य ऐसे शब्द हैं जो अपने मूल संस्कृत-स्रोत से बिछड़कर अंगरेज़ी में टेढ़े, तिरछे हो समा गए हैं।

सामर्थ्य, शक्ति अर्थात् ऊर्जा, अंतःशक्ति के लिए संस्कृत-भाषा में 'बल' शब्द है। इसके साथ 'अ' उपसर्ग जुड़ने से 'न'-कारात्मक अर्थ प्राप्त होता है। अतः संस्कृत में 'ए (अ)-बल' शब्द का अर्थ बल, सामर्थ्य या शक्ति का अभाव होगा। परिणामतः संस्कृत में 'अबला' शब्द उस महिला का द्योतक है जो सुभेद्य, असुरक्षित है और इसीलिए स्वयं अपनी ओर से जीवन की सभी ज़िम्मेदारियों को पूर्ण करने में पर्याप्त सामर्थ्य, शक्ति, बल से हीन, अभावग्रस्त है।

शब्द 'एबिलिटी' पूरी तरह संस्कृत-भाषा का है। इसके तीन यौगिक शब्द 'अ-बल-इति' हैं जो बल, शक्ति या सामर्थ्य के अर्थ-सूचक हैं। किन्तु अंगरेज़ी भाषा में इसका बिल्कुल उल्टा, विपरीत अर्थ है क्योंकि संस्कृत के समान 'बल' शब्द को मूल शब्द मानने के स्थान पर अंगरेज़ी में मूल शब्द 'एबल' मान लिया गया है।

यूरोपीय (प्रीति-) भोजों में 'सूप' के साथ भोजन-ग्रहण प्रारंभ करने की प्रथा है। यह 'सूप' संस्कृत-शब्द है। संस्कृत में 'सू' उच्चारण की जानेवाली धातु 'सार, सत्त्व, निचोड़' का द्योतक है। जबकि 'प'—अंतिम अक्षर—पकाना या उबालना'-सूचक है। निष्कर्ष है कि 'सूप' 'उबाला हुआ सार' है।

अंगरेज़ी 'टेबल' (Table) शब्द संस्कृत का 'स्थबल' शब्द है अर्थात् वह वस्तु जो दृढ़, स्थिर, एक-समान, न हिलनेवाली क्योंकि इसके सम्बल, सामर्थ्य प्रदान करने के लिए चार पाए, टाँगें हैं।

अंगरेज़ी शब्द 'स्टेबल' (Stable) अर्थ-द्योतन और वर्तनी में संस्कृत के ऊपर उल्लेख किए गए शब्द 'स्थबल' से भी अधिक निकटतावाला है क्योंकि यह वह स्थान है जहाँ मटरगश्ती करनेवाले पशुओं को पहुँचा दिया जाता है और उन्हें इधर-उधर घूमने देने के स्थान पर वहीं रोककर रखा जाता है।

'पॉट'(Pot) संस्कृत का 'पात्र' शब्द है।

'कट' (Cut) अंगरेज़ी शब्द संस्कृत-भाषा के 'कर्त' शब्द से व्युत्पन्न है। 'मिनिस्टर' (Minister) शब्द में से 'एस' (स) अक्षर को छोड़कर यदि इसे

'मिनिटर' लिखा जाए तो यह संस्कृत का 'मंत्री' शब्द दिखाई देगा।

'वार' संस्कृत में हमला, प्रहार, आक्रमण का द्योतक है। 'सरन्डर' (Surrender) अंगरेज़ी शब्द संस्कृत का 'शरण-धर' है। संस्कृत-शब्द 'बकुर' का अर्थ युद्ध में प्रयुक्त तुरही या अन्य वायु-उपकरण है। 'बिगुल' (Bugle) उसी का अपभ्रंश है।

'एनीमी' (Enemy) शब्द संस्कृत का 'अ-नम' शब्द है जो न-झुकनेवाले और इसकी बजाय कठोर विरोध बनाए रखनेवाले का द्योतक है।

सुरुचिपूर्ण, स्वच्छ, सु-व्यवस्थित का अर्थ-द्योतक अंगरेज़ी शब्द 'नीट' (Neat) का यही अर्थ और उच्चारण कुछ भारतीय भाषाओं में विद्यमान है जो इसके संस्कृत-मूलक होने का द्योतक है।

सोलहवीं शताब्दी के संतशिरोमणि महाकवि तुलसीदास ने अंगरेज़ी शब्द 'नियर' (Near, समीप, पास) का अर्थ-द्योतक 'नियरे/नियरू' शब्द अपने निम्नलिखित दोहे में लिखा है। यह इस शब्द के संस्कृत-मूलक होने का प्रमाण है—

निन्दक नियरे राखिए, आँगन कुटी छवाय,
बिन पानी, साबुन बिना, निर्मल करै सुभाय॥

अर्थात् एक कटु आलोचक निकट, नियर रखना स्वागत-योग्य है क्योंकि उससे व्यक्ति को अपने अवगुण जानने और फलस्वरूप सुधार करने का अवसर मिलता है।

'टैबू' (Taboo, वर्जन, निषेध) संस्कृत के 'तबूनम' से है।

'उपनिषद्' शब्द में अंत्य-पद 'षद्' का निहितार्थ 'सिटिंग' (Sitting, बैठना) है। यह प्रदर्शित करता है कि किस प्रकार 'सिट' (Sit) शब्द संस्कृत से बना है।

'स्टेडियम' (Stadium) संस्कृत का 'स्थानदिलम्' है। 'असायलम' (Asylum) अंगरेज़ी शब्द संस्कृत का 'आश्रयम्' शब्द है। अंगरेज़ी और संस्कृत भाषा में 'र' और 'ल' अक्षर प्रायः स्थान बदल लेते हैं। उदाहरण के लिए, अंगरेज़ी शब्द 'फ़र्टिलिटि' (Fertility, उर्वरता) संस्कृत का 'फलतीति' है।

'स्पैक्टेकल्स' (Spectacles) संस्कृत का 'स्पष्ट-करस' शब्द है जिसका अर्थ उससे अभिप्रेत है जो (पठन की) वस्तु को बड़ा और स्पष्ट, साफ कर देता है।

'ऐक्सैप्ट' (अक्सैप्ट, Acccpt) संस्कृत-शब्द 'अक्षिप्त' है; और जो अस्वीकृत, ना-मंज़ूर नहीं किया गया या फैंका नहीं गया वह अक्षिप्त अर्थात् 'अक्सैप्टेड' है।

'सक्सिन्ट' (Succint) संस्कृत-शब्द 'संक्षिप्त' है।

'अक्सपैक्टेड'(Expected) संस्कृत का 'अपेक्षित' शब्द है।

'मैन' (Man) 'मानव' है।

'मीडियम' (Medium) संस्कृत का 'मध्यम' शब्द है।

'ट्री' (Trce) संस्कृत का 'तरु' शब्द है।

'अडोर' (Adore) संस्कृत का 'आदर' शब्द है।

'प्रीचर' (Preacher) संस्कृत का 'प्रचारक' शब्द है।

'डोर' (Door) शब्द संस्कृत का 'द्वार' है। संस्कृत का 'वात' शब्द अंगरेज़ी का 'विंड' है जबकि 'वातायन' अंगरेज़ी शब्द 'विंडो' (खिड़की) का द्योतक है। अंगरेज़ी भाषा भी उसी नियम का पालन करती है अर्थात् 'विंडो' (वातायन) वह है जो 'विंड' (वात) को अन्दर प्रवेश देती है, आने देती है।

'नेवी' (Navy) अंगरेज़ी शब्द वास्तव में संस्कृत भाषा का 'नावि' है। परिणामस्वरूप, 'नेविगेबिलिटी' (Navigability) जिसका अर्थ जलपोतों का आवागमन जाने योग्य बनाना है, पूर्णतया संस्कृत भाषा का यौगिक शब्द 'नावि-ग-बल-इति' है।

संस्कृत-शब्द 'सागर' और 'सिन्धु' संक्षिप्त रूप धारण कर अंगरेज़ी में 'सी' (Sea) रह गए हैं।

अंगरेज़ी शब्द 'कोमोडोर' (Commodore) में संस्कृत-शब्द 'समुद्र' का रूपान्तरित उच्चारण स्पष्ट दिखाई पड़ जाएगा यदि 'सी' अक्षर का वर्ण-गत उच्चारण 'सी' ही रखा जाए। उक्त स्थिति में 'कोमोडोर' शब्द को 'सोमोडोर' अर्थात् समुद्र लिखा जाएगा। स्वतः स्पष्ट है कि अगला शब्द 'अधिकारी' लुप्त या ग़ायब है। इसके स्थान पर उक्त दो-शब्द की उपाधि का मात्र पहला भाग ही अंगरेज़ी में विद्यमान है जो 'सोमोडोर' अर्थात् समुद्र, अर्थात् 'कोमोडोर' के रूप में है। मूल संस्कृत पद-उपाधि थी 'समुद्र-अधिकारी'।

सागर का अर्थ-द्योतन करनेवाले और यूरोपीय भाषाओं में प्रयुक्त 'मिअर' (Mere) और 'मेरीन' (Marine) शब्द मूलतः संस्कृत में पानी, जल के द्योतक शब्द 'नीर' के ही रूप में हैं क्योंकि संस्कृत की 'न' और 'म' ध्वनियाँ अंगरेज़ी में

प्रायः अपने-अपने स्थान बदल लेती हैं।

संस्कृत-शब्द 'योग' का निहितार्थ व्यक्ति की आत्मा का देवात्मा, परमात्मा से (मन-एकाग्रता के माध्यम से) जुड़ जाना, मिल जाना है। यही शब्द अंगरेज़ी भाषा में 'योक' (Yoke) के रूप में वर्तनीबद्ध किया जा रहा है। यहाँ यह देखा जा सकता है कि किस प्रकार संस्कृत की 'ग' ध्वनि अंगरेज़ी के उक्त शब्द में 'क' ध्वनि में बदल गया है। फ्रैंच भाषा में 'योग' का उच्चारण 'जोग' किया जाता है जैसा भारत के कई भागों में भी हो रहा है। इसी का दृष्टान्त संस्कृत का 'गौ' शब्द अंगरेज़ी में 'कौ, काऊ' (Cow) के उच्चारण से भी स्पष्ट हो जाता है।

संस्कृत का 'पोत' शब्द अंगरेज़ी में 'बोट' (Boat) है। संस्कृत का 'उटज' शब्द अंगरेज़ी में 'कॉटिज/काटेज' (Cottage) के रूप में उच्चारण किया जाता और लिखा जाता है।

अंगरेज़ी 'अडवोकेट/एडवोकेट' (Advocate) संस्कृत का 'अधिवक्ता' शब्द है।

अवर्णनीय और रहस्यवादी शक्ति जिसने इस सृष्टि को जन्म दिया, संसार की, सृष्टि की तथा इसे जो चला भी रही है, संस्कृत-भाषा में 'माया' कही जाती है। इससे व्युत्पन्न 'मायिक' शब्द से अंगरेज़ी का 'मैजिक' (Magic) शब्द बना है क्योंकि 'य' और 'ज' परस्पर परिवर्तनीय अक्षर हैं।

अंगरेज़ी शब्द 'फ्रूट' (Fruit) का अर्थ-द्योतक संस्कृत का जाति-वाचक संज्ञाशब्द 'फल' संस्कृत के शब्दों में विभिन्न प्रकार के फलों की जातियों के द्योतन हेतु प्रत्यय के रूप में जोड़ दिया जाता है। इस पर, कदली-फलम् का अर्थ है केला, बहुबीज-फलम् का अर्थ है अमरूद, जम्बीर-फलम् नीबू है, सीता-फलम् शरीफ़ा है, और श्रीफलम् नारियल है। अंगरेज़ी भी इसी नियम का अनुसरण करती है जो सेब (Apple), अनान्नास (Pine Apple) और शरीफ़ा (Custard Apple) आदि शब्दों में देखा जा सकता है जहाँ 'एप्पल' संस्कृत का प्रत्यय 'फल' ही है।

अंगरेज़ी शब्द 'सप्पल' (Supple) संस्कृत का 'चपल' है।

'रोप' (Rope) अंगरेज़ी शब्द संस्कृत में 'रज्जु' है। 'करेज' को यदि ध्वनिगत रूप में उच्चारण करें तो 'Courage' को 'सौर्ज' (Sourge) बोलेंगे जो संस्कृत के 'शौर्य' के रूप में भलीभाँति पहचाना जा सकता है।

निद्रा अथवा निद्रा-सम तन्द्रिल अवस्था को संस्कृत में 'स्वप्न' कहते हैं। चूँकि 'स' और 'ह' परस्पर परिवर्तनीय हैं, इसलिए स्वप्न का उच्चारण 'ह्वप्न' होने पर अंगरेज़ी का 'हिप्नोटिज़्म' (Hypnotism, सम्मोहन-विद्या) शब्द बना, दृष्टिगोचर हो जाएगा।

'क्रिया' संस्कृत-शब्द 'कार्य' या 'कर्म' का द्योतक है। यही अंगरेज़ी में 'क्रिया' की जगह 'स्त्रिया' होकर 'क्रियेशन' (सृष्टि) और 'क्रियेटर' (सृष्टि-कर्ता) शब्दों को जन्म देने का कारण है।

'मिसक्रिएन्ट' (Mis-Creant) इसी श्रेणी का शब्द है। इसका उपसर्ग 'मिस' संस्कृत का 'दुष्' उपसर्ग है।

अंगरेज़ी शब्द 'डिस्मे' (Dismay) संस्कृत का 'विस्मय' शब्द है।

ऐसे सभी उदाहरण स्पष्ट दर्शाते हैं कि कोई एक-समान नियम नहीं है। भाषाशास्त्रियों ने अभी तक कुछ ऐसे खास नियम बनाने का यत्न किया था जिनके अनुसार संस्कृत-शब्द अन्य भाषाओं में कुछ विशिष्ट उच्चारणों सहित विशिष्ट नियमों के अन्तर्गत ही प्रविष्ट हो पाए थे। उक्त विश्वास स्पष्टतः अयुक्तियुक्त, निराधार है। अंगरेज़ी में संस्कृत-शब्दों के अशुद्ध, भ्रष्ट उच्चारणों के लिए किन्हीं भी विशेष नियमों का अनुसरण नहीं हुआ।

यह सब इस कारण है कि अंगरेज़ी एंग्लो, सैक्सनों, रोमनों, नोरमनों, वीकिंगों, और अन्य लोगों की भाषा/बोली का घालमेल, ऊट-पटाँग मिश्रण, भानमती का पिटारा है। ये सभी लोग महाभारत-युद्ध के बाद की अवधि, युग में अपसरण, टूट-फूट से ग्रस्त संस्कृत के अपने-अपने रूपों को ही बोलते थे। आधुनिक अंगरेज़ी उन सभी का विचित्र समन्वय होने के कारण इस बात का आग्रह करने की कोई सार्थकता अथवा लाभ नहीं है कि अंगरेज़ी शब्दों के विशिष्ट संस्कृत/मूल खोजने के लिए प्रत्येक मामले में एक खास नियम प्रयुक्त होता है।

विक्टोरियाई-युग में कुछ ब्रिटिश विद्वानों ने कुछ नई अध्ययन-शाखाओं के नाम से 'तुलनात्मक भाषाशास्त्र' और 'तुलनात्मक मिथक शास्त्र' विधाएँ स्थापित कीं क्योंकि वे इन्हें नया समझते थे। स्पष्ट है कि वे पूर्व और पश्चिम की भाषाओं व पुराण-विद्या में निकट की समरूपता देखकर सम्मोहित व आश्चर्यचकित रह गए थे।

उन लोगों में आश्चर्य और उत्तेजना की भावना इतिहास की ग़लत

अवधारणा के कारण जन्मी। जैसा (पूर्व-उद्धृत) ऑक्सफोर्ड शब्दकोश के उत्तर से विशेषरूपेण स्पष्ट हो गया है, पश्चिमी विद्वान् सदा यही धारणा लेकर चलते हैं कि मानवता का बे-तरतीब, निरुद्देश्य, छुट-पुट, अनियमित, आकस्मिक, विषम, पंचमेल प्रारंभ पशु और आदिम-स्तर से हुआ है। इसके विपरीत, वैदिक संस्कृति की मान्यता है कि मानव-प्राणियों ने इस पृथ्वी पर अपनी जीवन-लीला ईश्वरीय उत्कृष्टता के स्तर से, वेदों-सहित ज्ञान-भंडार के साहित्य व उनकी संस्कृत-भाषा के साथ प्रारंभ की। बाद में, जब महाभारत-युद्ध के कारण विश्व-व्यापी वैदिक संस्कृति छिन्न-भिन्न हो गई, तब मानवता भिन्न-भिन सिद्धान्तों, सम्प्रदायों और भाषाओं में विभाजित हो गई।

उनकी भाषाओं और जनश्रुतियों, पुरा-विद्याओं में मूल एकरूपता का वास्तविक कारण सामान्य वैदिक, संस्कृत-मूल ही है। यदि तुलनात्मक भाषाविज्ञान और तुलनात्मक पुराविद्या-सम्बंधित विद्वानों को उक्त निष्कर्ष तक पहुँचने में सहायक होते हैं, तब तो यह माना जा सकता है कि उनका अध्ययन सही मार्ग पर चल रहा है; किन्तु यदि उनका अध्ययन किसी एक ही सामान्य स्रोत के सम्बन्ध में किसी निष्कर्ष पर पहुँचे बिना मात्र इधर-उधर भटकने के लिए छोड़ देता है, तब अत्यधिक श्रम-प्रयास व प्रतिभा व्यर्थ ही गई, समझा जाएगा।

अनेक यूरोपीय भाषाओं में 'जल, पानी' का द्योतक 'अक्वा' (Aqua) शब्द संस्कृत-भाषा के शब्द 'क्वा' अर्थात् 'क' से व्युत्पन्न है। उपसर्ग 'अ' को जोड़ने से तो तथ्यतः इसे संस्कृत में नकारात्मक अर्थ प्राप्त हो जाएगा, जैसे 'अमोरल' (Amoral) निर्-नैतिक शब्द में।

'अक्वैटिक' (Aquatic), 'अक्वाडक्ट' (Aquaduct), 'अक्वापुरा' (Aquapura) जैसे सभी शब्द संस्कृत-धातु 'क' अर्थात् 'क्वा' से व्युत्पन्न हैं। परिणामतः शब्द 'कासल' (Castle) यौगिक संस्कृत-शब्द 'क-स्थल' अर्थात् 'पानी में सुदृढ़ स्थान' है। और तथ्य भी यही है कि दुर्ग, साधारणतः, पानी से पूरी तरह भरी खाई से घिरा रहता है।

'सूनु' शब्द अंगरेज़ी में 'सन' (Son) अर्थात् पुत्र के रूप में विद्यमान है, जबकि संस्कृत-शब्द 'सूर्य' भी 'सन' (Sun) अर्थात् सूरज का आधार दिखाई पड़ता है। स्पष्टतः 'सोलर' (Solar) शब्द संस्कृत-शब्द 'सूर्य' की ही व्युत्पत्ति है।

'एनर्जी' संस्कृत-शब्द 'अर्जा' अर्थात् 'ऊर्जा' है जिससे अंगरेज़ी शब्द

'अर्जेन्ट'(urgent) व्युत्पन्न है।

'डे' संस्कृत का 'दिन' शब्द है। जबकि अंगरेज़ी 'नाइट' (Night) शब्द संस्कृत-भाषा के 'नाक्तम' शब्द का अशुद्ध उच्चारण है।

अंगरेज़ी-शब्द 'डेमन' (Demon) संस्कृत-शब्द 'दानव' या 'दमन' से हो सकता है अर्थात् जो बल द्वारा दबा देनेवाला हो।

चूँकि 'ह' (H) और 'स'(S) ध्वनियाँ प्रायः स्थान बदल लेती हैं इसलिए 'हैप्पी' (Happy) शब्द को 'सैप्पी' (Sappy) करके लिखा जा सकता है जिससे समझ में आ जाए कि यह संस्कृत का 'सुखी' शब्द है।

'ऑनरेबल'(Honourable) तथ्य रूप में, 'अडोरेबल' (Adorable) है जो संस्कृत का 'आदर-बल' है।

पैटर अर्थात् फादर, मैटर अर्थात् मदर, डाटर, ब्रदर सभी संस्कृत-शब्द पितर, मातर, दुहिता, भ्रातर आदि हैं।

कुछ अंगरेज़ी शब्द यद्यपि मूल रूप में संस्कृत भाषा के ही हैं, तथापि उनमें कुछ अतिरिक्त अक्षर जुड़ गए हैं जो उनके संस्कृत-मूल को ढककर, आवरण में ले बैठे हैं। यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं। अंगरेज़ी के शब्द 'दैट' (That) और 'दे' (They) को लें। 'दैट' में से 'एच' (H) अक्षर निकाल देने पर अच्छी तरह स्पष्ट हो जाएगा कि 'दैट' शब्द संस्कृत का 'तत्' शब्द है। यही बात 'दे' में भी है—'एच'-विहीन होकर यह संस्कृत का शुद्ध 'ते' शब्द है। पहले का अर्थ 'वह' और दूसरे ('दे' या) 'ते' का अर्थ 'वे' होता है।

अंगरेज़ी शब्द 'कोर्ट' (Court) संस्कृत का 'कोट' शब्द है जिसकी अंगरेज़ी वर्तनी में 'आर' (r) अक्षर/ध्वनि का अनावश्यक प्रवेश व बोझ है। 'कोट' का अर्थ एक लम्बी, सुरक्षात्मक दीवार है। इसीलिए, 'कोर्टयार्ड' (Courtyard) का अर्थ एक बाड़ा, प्रांगण होता है जो एक कोट अर्थात् सुरक्षात्मक प्राचीर, दीवार से घिरा होता है। अतः अंगरेज़ी शब्द, वास्तव में, 'कोट-यार्ड' होना चाहिए।

विधि-न्यायालय भी प्रारंभ में न्याय की एक पीठ, जगह होती थी जो एक सुरक्षात्मक दीवार अर्थात् कोट द्वारा चारों ओर से घिरी रहती थी। न्यायकर्ता के बढ़ते उच्च-स्तर यथा ग्राम-प्रधान, सरदार, ठिकानेदार और स्वयं राजा के सर्वोच्च स्तर के साथ-साथ दीवार की ऊँचाई भी अधिकाधिक बढ़ती ही गई। इससे 'हायर कोर्ट ऑफ अपील' (Higher Court of Appeal) उक्ति या

वाक्य-खंड की सार्थकता समझ आती है। प्रत्येक उच्चतर प्राधिकरण की स्थापना के साथ ही उसे अधिक ऊँची दीवार अर्थात् कोट से घेर दिया जाता था।

इसी की अंगरेज़ी वर्तनी 'कोर्ट' (Court) की जाती है जो ग़लत है।

भवन/महल/गढ़ी का द्योतक फ्रैंच शब्द 'शाटो' (Chateau) भी संस्कृत का शब्द 'कोट' ही है। यह दर्शाता है कि किस प्रकार विभिन्न आधुनिक भाषाओं की मनमौजी वर्तनी और उच्चारण ने संस्कृत-शब्दों को विकृत कर दिया है, तोड़-मरोड़ दिया है।

अंगरेज़ी शब्दों के संस्कृत-भाषा के मूल को छुपाने के लिए फ़ालतू अंगरेजी अक्षरों को जोड़ लेने का एक अन्य उदाहरण 'यूनिटी'(Unity) शब्द है। 'नि' अक्षर का त्याग कर देने पर 'यूटी' शब्द रह जाता है जो स्पष्टतः संस्कृत का 'युति' शब्द है।

'ड्यूटी' (Duty) शब्द संस्कृत का 'दायिती' 'दायित्व' शब्द है अर्थात् सेवा या उत्तरदायित्व की दृष्टि से व्यक्ति को जो अन्य लोगों के लिए करना होता है।

अंगरेज़ी सर्वनाम 'यू' (You) और 'वी' (We) क्रमशः संस्कृत-शब्दों 'यूयम्' और 'वयम्' के टेढ़े-मेढ़े रूप हैं।

'दाउ' (Thou) अंगरेज़ी शब्द संस्कृत में 'त्वम्' है जो 'एम' (M,म) जोड़कर और 'Thoum' लिखकर स्पष्ट रूप में देखा जा सकता है।

दुलार, चुम्बन, प्रेमस्पर्श करना, पुचकारना और अन्य आसक्ति-भाव के द्योतक संस्कृत-शब्द 'लाड़' (लाड) से अनेक शब्दों की व्युत्पत्ति हुई है जैसे लाडा और लाडी (वर और वधू हिन्दी में), 'लैड' (Lad, लड़का) और 'लेडी' (Lady, महिला) अंगरेज़ी में, 'लड़का और लड़की' हिन्दी में, और मराठी में लड़का-लड़की (अर्थात् प्रिय बालक और प्रिय बालिका)।

जब कोई परिचित व्यक्ति मिलता है या दूरभाष पर कोई व्यक्ति उत्तर देने के लिए उपस्थित होता है, तब सामान्यतः एक निरर्थक पूरक शब्द 'हलो' बोला जाता है जो संस्कृत-भाषा का ही है। सुप्रसिद्ध संस्कृत नाटक 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' में जिसकी रचना ईसवी सन् से लगभग 56 वर्ष पूर्व महाकवि कालिदास ने की थी, प्रत्येक पात्र दूसरे पात्र से चर्चा करते समय 'हलो' कहकर आह्लादित होता है।

ब्रिटेन में तेज़ रफ़्तार से जा रहा प्रत्येक मोटर-चालक अचानक सड़क पार

जाने को इच्छुक किसी महिला को बचाने के लिए हताश होकर वाहन रोकने या गति कम करने हेतु 'ब्रेक' लगाता है, तब वह उक्त महिला को 'सिल्ली काऊ' (भोली, मूर्ख, अल्प बुद्धि, हास्यास्पद गाय) निन्दात्मक स्वर में कह देता है। यह उक्ति 'महाभारत' महाकाव्य में 'संस्कृत भाषा' की है। उक्त महाकाव्य के 'अरण्य-पर्व' में द्रौपदी अर्जुन से अपनी व्यथा का वर्णन करती हुई शिकायत करती है कि कौरव-दरबार में सार्वजनिक अपमान के लिए द्रौपदी को घसीटते हुए लाया गया था तब उसे 'मूर्ख/हास्यापद/भोली गौ' (सिल्ली काऊ) कहकर कलंकित किया गया था।

'रामायण' महाकाव्य के विभिन्न सर्गों/अध्यापकों को 'कांड' (Canda, Kanda) कहा गया है, जैसे 'अरण्य कांड, युद्ध-कांड' आदि। संस्कृत का उक्त शब्द ही अंगरेज़ी की महान् कविताओं में विभागों के नामकरण हेतु 'कैन्टो' उच्चारित होता है।

ऐसे विवरण इस तथ्य के प्रमाण हैं कि ईसाइयत के धर्मान्धों द्वारा ईसाइयत-पूर्व का इतिहास नष्ट कर दिए जाने से पूर्व यूरोप में पूर्णतः समृद्ध-सम्पन्न वैदिक संस्कृति (विद्यमान व प्रभावी) थी जिसमें 'रामायण' और 'महाभारत' अति-उत्सुकता व उत्कंठापूर्वक अध्ययन किए जाते थे, श्रद्धा से देखे जाते थे तथा उनका गायन-वाचन होता था।

अंगरेज़ी 'जैन्टलमैन' (Gentelman) शब्द संस्कृत के 'संतुलमन' शब्द का अपभ्रंश, अशुद्ध उच्चारण है। 'संतुलमन' का अर्थ है समान, संतुलित मन रखनेवाले व्यक्ति। उक्त यौगिक शब्द में 'सं' या 'सन्' का अर्थ है 'अच्छा' या 'समुचित'। 'तुल' का मतलब है सम-तोल या स्थिर, सधा या समान, तथा 'मन' शब्द संस्कृत में चित्त-वृत्ति का संचालक, द्योतक है जो अंगरेज़ी 'माइँड' का समानक है। यह स्वीकार्य, ग्राह्य तथ्य है। क्योंकि, जब कोई व्यक्ति किसी सभा, बैठक या एकत्रित जन-समूह को सम्बोधित करता है तब वह आशा करता है कि श्रोताओं में विशेषरूपेण पुरुष-वर्ग शारीरिक रूप से अधिक बलशाली, कठोर होने के कारण संतुलित दृष्टिकोण रखें क्योंकि उनके उत्पाती हो सकने की अधिक संभावना होती है, और उन्हें अधिक मनमौजी, तरंगी, गरम-मिजाजी व गुल-गपाड़िया नहीं होना चाहिए।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट हो जाना चाहिए कि भाषण प्रारंभ करते समय वक्ता जब कहता है 'लेडीज़ एंड जैन्टलमैन' तो यह उक्ति भी संस्कृति में ही पूरी

की पूरी है।

पुरुषों के सीमित जनसमूह को, उदाहरणार्थ किसी समिति के सदस्यों को जब कोई व्यक्ति सम्बोधित करता है तो वह सामान्यतः कहता है 'ऑनरेबल सर्स' (Honourable Sirs), यह स्पष्टतः 'आदर-बल श्री' है।

स्वयं 'कमेटी' (Committee) शब्द विशुद्ध संस्कृत 'समिति' शब्द दिखाई दे जाता है यदि 'सी' अंगरेज़ी अक्षर की वर्ण-गत ध्वनि 'सी' ही की जाए, 'क' नहीं।

'कुक्कु' (Cuckoo) शब्द संस्कृत का 'कोकिला' शब्द है। 'क्रो' (Crow) 'काकः' है। 'आउल' (Owl) संस्कृत का 'उलूक' है।

'प्रोफ़ेट' (Prophet) संस्कृत-शब्द 'प्रपत' अर्थात् गिरा है (आकाश से धरती पर)। यह 'प्रेषित' भी हो सकता है (अर्थात् आकाश से भेजा गया संदेश-वाहक)।

अंगरेज़ी शब्द 'ट्रुथ' (Truth) और अन-ट्रुथ (Un-truth) में से यदि 'ट' (टी) निकाल दें तो उनको संस्कृत के 'ऋत' और 'अनृत' शब्दों के रूप में सहज ही पहचाना जा सकता है।

'न्यूज़' (News) शब्द को प्रायः मनमौजी व संकोचपूर्वक ढंग से यह कहकर स्पष्ट किया जाता है कि यह 'एन' (N – North, उत्तर दिशा), 'ई' (ईस्ट—East, पूर्व दिशा) 'डब्ल्यू'(W – West, पश्चिम दिशा) और 'एस' (S – South, दक्षिण दिशा) से बना हुआ शब्द है। स्पष्ट है, यह ग़लत व भ्रामक स्पष्टीकरण है। पहली बात यह है कि स्पष्टीकरण में बताया गया क्रम न तो सीधा और न ही उल्टा है, अपितु बे-तरतीब है। दूसरी बात यह है कि ऊपर व नीचे की दिशाओं—अर्थात् आकाश और पाताल— के सम्बन्ध में कुछ कहा ही नहीं है, यद्यपि अंतरिक्ष-यात्राओं और पुरातत्त्वीय-उत्खनन जैसी वे दिशाएँ भी समाचार प्रदान करने की महत्त्वपूर्ण कुंजियाँ हो सकती हैं। वे निश्चित रूप से समाचार-स्रोत हैं।

वास्तविक व्याख्या इसके संस्कृत-मूल में है। 'न्यू' (New), 'नोवो' (Novo), नौवेल्ले (Nouvelle) जैसे फ्रैंच शब्दों का उद्गम संस्कृत-शब्द 'नव' से है। अंतिम अक्षर 'एस' (स) उसका उच्चारण 'जे' (ज, नव—नया) होता है वह संस्कृत-धातु 'ज' है जिसका अर्थ जन्मा, सृजित अथवा अंकुरित हो गया है। अतः 'न्यूज़' का अर्थ उस नवीन घटना, बात से है जो पहले ज्ञात न थी।

पैदाइश के लिए 'जन्म' संस्कृत-शब्द है जिससे शब्दों की एक बड़ी संख्या बन गई है जैसे जेनेसिस (Genesis), जेनेटिक (Genetic), जाइनेकॉलॉजी (Gynaecology), जर्मिनेट (Germinate), जेनेरेट (Generate), प्रोजिनी (Progeny), प्रोजिनिचर (Progeniture), प्रोजीनिटर (Progenitor) और प्रोजिनिटिव (Progenitive)।

तदनुसार 'निधन' के लिए 'मृत्यु' शब्द से भी अनेक भाषाओं में पर्याप्त संख्या में शब्द बन गए हैं जैसे (मुस्लिमों द्वारा प्रयुक्त) मौत, मोर्ग (Morgue), मोरचुअरि (Mortuary), मोरटम (Mortem) आदि।

संस्कृत-शब्द कौपीन से इस्लामी शब्द 'कफ़न' और ईस्लाई शब्द 'कॉफिन' बना है।

'नेमेसिस' संस्कृत के शब्द 'नामशेष' का अपभ्रंश उच्चारण है। इसका अर्थ मात्र नाम में ही शेष रह जाना है।

आइए, हम अब 'केनल' (Kennel) और केनाइन (Canine) शब्दों पर दृष्टिपात करें। ये उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि किस प्रकार 'सी' अंगरेज़ी अक्षर अनेक बार 'के' (क) के समान ही उच्चारण किया जाता है। किन्तु इन शब्दों के संस्कृत-मूल की ओर देखते हुए कहा जा सकता है कि इन दोनों शब्दों को अंगरेज़ी के 'सी' अक्षर से ही शुरू होना चाहिए तथा 'सी' को अपनी मूल 'सी' (स) ध्वनि ही रखनी चाहिए—'क' उच्चारण नहीं। कुत्ते के लिए संस्कृत शब्द 'श्वान' है। अतः 'केनाइन' और 'केनल' दोनों अंगरेज़ी शब्द मूल रूप में संस्कृत 'श्वानाइन' और 'श्वानल' शब्दों के क्रमशः रूप हैं।

'कोकून' (Cocoon) संस्कृत का 'कौशून' शब्द है।

मिथ (Myth) संस्कृत-शब्द 'मिथ्या' अर्थात् झूठा से है। 'सुपर' (Super) विकृत संस्कृत-शब्द 'सुपरमा' है जो अन्यों की तुलना में पर्याप्त अथवा बहुत अधिक ऊपर, श्रेष्ठ होने का द्योतक है। अतः 'सुप्रीम कोर्ट' उक्ति संस्कृत 'सुपरमा-कोर्ट' है अर्थात् वह विधि-न्यायालय जो अन्य न्यायालयों से काफी ऊँचा, ऊपर है। शाब्दिक दृष्टि से, यह उस सुरक्षात्मक दीवार का द्योतक है जो अन्य विधि-न्यायालयों अर्थात् न्यायिक भवनों की दीवारों से ऊँची है।

'लांग' (Long) संस्कृत-शब्द 'लम्ब' है। 'प्लम्ब' (Plumb) और 'प्लूमेट' (Plummet) शब्द उसी संस्कृत-धातु से बने हैं।

'डेसीमल' (Decimal) संस्कृत-शब्द 'दशमलव' है जो दसवें भाग के

बिन्दु का द्योतक है।

'थर्स्ट' (Thirst) संस्कृत-शब्द 'तृष्णा' से व्युत्पन्न है। 'स्वेट' (Sweat) और 'स्वेटर' (Sweater) शब्द संस्कृत के 'स्वेद' और 'स्वेदर' शब्द हैं।

'फुट' (Foot) के लिए संस्कृत के 'पाद' शब्द के अंगरेज़ी भाषा में व्यापक प्रयोग हैं।

संस्कृत-शब्द 'पाद' अपने मूल उच्चारण में ही अंगरेज़ी भाषा में व्यापक रूप में प्रयुक्त हुआ है। उदाहरण के लिए 'पोडियम' (Podium) अर्थात् संस्कृत में 'पादीयम्', 'पेडेस्ट्रीयन' (Pedestrian) संस्कृत में 'पादचर' है। 'ट्रिपाड' (Tripod) संस्कृत में 'त्रिपाद' है। 'पैडस्टल' (Pedestal) संस्कृत में 'पादस्थल' है।

अंगरेज़ी शब्द 'लैटर' (Letter) में 'पैटर' अर्थात् संस्कृत भाषा का 'पत्र' देखा जा सकता है। तथ्य रूप में तो 'पेपर' (Paper) शब्द की वर्तनी भी 'पतर' (Pater) की जाए, तो इसे 'पत्र' अर्थात् 'पत्ता' पहचाना जा सकता है; चूँकि पहले-पुराने युगों में सूखे भोज और ताड़ के पत्र (पत्ते) लेखन के काम आते थे, इसलिए पुस्तक के पृष्ठों को 'लीव्ज़' अर्थात् पत्ते, अर्थात् 'पत्र' कहते हैं।

'अत्ति' का संस्कृत भाषा में अर्थ है 'वह खाता या खाती है'। 'अत्ति' और 'ईट' (Eat) में उस समरूपता से पाठक समझ सकता है कि संस्कृत-भाषा से किस प्रकार अंगरेज़ी भाषा ने शब्दों की (विपुल मात्रा में) व्युत्पत्ति की है।

'बी' (Be) संस्कृत का 'भव' शब्द है।

'टाउन' (Town) संस्कृत-शब्द 'स्थान' अर्थात् जगह अर्थात् इलाका, क्षेत्र है। अंगरेज़ी शब्द 'स्टेशन' (Station) का भी वही संस्कृत-मूलोद्गम है।

'प्लेज़ेन्ट (Pleasant) अंगरेज़ी-शब्द संस्कृत भाषा का 'प्रशान्त' शब्द है जो सुखकर गांभीर्य का द्योतक है।

संस्कृत में 'रमणीय' वह है जो तल्लीनतापूर्वक सम्मोहक, आकर्षक हो। उक्त संस्कृत-शब्द ने सिनेरामा (Cinerama), पेनोरामा (Panorama) जैसे अनेक शब्दों को जन्म दिया है। रोंगटे खड़े कर देनेवाले आकर्षण या सम्मोहन के द्योतक 'रोमान्च' संस्कृत-शब्द ने अंगरेज़ी के रोमान्स (Romance) और रोमान्टिक (Romantic) जैसे शब्दों के निर्माण का अवसर प्रदान किया है।

'म्युनिसिपैलिटी' (Municipality) शब्द तीन संस्कृत-शब्दों 'मानुस-पाल-इति' का योग है अर्थात् वह संख्या जो मानव-प्राणियों (अर्थात्

स्थानीय जनसंख्या) का लालन-पालन करती है। संस्कृत में 'मनुष्य' शब्द का अर्थ मानव-प्राणी है। 'पाल' 'लालन-पालन' का अर्थ-द्योतन करता है।

संस्कृत-शब्द 'द्वौ' अंगरेज़ी वर्तनी में 'टू' (Two, तौ) लिखा जाता है। उसी प्रकार शब्द 'दश' (अर्थात् टैन, Ten) भी अंगरेज़ी में काफ़ी प्रयोग में आता है जैसे 'डिकेड' (Decade), डेसीमेट (Decimate) और डेसिमल (Decimal) में। संयोग, जोड़ 10 + 2 = 12 को 'द्वादश' बोला जाता है। इससे अनेक अंगरेज़ी शब्द बने हैं, जैसे डुओ-डेसिमल (Duo-decimal – बारह की गणना में आगे गिनना), डुओ-डेसिमो (Duo-decimo) पुस्तक-आकार जिसमें प्रत्येक पन्ना मुद्रण-पत्रक का 1/12 भाग होता है, डुओ-डेनारी (Duo-Denary) अर्थात् बारह के संपुट में, डुओ-डेनम (Duo-denum, पेट = Stomach के नीचे छोटी आँत का पहला भाग) नाम पड़ने का कारण यह है कि लम्बाई में यह 12 इंच का होता है।

अंगरेज़ी शब्द 'ऐस' (Ass) अर्थात् गधा संस्कृत-शब्द 'अश्व' (अर्थात् घोड़ा) से बना है क्योंकि कुछ क्षेत्रों में गधा घोड़े के समान ही काम करता है।

चार अक्षर का प्रचलित अंगरेज़ी श्राप व निन्दासूचक अपशब्द 'डैम' (Damn) संस्कृत का शब्द 'दमन' है जिसका अर्थ पीसना अथवा दबा देना है।

अनुनय-विनय भाव की प्रदर्शक अंगरेज़ी शब्दोक्ति 'प्लीज़' (Please) या 'बी प्लीज़्ड (Be pleased, टु डू सच एंड सच थिंग)' संस्कृत का 'प्रसीद' शब्द है क्योंकि अंगरेज़ी और संस्कृत-भाषाओं में 'आर' (र) और 'एल' (ल) ध्वनियाँ प्रायः आपस में स्थान-परिवर्तन कर लेती हैं।

खगोल-शास्त्र की गणनाओं में वर्ष में एक अधिक मास की गिनती की जाती है, जो सामान्य रूप में प्रत्येक तीन वर्ष बाद सूर्य और चन्द्र-वर्षों के मध्य के अन्तर का समायोजन करने हेतु की जाती है। उक्त 'अधिक मास' को 'इन्टर-केलारी' शब्द से सम्बोधित करते हैं। वह संस्कृत-शब्द अन्तर्-काल-रि' है अर्थात् (वह 'मास' जो एक विशिष्ट कालावधि में) समय का समायोजन करने के लिए गणना-हेतु अंकित, आकलित किया गया है।

'काटने' या 'मार डालने' का द्योतक संस्कृत-शब्द 'छिद' अंगरेज़ी भाषा में व्यापक स्तर पर उपयोग में लिया गया है। तथ्य तो यह है कि सुई-साइड, पैट्रीसाइड, मैट्रीसाइड (Suicide, Patricide, Matricide) जैसे शब्द पूरी तरह संस्कृत-भाषा में ही हैं। इनसैक्टीसाइड, पैस्टीसाइड (Insecticide,

pesticide) जैसे आधुनिक शब्द भी उसी रीति के अनुसार बनाए गए हैं।

'रामरॉड, राम्मिंग और रामशैकल' (Ramrod, Ramming, Ramshackle) जैसे शब्द भगवान् राम के अधिनायकत्व में रामायण-सम्बन्धी युद्ध में कार्य-कलाप की स्मृति दिलाते हैं।

'कम्यून' (Commune) शब्द पूरी तरह 'समूह' के रूप में संस्कृत-शब्द मूलतः प्रकट हो जाता है यदि अंगरेज़ी अक्षर 'सी' का उच्चारण 'क' के स्थान पर 'सी' ही किया जाए। संस्कृत-शब्द 'समूह' का अर्थ वर्ग, इकट्ठे लोग हैं।

इसी से व्युत्पन्न शब्द 'कम्युनिस्ट' (Communist) पूरी तरह संस्कृत भाषा का 'समूहनिष्ठ' शब्द है जहाँ 'निष्ठा' प्रत्यय स्वामिभक्ति, राजभक्ति, लगाव-समर्थन आदि का अर्थ-द्योतक है। उस भावना की दृष्टि से संस्कृत में 'कम्यूनिस्ट' (समूहनिष्ठ) का अर्थ वह व्यक्ति है जो समूह-सिद्धान्त को मानता, उसका पालन करता है।

इसी प्रकार 'कम्यूनिज़्म' (Communism) और कम्यूनिटी (Community) शब्द भी पूरी तरह संस्कृत ही हैं क्योंकि उनके अंत्य-पद 'स्म' और 'इति' भी संस्कृति के ही हैं।

हम इस पुस्तक में ही किसी स्थान पर भलीभाँति स्पष्ट कर चुके हैं कि किस प्रकार अंगरेज़ी का 'फुट' शब्द संस्कृत का 'पाद' शब्द है। अतः संस्कृत का 'पाद-पथ' शब्द अंगरेज़ी में 'फुट-पाथ' है। 'पाथ' अंगरेज़ी और संस्कृत दोनों भाषाओं में ही सामान्य है यद्यपि उच्चारण में थोड़ा-सा अन्तर है। संस्कृत में इसे 'पथ' कहा जाता है जबकि अंगरेज़ी में यह 'पाथ' बोला, उच्चारण किया जाता है।

संस्कृत-शब्द 'ऊक्षस' अंगरेज़ी में 'ऑक्स' (Ox) के रूप में प्रयुक्त होता है जबकि इसका समानक, पर्यायवाची शब्द 'बलीवर्द' अंगरेज़ी में 'बुल' (Bull) और 'बुलक' (Bullock) के रूप में विद्यमान है।

फ्रेंच भाषा का 'बुलेवर्द' (Boulevard) शब्द, जो चौड़ी सड़क/मार्ग का द्योतक है, प्राचीन बैलगाड़ी की दो-बैलों की चौड़ाई से व्युत्पन्न प्रतीत होता है।

फ्रेंच शब्द 'रू' (Rue) और इसका अंगरेज़ी पर्याय रोड (Road) संस्कृत के 'रथ्य' शब्द से उत्पन्न है। 'रथ्य' का अर्थ है 'रथ-यातायात के लिए पर्याप्त चौड़ी सड़क'।

'कैरेक्टर' (Character) शब्द संस्कृत के शब्द 'चारित्र्यम्' से बना है।

'राग' संस्कृत-शब्द का अर्थ (किसी भी प्रकार की) उत्कट कामना है। यह वही शब्द है जो अंगरेज़ी में 'रेज' (Rage) और 'रैथ' (Wrath) के रूप में प्रयोग में आ रहा है।

अंगरेज़ी 'ऐन्गर' (Anger) शब्द संस्कृत-भाषा के 'अंगार' शब्द से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ होता है 'दहकता हुआ लाल कोयला'।

'सत्रप' अंगरेज़ी-शब्द संस्कृत के 'क्षेत्रप' शब्द का अपभ्रंश उच्चारण है। संस्कृत में 'क्षेत्र' शब्द एक सीमांकित भू-भाग, इलाके का द्योतक है। अंतिम अक्षर 'प' एक संरक्षक या प्रशासक का अर्थ-सूचक है। इस प्रकार 'क्षत्रप' लोग वैदिक प्रशासन में क्षेत्र-सेनापति व संग्राहक थे।

विश्व-व्यापी वैदिक साम्राज्य के अंतर्गत प्रशासक अर्थात् विशिष्ट क्षेत्रों या ज़िलों के क्षेत्र-नायकों को 'क्षत्रप' कहा जाता था। चूँकि उनको नियम-पालक और कठोर होना पड़ता था, इसलिए आधुनिक अंगरेज़ी शब्द 'सत्रप' के बारे में उक्त धारणा बन गई है।

'ऐंग्लो-सैक्सन' शब्दावली संस्कृत की ही है जो 'अंगुल-स्थान' अर्थात् 'अंगुल-लैंड' अर्थात् इंग्लैंड के शक-कुल के वंशजों की द्योतक है।

'डिवाइड' (Divide) शब्द संस्कृत का 'द्वि-विध' है। 'इंगलिश' शब्द संस्कृत का 'अंगुलिश' है। संस्कृत अंत्य-पद 'इश' अंगरेज़ी भाषा में खूब प्रयोग में लिया जाता है जैसा अंगरेज़ी में 'चाइल्डिश' शब्द के संस्कृत-समानक 'बालिश' शब्द से दर्शाया जा चुका है।

चूँकि इंग्लैंड अंगुल-स्थान अर्थात् अंगुल-लैंड है, इसलिए इसकी भाषा अर्थात् बोलने, वाणी का माध्यम अंगुलिश अर्थात् इंग्लिश है।

'X-मस' बहुत ही ग़लत समझा गया शब्द है। कोई भी व्यक्ति, मात्र परिवर्तन के लिए ही पूछ सकता है कि इसको 'Y-मस' या 'Z-मस' क्यों नहीं कहकर पुकार सकते?

उत्तर यह है कि संस्कृत में 'मास' शब्द का अर्थ एक महीना होता है। इसी प्रकार चिह्न 'X' रोमन संख्या का 10 (दस) है। अतः 'X-मस' 10-वें मास का सूचक है और स्वयं इससे किसी भी प्रकार यह भाव प्रकट नहीं होता कि यह किसी समारोह या त्यौहार, पर्व का प्रतीक है।

संयोगवश, 'दिसम्बर' शब्द भी संस्कृत का 'दशम्बर' शब्द है जिसका अर्थ आकाश—अम्बर का दसवाँ भाग या राशि-चक्र का 10-वाँ हिस्सा है। अतः

'दिसंम्बर' शब्द में वही भाव व्यक्त किया गया है जो 'X-मस' ने आकृति द्वारा इंगित किया है। दिसम्बर 10-वाँ मास, महीना हुआ करता था जब प्राचीन वैदिक परम्परा के अनुसार नव वर्ष मार्च मास से प्रारंभ होता था। यही कारण है कि सप्तम्बर, अष्टम्बर, नवम और दशम अम्बर शब्द क्रमशः 7-वें, 8-वें, 9-वें और 10-वें मास के द्योतक थे यद्यपि आधुनिक पंचांग में वे 9-वें, 10-वें, 11-वें और 12-वें मास के सूचक उस क्षण/समय से बन गए जब जनवरी मास को बिना किसी कारण, मनमौजी रूप में प्रथम महीना बना दिया गया, घोषित कर दिया गया।

वैदिक संस्कृत-परम्परा में ज्ञान प्राप्त करना प्रत्येक मानव-प्राणी के लिए महत्त्वपूर्ण आदर्श निर्धारित किया गया था। संस्कृत धातु 'ज्ञ' से इग्नोरैन्स (Ignorance), इग्नोरैमिक (Ignoramic), इग्नोर (Ignore), इग्नोरैमस (Ignoramus), इग्नोमिनी (Ignominy) जैसे बहुत सारे शब्द बने हैं।

'इग्नोरैमस' (Ignoramus) शब्द पूर्णरूप से संस्कृत का है क्योंकि इसमें 'रामा' प्रत्यय एक औसत अज्ञानी व्यक्ति के लिए प्रयुक्त हुआ है। भारत में इसका समानान्तर उदाहरण प्रचलन में है जहाँ 'भोलाराम' शब्द का अर्थ उस सीधे-साधे व्यक्ति से होता है जो अन्य लोगों द्वारा सरलता से बहकाया या मार्ग-भ्रष्ट किया जा सकता है।

'सेन्ट' (Cent) संस्कृत-शब्द 'शत' है।

'सिरेमिक' (Ceramic) यह संस्कृत 'करभः' (यानी कीचड़) से बनी वस्तुएँ इस अर्थ का है।

'बेद' (Bathe) शब्द मूल संस्कृत में 'बाड्' (स्नान करना) है।

'बभ्रु' का 'ब्राउन' (Brown) रंग हुआ है।

'फ़ॉसफ़ोरस' (Phosphorus) 'भा-भृ' (चमकनेवाला)—ऐसा बना है।

'प्योर' (Pure) पुनीत का अपभ्रंश है।

संस्कृत-भाषा में 'प्रतोला' शब्द नगर या महल के विशाल द्वार का अर्थ-द्योतक है। वही आंग्ल-भाषा में 'पोर्टल' (Portal) कहलाता है।

'डोम' (Dome) प्रायः मुस्लिम नमूना समझा जाता है। उक्त धारणा को झकझोरना आवश्यक है क्योंकि इस्लामी वास्तुकला नामक कोई चीज़ है ही नहीं। विश्व-भर में जिन भव्य ऐतिहासिक भवनों का निर्माण-श्रेय मुस्लिमों को दिया गया है वे सभी हथियाई सम्पत्ति हैं जिनमें मुस्लिमों ने मज़ारें बना दीं और

इस्लामी शब्दों को घड़वा दिया। उससे विद्वानों ने यह ग़लत धारणा बना ली कि वे तथाकथित मस्जिदें और मकबरे मुस्लिमों द्वारा ही बनाए गए थे।

मुस्लिमों के पास न तो वास्तुकला से सम्बन्धित कोई श्रेष्ठ, उत्कृष्ट ग्रन्थ ही हैं और न ही स्वयं के पास अपने माप-तोल की कोई इकाइयाँ। ऐसा समुदाय, समाज कभी भी महान् भवन-निर्माता नहीं हो सकता।

विशिष्ट 'डोम' (गुम्बद) शब्द पर विचार करते समय हम सर्वप्रथम यही बता देना चाहते हैं कि यह शब्द स्वयं ही संस्कृत वैदिक मूल का है।

गुम्बज/गुम्बद का आकार उल्टे, औंधे रखे हुए घड़े का होता है। संस्कृत भाषा में घड़े को 'कुंभ' कहते हैं। चूँकि गुम्बद की कल्पना, धारणा घड़े अर्थात् कुंभ से जन्मी, उत्पन्न हुई है, इसलिए यह कुंभ-ज कहलाती है। इसी कारणवश मुस्लिम इसे गुम्बज कहते हैं।

यूरोपीय भाषाओं में संस्कृत शब्द 'कुंभ' को सहज ही कौम्ब अर्थात् डौम्ब और फिर 'डोम' बोलने लग गए।

गन्ने के रस से गुड़ और शर्करा बनाने की विधि वैदिक परम्परा की ही है। इसी कारण, विश्व-भर में शुगर (Sugar), सैक्रिन (Secrene), सक्रोस (Sucrose) आदि शब्द विविध भाषाओं में इस 'शर्करा' शब्द के ही अपभ्रंश हैं।

रस निकालने के पश्चात् गन्ने के जो सूखे भाग रह जाते हैं उसे 'बेगसे' (Bagasse) अंगरेज़ी में कहते हैं। वह संस्कृत 'बाक्स' का अपभ्रंश है। कोई भी फल आदि खाने के पश्चात् उनके छिलके आदि जो शेष रह जाते हैं, वे 'बाक्स' कहलाते हैं। बाकी, बकाया आदि शब्द उसी के रूप हैं।

शिवाजी के गुरु समर्थ रामदास के 'दासबोध' नामक धर्मकाव्य-ग्रंथ दशक-6, समास-3, पंक्ति-9 में 'बाक्स' शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया गया है।

संस्कृत-धातु 'रम्' का अर्थ तल्लीन, तन्मय हो जाना है। 'रामायण' महाकाव्य के नायक राम का व्यक्तित्व ऐसा तन्मयकारी था कि जो उनके सम्पर्क में आता था, वही उनमें लीन हो जाता था। उक्त संस्कृत-धातु 'रम्' ही अनेकों अंगरेज़ी शब्दों की धुरी है यथा 'सिनेरामा' 'पनोरामा' आदि। इन्हीं का समानान्तर शब्द भारतीय भाषाओं में 'मनोरम/मनोरमा' है अर्थात् वह व्यक्ति, वस्तु या दृश्य जिसमें मन रम जाता है, तल्लीन-तन्मय हो जाता है।

इस प्रकार संस्कृत-भाषा में हज़ारों छोटी-छोटी धातुओं के अक्षरों की चमत्कारी, आधारभूत संरचना उपलब्ध है जिनसे लाखों शब्दों का निर्माण किया जा सकता है।

इस प्रकार, संस्कृत 'गम्' का अर्थ 'जाना' है जबकि 'आगम' का अर्थ 'आना' है। अंगरेज़ी में उपसर्ग 'आ' नहीं रहा और शेष 'गम्' को 'कम' (Come) कहा जा रहा है क्योंकि संस्कृत का 'गौ' शब्द अंगरेज़ी भाषा में 'काऊ' (Cow) उच्चारण किया जाता है।

'नेम' (Name) संस्कृत का 'नाम' है। सामान्य रूप में लोगों को ज्ञात नहीं है कि रोमन लोगों के अधीन मासों-महीनों के नाम जनउआरियस (Januarius), फैबरुआरियस (Februarius) आदि थे। वहाँ प्रयुक्त अंतिम अक्षर 'अस' ईश्वर के अर्थ-द्योतक संस्कृत 'ईश' का सूचक है।

'जनउआरियस' शब्द संस्कृत यौगिक शब्द 'गण-राय-ईश' का विकृत उच्चारण है। यह गज-मस्तक, गजानन भगवान् गणेश का नाम है जिनके नाम पर रोमन लोगों ने प्रथम मास का नाम 'जनवरी' रख दिया। फैबरुआरियस प्रवरेश (अर्थात् ऋषियों के भगवान्) का विकृत उच्चारण है। इसी प्रकार अन्य नाम हैं।

संस्कृत-शब्द 'लक' अंगरेज़ी भाषा में 'लाइस' (Lice) के रूप में विद्यमान है। वहाँ यदि 'सी' अक्षर का उच्चारण 'के' (क) ध्वनि में करें तो 'लक' और 'लाइस' (अर्थात् 'लाइक') के मध्य समरूपता पर्याप्त रूप में स्पष्ट हो जाएगी।

संस्कृत में 'अंकन' शब्द लिखने, उत्कीर्ण करने, अक्षर खोदने, मोहर लगाने और निशान लगाने के लिए प्रयुक्त होता है। अतः जो द्रव्य उक्त कार्यों में सहायता करता है वह 'इंक' है। इस प्रकार, 'इंक' (Ink) शब्द भी संस्कृत-परिवार का ही है।

मनु वैदिक परम्परा में मानव-जाति का प्रजनक है। इसीलिए उसके वंशज मानव कहलाते हैं। उक्त संस्कृत-शब्द 'मानव' का टेढ़ा-मेढ़ा प्रथम भाग अंगरेज़ी में मैन (Man) है।

'काक-टेल' (Cock-tail) मूलरूप में संस्कृत-शब्दावली 'काक-तालीय' है जो वैदिक तर्क का एक नियम है। संस्कृत में 'काक' का अर्थ कौआ है। दूसरे शब्द 'ताल' का अर्थ 'वृक्ष की शाखा/फल' है। अतः वैदिक तर्क-पद्धति में 'काक-तालीय' शब्द का अर्थ संयोगवश; अकस्मात् परिस्थितियों का मिल जाना

है जिनसे कोई घटना घटित हो जाए, जैसे कोई कौआ वृक्ष की शाखा पर आकर बैठा और संयोगवश उसके बैठते ही, तत्क्षण, शाखा/फल चरमराकर टूट गिरा। उसी प्रकार, अंगरेज़ी शब्द 'काक-टेल' (जो संस्कृत-शब्दावली 'काक-तालीय' का अपभ्रंश उच्चारण है) विभिन्न पेयों का संयोगवशात् मिश्रण है।

24
ईसाइयों में व्यक्तिवाचक नाम

चूँकि सभी यूरोपीय वर्तमान काल में ईसाई हैं, इसलिए हम मात्र ब्रिटिश नामों तक सीमित रहने की अपेक्षा इस अध्याय में सभी ईसाइयों के व्यक्तिवाचक नामों पर ही विचार-विमर्श कर लेना चाहते हैं।

सहज बातचीत करते समय जब मैंने यूरोपीय मित्रों से पूछा कि उनके व्यक्तिवाचक नामों का अर्थ क्या है, तब उनमें से कई बन्धुओं ने बताया कि उनके नामों के कोई विशिष्ट अर्थ नहीं है।

यह कोई समाधानकारी उत्तर नहीं है। मानव-कंठ, प्राणी के मुख से बाहर आनेवाली प्रत्येक ध्वनि,—जैसे प्रत्येक आर्तनाद, आह, कराह, घुरघुराहट, हँसी, दबी हुई हँसी या कानाफूसी का कोई-न-कोई विशिष्ट अर्थ होता है।

यूरोपीय बन्धु-गण अपने नामों के अर्थों का स्रोत भूल गए हैं क्योंकि जब से वे ईसाई मतावलम्बी बना दिए गए, वे अपने नामों के साथ वैदिक, संस्कृत-स्रोत का सूत्र, सम्पर्क खो बैठे।

यूरोपीय भाषा-शास्त्र के विद्वानों को इसके बाद अपने व्यक्तिवाचक नामों के अर्थ खोजने का प्रयास तो करना ही चाहिए। नीचे कुछ मार्गदर्शन, दिशा-निर्देश प्रस्तुत हैं।

'मैरी' और 'मरियम' नाम वैदिक माता, देवी मरिअम्मा के नाम हैं। प्रत्यय 'अम्बा' अर्थात् 'अम्मा' माता का अर्थ-द्योतक है। उसका नाम 'मैरी' है। दक्षिण भारतीयों के 'मरिअम्मा मंदिर' बहुत, काफी बड़ी संख्या में हैं। भारत में महाराष्ट्रीय समाज भी 'मरिआई' (अर्थात् माता मैरी) की पूजा करता है। चूँकि जीसस को ईश-पुत्र कहा जाता है, इसलिए उसकी माता का नाम 'मैरी' निश्चित कर दिया गया है। प्रसंगवश बता दिया जाए कि जीसस कोई ऐतिहासिक व्यक्ति न होकर मात्र काल्पनिक अस्तित्व ही है। उसका कल्पित नाम जीसस क्राइस्ट संस्कृत-भाषा के नाम 'ईशस कृष्ण' अर्थात् भगवान् कृष्ण का अपभ्रंश उच्चारण है।

'अन्न' अर्थात् 'अन्ना' खाद्यान्नों की प्रचुरता की प्रतीक वैदिक देवी 'अन्न-पूर्णा' का संक्षिप्त रूप हैं। विशुद्ध, शास्त्रीय संस्कृत उच्चारण में कुछ शिथिलता के कारण उक्त नाम से ही 'अन्ना पेरिना' नाम चल पड़ा।

'क्रिस्टीना' नाम स्पष्टतः 'कृष्णा' से बना है जो भगवान् कृष्ण की महिला भक्त अथवा अनुयायी अथवा कौटुम्बिक-जन का द्योतक है।

'एलिज़ाबेथ' (Elizabeth) विधि-जनक मनु की पुत्री इला की वंशजा अर्थात् 'इला-जा-वती' नाम है।

'विक्टोरिया' (Victoria) संस्कृत-पर्यायवाची शब्द 'विजयश्री' का अपभ्रंश है।

'रोमन' (Roman) रमण (या रामन) नाम है जो राम के भक्त या अनुयायी का द्योतक है।

'क्रिश्चियन' (Christian) कृष्णन् अर्थात् कृष्ण का अनुयायी है।

'कौन्स्टैन्टाइन' (Constantine) नाम को इसके दो संस्कृत-अंशों में विभाजित किया जा सकता है। 'कौन्स' नाम है कंस का जबकि 'टैन्टाइन' दैत्यन शब्द है। दैत्य-कुल का (राजा) कंस 'महाभारत' के पात्र भगवान् कृष्ण का परम विरोधी, घोर शत्रु था।

वैदिक दैत्य-कुल अर्थात् दैत्यों से टाइटन, टाइटनिक (Titan, Titanic) जैसे शब्दों की उत्पत्ति हुई है क्योंकि राजा कंस अर्थात् 'कौन्स' उसी कुल से संबंधित था। 'कौन्स्टैन्टाइन' नाम, इस प्रकार वैदिक संस्कृत-मूल का है।

यूरोप में उक्त नाम सर्व-सामान्य होना ईसाइयत-पूर्व के यूरोप में महाभारत और पुराणों के अध्ययन का संकेतक है।

'जार्ज' (George) नाम एक श्रद्धेय प्राचीन वैदिक ऋषि 'गर्ग' का नाम है।

'अगस्त्यस्' एक अन्य सुविख्यात वैदिक ऋषि थे जिनका नाम यूरोपीय लोगों में 'ऑगस्टस' के नाम से अभी भी प्रचलित व विद्यमान है। उन्हीं के नाम पर 'ऑगस्ट' (अगस्त) मास का नाम पड़ा है। उनका अतिप्रभावी, आकर्षक व्यक्तित्व था। इसका स्मृति-विशेषण 'ऑगस्ट' (August) अर्थात् भव्य, महान्, प्रतापी, सम्मानसूचक शब्द में आज भी संरक्षित है।

'जेम्स' (James) येम्स अर्थात् 'यमस' का अपभ्रंश है। 'यमस'—यम मृत्यु का वैदिक देवता है और पाताल लोक का राजा।

'सिबल या सिबली' (Sibyl-Sybylle) शब्द 'शिव' से बना होना संभव है जो शिव मंदिर में अनुचरी या पुजारिन हो।

'अब्राहम' (Abraham) सृष्टिकर्ता के अर्थद्योतक ब्रह्मा का अपभ्रंश उच्चारण है। मूल संस्कृत-नाम का प्रारंभिक अक्षर संयुक्त व्यंजन 'ब्र' होने के कारण, शास्त्रीय संस्कृत उच्चारण करने में अशिक्षित तथा अनभिज्ञ लोग इसका उच्चारण 'अब्राहम' नाम से करने लगे। ऐसा ही उदाहरण हिन्दी में 'स्नान' (नहाना) शब्द का है जिसे कुछ लोग 'अस्नान' उच्चारण करते रहते हैं।

ब्रह्मा पहला व्यक्ति है जो भगवान् विष्णु की नाभि से प्रकट हुआ। इसीलिए, ईसाई और यहूदी विद्या, जन-श्रुतियों में अब्राहम अर्थात् ब्रह्मा प्रथम देव-दूत, पैग़म्बर के रूप में स्मरण किया जाता है।

यूरोपीय लोगों में चला आ रहा कुलनाम ब्रह्मा अर्थात् ब्रह्म ब्राह्मण-वर्ग का द्योतक है। तदनुरूप संगत कुलनाम ब्रह्माय/ब्रह्मय भारत में भी चलन में है।

'मोज़ेज़' (Moses) नाम संस्कृत का 'महेश' नाम है जो 'महान् भगवान्' का अर्थ-द्योतक है। यहूदी लोग अर्थात् महाभारत-युग के यदु अर्थात् यादव लोग भगवान् कृष्ण और मोज़ेज़ की जीवन-गाथाओं से स्पष्ट है। कृष्ण तो वास्तविक नाम था जबकि महेश एक उपाधि या विशेषण-सूचक संज्ञा थी।

ओक अर्थात् ओक्स एक अन्य कुलनाम है जो अंगरेज़ों तथा भारत के हिन्दुओं में समान रूप से प्रचलित है। इसका कारण यह है कि संस्कृत-शब्द 'ओक्स' एक निवास, मकान या आश्रय-स्थल का द्योतक है। 'ओक' वृक्ष का यही नाम रखने का कारण भी यही है कि यह पक्षियों और जीव-जन्तुओं, पशुओं आदि जैसे जीवधारियों को आश्रय प्रदान करता है।

अनेक यूरोपीय देशों के साहित्य में रामायण महाकाव्य के अनेक प्रसंग, भिन्न-भिन्न अंशों में संकलित व अभी तक शेष, अक्षुण्ण हैं। 'वर्ल्ड वैदिक हैरिटेज' (वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास) शीर्षक, सचित्र, 1315-पृष्ठों के ग्रंथ में मैंने उक्त देशों के साहित्य से लम्बे-लम्बे उद्धरण प्रस्तुत किए हैं। वे सभी सिंह-हृदय रिचर्ड की कहानियाँ हैं। इससे यह स्वतः स्पष्ट है कि रिचर्ड नाम संस्कृत-नाम रामचन्द्र (अर्थात् राम) का ही ईसाई-अपभ्रंश है।

आयरलैंड में एक धर्माध्यक्ष राम था जिसने एक मकान बनाया था और उसे 'रामफोर्ट भवन' (Ramfort House) नाम दिया था। 'क्राइस्ट' कृष्ण के नाम का अपभ्रंश उच्चारण था। अतः क्रिस्टीना जैसे इससे व्युत्पन्न सभी नाम (या

शब्द) कृष्ण से ही व्युत्पन्न माने जाने चाहिएँ।

मुस्लिमों में दनियाल और ईसाइयों में डेनियल नाम संस्कृत-शब्द दानवल है जो दानव-कुल का वंशज है। 'दैत्य' दानव का समानक, पर्याय है। दैत्य अर्थात् दानव एक प्रमुख युद्ध-प्रिय वैदिक वंश, कुल था।

सभी यूनानी नाम संस्कृत-भाषा के हैं। सॉक्रिटीज़ (सुकरात, Socrates) सुकृतस् अर्थात् शुभ कर्मों का करनेवाला है। अरिस्टोटल (Aristotle) अरस्तू 'अरिष्ट-टाल' अर्थात् विपत्तियों को टालनेवाला एक देवता है। अलेक्जेन्डर (Alexander) सिकन्दर 'अलक्षेन्द्र' अर्थात् अदृश्य देवगण है। मेनेन्दर (Menander) 'मीनेन्द्र' अर्थात् मछलियों का स्वामी है। सेल्यूकस (Selucus) चालुक्य-वंश के वंशजों 'चालुक्यस' संस्कृत-शब्द का अपभ्रंश है। ग्रीस (यूनान, Greece) शब्द स्वयं संस्कृत-शब्द 'गिरीश' का गड-मड उच्चारण है। 'गिरीश' का अर्थ वह देश है जिसका स्वामी देवता ओलम्पस-शिखर पर स्थित है। यह भी ध्यान देने की बात है कि देश का सूचक शब्द 'ग्रीस' और उसी देश के निवासियों, देशवासियों का सूचक शब्द 'ग्रीक' भिन्न-भिन्न शब्द नहीं हैं यदि यह स्मरण रहे कि अंगरेज़ी अक्षर 'सी' (C) भी अनेक बार 'के' (क) ही उच्चारण किया जाता है। अतः ये दोनों शब्द देश और उसके निवासियों के द्योतक हैं जिसके देवगण पर्वत पर विराजते हैं।

'जॉन' (John) संस्कृत का शब्द 'युवान' है जिसका अर्थ 'युवा मानव' है जो बाद में जुवान (Juwan) उच्चारण किया गया और तत्पश्चात् 'जॉन' (John) होकर निर्जीव, कठोर मात्र रह गया।

'निकोलस' (Nicholas) 'नकुलस' है जो 'महाभारत' महाकाव्य में पाँच प्राण्डव-भ्राताओं में से एक है।

'डेबेन्हम' (Debenham) संस्कृत-शब्द 'देवन-धाम' है जिसका अर्थ 'देवताओं का धाम, देव-घर' है।

'मैकडोनल्ड' (Macdonald) और मैकमिलन (Macmilan) जैसे नामों में 'मैक' (Mac) प्रत्यय संस्कृत का 'महा' शब्द है जिसका अर्थ बड़ा या 'महान्' है।

जैक्सन (Jackson), पीटरसन (Peterson) जैसे नामों में 'सन' (Son) प्रत्यय संस्कृत (सूनुः) है जिसका अर्थ 'जैक का पुत्र' या 'पुत्र-जैक' और 'पीटर का पुत्र' या 'पुत्र-पीटर' है।

वाइकिंग मूल का एक ब्रिटिश कुलनाम 'ओरमे' (Orme) है। वाइकिंग-लोगों की भाषा में 'ओरमे' का अर्थ 'सर्प' होता है। उक्त संस्कृत 'उरग' अर्थात् 'उरंगम' है क्योंकि सर्प अपनी पसलियों के आधार पर चलता है। प्रसंगवश, 'सर्पेन्ट' (Surpent) शब्द भी पूरी तरह संस्कृत भाषा का ही है जिसका गुणार्थ यही है। संयोगवशात् यह भी प्रकट हो जाता है कि वाइकिंग-लोगों की भाषा भी विकृत, टूटी-फूटी संस्कृत ही थी।

वैदिक आयुर्वेद (चिकित्साशास्त्र) में 'मदात्याय' (Madatyaya) उस व्यक्ति का द्योतक था जो अधिक मद्य के प्रभाव में अर्थात् मदावस्था या नशे में, अधिक पिए हुए था।

उपसर्ग 'अ' ने इस अवस्था को नकार दिया या कुछ नरम, सरल कर दिया। परिणाम यह हुआ कि 'अ-मदात्यय' का अर्थ हो गया वह व्यक्ति जो अपनी सुध-बुध में, अपने होश-हवास में है अर्थात् नशे में नहीं है। खगोल-विज्ञान का रत्न 'जम्बु-मणि' अर्थात् 'अमेथिष्ट' (Amethyst) इस नाम से पुकारा ही केवल इसलिए जाता है कि जन-विश्वास के अनुसार यह मादक-द्रव्य की इच्छा, चाहना को ही नियंत्रित रखता या जड़ से समाप्त कर देता है। यह प्रदर्शित करता है कि शब्द 'अमेथिष्ट' संस्कृत-शब्द 'अमदात्यय' का गड़बड़ उच्चारण है।

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश ग़लत ही ग्रीक (यूनानी), लैटिन और फ्रांसीसी भाषाओं की 'धातुओं' पर रुक जाता है जब वह यह सूचित करता है कि 'मेथूस्को' (Methusko) शब्द या इसके विभिन्न रूपों का उन भाषाओं में अर्थ मद में, नशे में करना होता है, और 'अ' (A) का अर्थ 'नहीं' है।

यह अनुभव करने की आवश्यकता है कि संस्कृत-भाषा उन सभी भाषाओं से प्राचीन है, और यूरोप की भाषाएँ स्वयं ही संस्कृत की टूटी-फूटी, बिखरी प्रतिकृतियाँ हैं। अतः यह सदैव उचित होगा कि संस्कृत-स्रोत की ओर ध्यान दिया जाए।

संस्कृत-भाषा में 'मद्य' शब्द का अर्थ मादक पेय पदार्थ होता है। 'अति' का अर्थ है 'ज्यादा, अधिक'। अतः 'मदात्यय' का निहितार्थ मदावस्था, नशे में होना है। नकारात्मक प्रत्यय (अ), जो 'अमदात्यय' शब्द में है, ग़ैर-नशे का सूचक है। 'शराब' का अर्थ-द्योतक 'मेथु' शब्द स्वयं ही संस्कृत-शब्द 'मद्य' अर्थात् 'शराब' का अपभ्रंश उच्चारण है।

[कुलनाम 'ओरमे' और 'अमेथिष्ट' शब्द के संस्कृतमूलक होने की जानकारी प्रदान करने के लिए मैं अपने मित्र डॉक्टर एन० के० भिड़े का आभारी हूँ।]

उन्हीं के समान अन्य लोग भी, इसके पश्चात् अपने-अपने ज्ञान और अनुभव के आधार पर संस्कृतमूलक अंगरेज़ी शब्दों को खोजना शुरू करें जिससे इस पुस्तक में प्रदान किया गया केन्द्र निरन्तर विस्तृत होता जाए।

मुख्य अध्यापक डेबेन्हम द्वारा अपने पूर्व-उद्धृत पत्र में जिस प्रथा का उल्लेख किया गया है, ऑक्सफोर्ड शब्दकोश से संबंधित व्यक्तियों को भी चाहिए कि वे भी अंगरेज़ी-सहित सभी भाषाओं के लिए संस्कृत को ही आकर—मूलस्रोत-भाषा मानकर उसके शब्दों को खोजते रहने की पूर्व-प्रथा को जारी रखें।

डेविड (Devid) शब्द संस्कृत का 'देवी-द' शब्द है जिसका अर्थ 'देवी-प्रदत्त', देवी द्वारा दिया गया है।

जब मनुष्य इस पर विचारने, सोचने के लिए तैयार होता है, तब पृथ्वी पर सभी प्राणियों के जीवन-सहित सम्पूर्ण सृष्टि रहस्यपूर्ण चमत्कारों की एक शृंखला स्पष्ट दिख जाती है। यदि चमत्कारों की उक्त शृंखला के एक भाग को प्रारंभ करने के लिए मानवता पर परम कृपा के रूप में सर्वश्रेष्ठ ज्ञान के आदिस्वरूप, स्रोत की दृष्टि से पुस्तकाकार में वेद और उनकी भाषा संस्कृत ईश्वर की ओर से प्रदान किए गए हैं, तो उनको मात्र अविश्वसनीय कहकर ही क्यों अस्वीकार किया जाए?

ईसाई उग्रवादी धर्मावलम्बियों द्वारा ईसाइयत-पूर्व के सभी प्रकार के इतिहास को और 300 वर्षों बाद मुस्लिम कट्टर-वादियों द्वारा समस्त इतिहास को जान-बूझकर तथा योजना-बद्ध रीति से नष्ट-भ्रष्ट करने की प्रक्रिया ने विश्व को अपने वैदिक संस्कृत आश्रय-स्थल से सम्बंधित समस्त ज्ञान से वंचित कर दिया।

उक्त इतिहास के सर्वथा अज्ञान के कारण ही ऑक्सफोर्ड शब्दकोश-निर्माताओं का यह दम्भी, संकीर्णमना, आत्मतुष्टी-विश्वास बन गया है कि उनके द्वारा शब्दों की व्युत्पत्ति का निर्धारण उस मानव-भाषाशास्त्र के इतिहास के आधार पर तर्क-संगत, न्यायोचित है जिसे वे जानते हैं।

वे यह बात नहीं समझते कि इस्लाम और ईसाई मतावलम्बियों द्वारा रौंदे, पद-दलित देशों में जनता को अंतिम लगभग 1300 वर्षों के इतिहास का मात्र

आभास, ढोंग, बाह्य-प्रदर्शन ही दिखाया, पढ़ाया जाता है। मुस्लिम और ईसाई इच्छओं, सिद्धान्तों के अनुकूल बनाने के लिए उस दिखावे-मात्र को भी विकृत, तोड़ा-मरोड़ा जाता है। पूर्वकालिक लाखों-करोड़ों वर्ष प्राचीन वैदिक संस्कृति की असीम अवधि का उन्हें लेशमात्र ज्ञान भी नहीं है। अतः न केवल सभी शब्दकोशों का अपितु सभी इतिहासों का पूर्ण संशोधन भी अपेक्षित है।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक 'विश्व-इतिहास अकादमी' अथवा 'विश्व वैदिक धरोहर का विश्वविद्यालय' स्थापित किया जाए जिसके शोध-केन्द्र सभी राष्ट्रीय विश्व-राजधानियों में हों, जिससे उक्त इतिहास का पुनर्लेखन, पुनर्निर्माण हो सके। मैं आशा करता हूँ कि सभी पाठक इस उद्देश्य पर गंभीरतापूर्वक विचार करेंगे और इसके संवर्धन में सहायता करेंगे। विस्मृत वैदिक धरोहर को पुनः एक कर देने के सम्बन्ध में मानवता को शिक्षित करने से अधिक पुनीत, पुण्य-कार्य अन्य कुछ भी नहीं है।

परिशिष्ट

इस पुस्तक के प्रथम अध्याय में अंगरेज़ी भाषा-शास्त्र से मुख्यतः सम्बन्धित 15 समस्याओं का मैंने उल्लेख किया है।

किन्तु मानव-इतिहास और संस्कृति के प्रत्येक पक्ष से सम्बन्धित बहुत अधिक ऐसी असंख्य समस्याएँ, कठिनाइयाँ हैं जिनको पहचाना या सुनिश्चित भी नहीं किया गया है, और वे इसी कारणवश अभी तक सुलझाई नहीं गई हैं—उनके कोई समाधान नहीं खोजे गए हैं।

वे समस्याएँ विश्व के प्रबुद्ध वर्ग के लिए चुनौती हैं। अलग-अलग विद्वान्, शोध-संगठन तथा इतिहास-संस्थाएँ व अन्य सम्मेलन आदि उन समस्याओं को परखें, उनकी जाँच-पड़ताल करें जिनसे वे यह भलीभाँति हृदयंगम कर सकें कि इतिहास-शिक्षण और शोध की आधुनिक प्रचलित पद्धतियाँ विकृत, अत्यधिक असन्तोषजनक व असमाधानकारी हैं, तथा इतिहास व संस्कृति में अर्जित उच्च यश-लब्धियाँ अनुचित, अनधिकृत हैं। ऐसे विख्यात व्यक्ति भी गौरव-गरिमा के योग्य नहीं हैं, अपात्र हैं, अनधिकारी हैं।

इस तथ्य से एक 'विश्व इतिहास अकादमी' स्थापित करने की आवश्यकता स्पष्ट है। ऐसी अकादमी विश्व-इतिहास पर पुनः दृष्टिपात करे, विश्व वैदिक परम्परा में स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों का आयोजन करे, अन्वेषण-शोध आयोजित करे, और प्रशिक्षण देकर ऐसे वक्ताओं और प्रचारकों को तैयार कर दे जो अपने-अपने क्षेत्रों और अपनी-अपनी भाषाओं में मानवता की प्राचीन सामान्य वैदिक धरोहर, परम्परा के सम्बन्ध में सभाओं-श्रोताओं को सम्बोधित कर सकें।

वर्तमान शैक्षणिक असिद्धि, विफलता की घोर गम्भीरता को समझने के लिए विश्व-भर के सभी विद्वान् लोग कृपया अग्रलिखित समस्याओं के उपयुक्त उत्तर प्रस्तुत करने का प्रयास करें—

प्रतिदर्श (नमूना) परीक्षण-पत्र

विषय : मानव-इतिहास और संस्कृति

(1) यदि जीसस का जन्म 25 दिसम्बर को हुआ था, तो ईसवी सन् की गणना 1 जनवरी से क्यों प्रारम्भ की जाती है ?

(2) भारत में प्रवेश करनेवाले मुस्लिम आक्रमणकारी भिन्न-भिन्न राष्ट्रीयता वाले थे और फिर भी हिन्दू शासकों से उनकी लड़ाइयाँ हिन्दुओं और मुस्लिमों के मध्य हुई लड़ाइयाँ ही वर्णन की जाती हैं, जबकि इसके विपरीत हिन्दू शासकों की पुर्तगालवासियों, फ्रांसीसियों और ब्रिटिश लोगों से लड़ाइयाँ हिन्दुओं और ईसाइयों के मध्य हुई लड़ाइयाँ नहीं मानी/कही जाती हैं। क्यों है ऐसा ?

(3) अंगरेज़ी व्याकरण के अनुसार विशेषण संज्ञा से पहले आता है जैसे 'काला कौआ' अथवा 'प्रतिभावान बालक' में। तब 'आर्मस्ट्रांग' नाम का औचित्य क्या है जहाँ विशेषण 'स्ट्रांग' संज्ञा 'आर्म' के पीछे, बाद में आया है ?

(4) सन् 1948 ईसवी लगभग तक भारत में प्रायः सभी जगह रजवाड़े थे। (राजाओं-महाराजाओं की अपनी-अपनी, देशी रियासतें थीं) तो क्या कारण है कि केवल एक ही प्रान्त या प्रदेश 'राजस्थान' या 'राजपूताना' के नाम से विख्यात हैं ?

(5) यदि ईसाई मत और इस्लाम विजयोपरान्त या जीतों के माध्यमों से फैले, तो किस प्रकार बर्मा से जापान तक के देशों ने, बिना किसी प्रकार की विजयों अथवा आदेशित अनुरूप में प्रचारकों के बिना ही, बौद्ध मत अंगीकार कर लिया ?

(6) 'बुद्धिज़्म' (Buddhism, बौद्ध मत) और 'मोहम्मदनिज़्म' (Mohammadanism मुहम्मदी मत) के संदर्भ में, जीसस क्राइस्ट को अपना पैग़म्बर या ईश-पुत्र या ईश-दूत स्वीकार करनेवाले धर्म का नाम 'क्राइस्टिज़्म' (Christism) या 'जीसस-इज़्म' (Jesusism) होना चाहिए था। 'क्रिश्चियनिटी' (Christianity) नाम रखने का औचित्य क्या है ?

(7) जब पैग़म्बर मुहम्मद से पूर्व किसी भी अरबवासी ने 'मुहम्मद' नाम धारण नहीं किया, तब 'मुहम्मद' ने यह नाम कैसे प्राप्त किया? 'मुहम्मद' नाम का मूल क्या है?

(8) मुहम्मद के जन्मदिन, या इस्लाम मत की घोषणा या मक्का में पुनः प्रवेश की तारीख की बजाय मुस्लिम-युग का प्रारम्भ मुहम्मद की प्रारंभिक अपयश-पूर्ण, अशुभ, उल्लेखहीन मक्का से वापसी, हटने की तारीख से क्यों माना, गिना जाता है?

(9) 'मुसलमान' शब्द का मूलोद्गम कैसे है क्योंकि उक्त नाम (शब्द) 'कुरान' में तो आया नहीं है?

(10) मानवता के आदि, श्रीगणेश, प्रारंभ में उपलब्ध किए गए विशद दिव्य-ज्ञान के वाङ्मय हैं समस्त वेद-ग्रंथ। तब ऋषि व्यास ने महाभारत-युद्ध के अंत में उन ग्रंथों में हस्तक्षेप क्यों किया?

(11) जो लोग मानते हैं कि आर्य लोग किसी एक 'जाति' से सम्बंधित हैं—'आर्य' कोई जाति है—उक्त धारणावाले व्यक्तियों को चाहिए कि वे आर्यों के रहनेवाले क्षेत्र को सिद्ध करें, उनके द्वारा बोली गई भाषा को प्रमाणित करें, उनकी लिपि क्या थी—बताएँ और उनके निष्क्रमण के कारणों का उल्लेख स-प्रमाण करें।

(12) सारे विश्व में लगभग सभी शानदार, भव्य मुस्लिम ऐतिहासिक स्मारक मस्जिदें और मकबरे हैं। उन मृतकों के और मकबरे-निर्माताओं के राजमहल, शानदार महल आदि कहाँ हैं?

(13) इस्लामी वास्तुकला में विश्वास रखनेवाले व्यक्ति कृपया कम-से-कम एक दर्जन उत्कृष्ट, श्रेष्ठ मुस्लिम वास्तुकलात्मक ग्रंथों, उनके वास्तुकला-सम्बन्धी विद्यालयों/वर्गों और उनके माप-तोल की इकाइयों के नामों का उल्लेख करने का कष्ट करें।

(14) यदि गुम्बद (गुम्बज) और मीनार मुस्लिम वास्तुकला के नमूने हैं तो क्या कारण है कि मक्का-स्थित काबा उपासनालय में न कोई गुम्बद है, और न ही कोई मीनार?

(15) चूँकि हिन्दू-धर्म में सनातनियों, आर्य-समाजियों, बौद्धों, जैनियों और सिखों के विविध समूह समाविष्ट हैं, उनके सामान्य-सर्वमान्य हिन्दू नाम-चिह्न की पहचान बताएँ।

(16) जो लोग विश्वास करते हैं कि मिस्र (इजिप्ट) के पिरामिडों का निर्माण मकबरों के रूप में किया गया था, वे कृपया बताएँ कि उन्हीं मृतकों के तथा मात्र शवों के लिए विशाल पिरामिडों के निर्माण का आदेश देनेवाले महाभाग्यशालियों के तदनुरूप भव्य राजप्रासाद, महल कहाँ हैं ?

(17) सामान्य तौर पर साग्रह बताया जाता है कि तीसरी पीढ़ी के मुग़ल शासक अकबर ने 'दीन-ए-इलाही' नाम के एक नए धर्म की स्थापना की थी। यदि यह सत्य है तो कम-से-कम इसके कुछ सम-सामयिक अनुयायियों के नाम-धाम तो बताएँ, इसकी पूजा-पद्धति का उल्लेख करें, इसकी दार्शनिकता—इसका कर्मकाण्ड और कम-से-कम एक सार्वजनिक, लोक-देवालय तो इंगित करें।

(18) जब **'X'** (ऐक्स अंगरेज़ी अक्षर) क्राइस्ट नहीं है और 'मास' (Mas) का अर्थ जन्मदिन नहीं है, तब 'एक्स-मास' किस प्रकार क्राइस्ट के जन्मदिन का अर्थ-द्योतन करता है ?

(19) चूँकि जीसस ने परम-अध्यक्ष-पद, पोप के पद की स्थापना नहीं की थी, फिर भी किस प्रकार पोप को सर्वोच्च धार्मिक अधिकार प्राप्त हो गए और यह कब से हुआ ?

(20) प्रायः विश्वासपूर्वक कहा जाता है कि प्राचीन काल में एक वर्ष में केवल 10 (दस) मास ही होते थे। क्या इसका यह अर्थ है कि औसत मास में मात्र 36.5 दिन होते थे ?

मैंने 14 दिसम्बर, 1989 को ऐसे 20 प्रश्नों वाला एक पत्र अध्यक्ष, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, बहादुरशाह ज़फ़र मार्ग, नई दिल्ली-110002 को सम्बोधित किया था और अनुरोध किया था कि उक्त पत्र को भारत के सभी विश्वविद्यालय-प्रोफ़ेसरों में परिचालित कर दें तथा उनसे इन प्रश्नों के उत्तर भी मँगवाएँ।

अध्यक्ष महोदय ने मेरा पत्र प्राप्त कर लेने की स्वीकृति-सूचना देने का सामान्य शिष्टाचार भी नहीं निभाया, उक्त पत्र को विश्वविद्यालय-प्रोफ़ेसरों में परिचालित करने की दूरदर्शिता भी नहीं दिखाई, और उन प्रोफ़ेसरों की शैक्षणिक सक्षमता परखने के लिए उनके उत्तर मँगवाने की व्यावसायिक निर्भीकता व प्रामाणिकता भी प्रदर्शित नहीं की।

अतः मैं अब इस पुस्तक के माध्यम से उन्हीं प्रश्नों को एक बड़े पाठक-समुदाय के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ ताकि इसके पाठकों में से कम-से-कम कुछ को एक अवसर प्राप्त हो कि वे ईमानदारी से अपने ज्ञान की परख कर सकें और यह भलीभाँति अनुभव कर लें—हृदयंगम कर लें कि अखिल विश्व का इतिहास, मात्र शासकों और लड़ाइयों की पंजिका, नाम-सूची न रखकर एक विश्लेषणात्मक-पद्धति से पढ़ाया जाना आवश्यक है।

□□□